अक्षयक्षीर सागर में विष्णु



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

मेरे प्यारे! देखो, आत्माम् भूतम् ब्रह्मा लोकाम् अव्रतम देवाः ऐसा हमारे यहाँ वेद के आचार्यों ने वर्णन करते हुए कहा क्या विष्णु तो अक्षयक्षीर सागर में रहते हैं। और अक्षयक्षीर सागर में मानो नारद अपनी वीणा को ले करके वह ध्वनि करता है और अमृतम् मानो देखो, वह अव्रेतम गन्धर्वः गान गाने लगता है और लक्ष्मी चरणों में ओत प्रोत हो जाती है। वह अक्षयक्षीर सागर में मानो शेषनाग की शैय्या पर विद्यमान रहता है। मेरे प्यारे! जब महर्षि यास्काचार्य ने इस रहस्य का उद्घाटन किया तो उन्होंने कहा क्या असुतम देवत्वाम् विवेकाम् भूतम् ब्रह्मा मानो जब यह आत्मा विवेक में परणित होता है तो यह आत्मा का नाम विष्णु है, यह अक्षयक्षीर सागर में रहता है। जब यह मानव साधक बनता है, और साधना करने लगता है। तो साधना के मूल में जब प्रवेश करता है तो बेटा! देखो, अक्षयक्षीर सागर में पहुँच जाता है। अक्षयक्षीर सागर नाम कहते हैं जो ज्ञान का मार्ग है, अथवा ज्ञान का सागर है। जहाँ विवेक से कटिबद्ध होने वाला ज्ञान है, उसी में ओत प्रोत हो जाता है। तो मेरे पुत्रो! देखो, जब यह आत्माम् भूतम् विष्णु जब यह आत्मा मुनिवरो! देखो, विष्णु बन करके अक्षयक्षीर सागर में रहता है। तो उस समय नारद नाम का जो मन है यह भी अपनी चञ्चल रूपी वीणा को ले करके उनके समीप आ जाता है। हे प्रभु! मैं अपनी चञ्चलता को त्याग रहा हूँ, समिताम् भूतम् मैं आपके समीप आना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! गन्धर्वः नाम बुद्धि का है जो नाना प्रकार के भेदों वाली है। बुद्धि भी मानो अपना गान गाने लगती है और स्वर ध्वनि में गान गाती है कहीं जटा पाठ, घन पाठ, माला पाठ नाना प्रकार के गानों

से यह मानो अपने को सुशोभित करती रही है और अपने में अपने को जानने में तत्पर रही है। इसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो, यहाँ अमृतम् देवः लक्ष्मी चरणों में ओत प्रोत रहती है। लक्ष्मी नाम मेरे प्यारे! जो संसार का लुभाने वाली है। जो दृष्टिपात आने वाला जगत है इसमें नाना प्रकार का जो चमत्कार है नाना प्रकार से जो संसार को यह मोहने वाली है। यह भी मुनिवरो! देखो, अपने अपने में उसके चरणों में ओत प्रोत हो जाती है और मुनिवरों! शेषनाग की शैय्या पर विष्णु विद्यमान हैं। शेषनाग कहते हैं बेटा! जो पञ्च फणों वाला शेष नाग है। मेरे प्यारे! काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह वाला जो यह शेष नाग है इसके ऊपर आत्मा विश्राम करने लगता है और यह अक्षय क्षीर सागर में बेटा! विश्राम को प्राप्त हो जाता है। विचारवेत्ताओं ने कहा है कि उस समय यह आत्मा विवेकाम् भूतम् मानो देखो, यह ब्रह्माण्ड को अपने को देखो, ब्रह्माण्ड को अपने नीचे दबा करके उसमें ओत प्रोत हो जाता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह में यह सर्वत्र विभाजन क्रिया निहित है। जब यह इसमें ओत प्रोत हो जाता है, तो इसके ऊपर नीचे तो विचार विनिमय क्या मुनिवरो! देखो, जब यौगिक आत्मा विष्णु बन करके, विवेकी बन करके मेरे प्यारे! काम, क्रोध, मद, लोभ मोह वाले शेष नाग को नीचे दबा कर लेता है तो अमृतम् यह विष्णु बन जाता है। तो यहाँ आत्मा का नाम विष्णु माना गया है। आज मेरे प्यारे! मैं यौगिक प्रतिक्रियाओं में नहीं जाना चाहता हूँ केवल यह कि हमारे यहाँ यह जो आत्मा है इसको जानने की आवश्यकता है, क्योंकि आत्मा इस पञ्चमहाभूतों के लोक में विद्यमान रहती है। मुनिवरो! देखो, यह जो हमारा शरीर है, यह पञ्च महाभूत है और इसी में रहने वाला आत्मा है। जब मुनिवरों! देखो, आत्मा इस शरीर से निकल जाता है, सुत हो जाता है।

अक्षयक्षीर सागर



तो आओ मेरे प्यारे! आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कहता है हे विष्णु! तू अक्षयक्षीर सागर में रहता है वेद का मन्त्र कहता है कि यह विष्णु अक्षयक्षीर सागर में रहता है और अक्षयक्षीर सागर में मेरे प्यारे! वहां लक्ष्मी चरणों में ओत प्रोत है और गन्धर्व गान गा रहा है। नारद अपनी वीणा के लिए विणित हो रहा है और मुनिवरों! देखो, वह अक्षयक्षीर सागर में शेष नाग की शैय्या पर विद्यमान है। ऐसा मुझे बेटा! एक समय महर्षि श्वेतकेतु ने इसकी विवेचना प्रगट कराई। उन्होंने कहा कि वह अलंकार है, हमारे यहां अलंकार और साहित्य दो वस्तु मानी जाती हैं। परन्तु अलंकार और साहित्य क्योंकि साहित्य में यदि अलंकार को मिश्रित किया जाता है, तो मुनिवरों! देखो, साहित्य में दूषितपना आ जाता है और जब अलंकार में साहित्य को स्वीकार करते हैं जब अलंकार और साहित्य दोनों अपने में भ्रमित हो जाते हैं। तो विचार आता रहता है बेटा! अलंकार अपने में अलंकारित रहना चाहिए, उसको अलंकृत करना चाहिए। और विचारना चाहिए कि इसके स्वरूप को हमे विचारना है। तो मेरे प्यारे! देखो, एक समय आदि आचार्यों का बेटा! जैसे महर्षि कागभुषुण्ड जी इत्यादि अपने में यह विचार विनिमय कर रहे थे एक समय उन्होंने महर्षि लोमश मुनि से कहा क्या हे भगवन्! यह क्या है प्रभु! मानो अक्षयक्षीर सागर नाम ब्रह्मे वेदमन्त्र आता है विष्णु ग्रतम् देवत्वम् ब्रह्म ब्रव्हा वाचन्नमम् ब्रह्मे देवत्वाम् लक्षणाम् ब्रह्मे क्या हे प्रभु! यह वेदमन्त्र की विवेचना करने से ऐसा प्रतीत होता है क्या देखो, वह परमपिता परमात्मा शेष नाग की शैय्या पर रहता है और वह अक्षयक्षीर मानो देखो, विद्यमान है। तो मेरे प्यारे! देखो, उस समय महर्षि ने वर्णन करते हुए कहा कि यह अलंकार है, हमारे यहां वैदिक मन्त्रों में अलंकार आता है। अलंकृत इसीलिए किया जाता है किसी भी वाक को और किसी भी गाथा और विचार को जब हम सजातीय बनाते है तो उसमें एक

अलंकारिक वार्ता प्रारम्भिक हो जाती है और वह अलंकार से मानो देखो, सजातीय बन जाता है। जैसे हमारे यहां देखो, अहिल्या नाम रात्रि को कहा जाता है। अब रात्रि अहिल्या इसीलिए क्योंकि चन्द्रमा को गौतम कहते हैं। उसका प्रकाश और देखो, रात्रि का जो अन्धकार है, उनका दोनों का जब समन्वय हो जाता है तो मेरे पुत्रों! देखो, प्रकाश प्रकाश हो जाता है और प्रकाश अन्धकार को अपने में सम्मलित कर लेता है। अपने में मिलान कर लेता है। उसको सम्भोक्ता का एक नृत माना गया है, तो यह अलंकार अपने में बेटा! अलंकृत किया गया है।

तो आज मैं बेटा! इस सम्बन्ध में तुम्हें विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि हमारे यहां आत्मा का नाम विष्णु माना गया है। मैंने विष्णु की विवेचना करते हुए कई समय कहा है, क्या जब साधक योग साधना में परिणत होने लगता है तो बेटा! यह अलंकार मानो अपनी स्थली पर स्थित हो जाता है। तो वेदमन्त्र कहता विष्णाम् ब्रह्मा व्रतव प्रव्हा मेरे प्यारे! देखो, जब साधक अपने में साधना में परणित होता है, तो उस समय वह मुनिवरों! देखो, विष्णु के ऊपर अपना चित्रण करता है और विचार विनिमय करता है कि हम अमृतम् आत्माम् विष्णाम् ब्रह्मा। मेरे प्यारे! यह आत्मा विष्णु है, और विष्णु इसीलिए क्योंकि यह शरीर को चेतनित बनाए रहता है और जब मानो देखो, साधक इसको जब विष्णु वास्तव में बनाना चाहता है योगाभ्यास के द्वारा तो उस समय बेटा! साधना करता है और साधना में जब परिणत होता हुआ अपने को ले जाता है। तो बेटा! कहता है विष्णाम् ब्रह्मा विष्णा ब्रव्हा वसु यह मानो देखो, वसु कहलाता है। तो मुनिवरों! देखो, वेदमन्त्र में जब इस प्रकार का तो साधको ने इसकी विवेचना की है, उन्होंने कहा कि जब यह आत्मा अक्षयक्षीर सागर में मानो विष्णु अक्षयक्षीर सागर में रहता है। अक्षयक्षीर सागर नाम कहते है बेटा! ज्ञान रूपी जो विवेक होता है उसका नाम अक्षयक्षीर सागर है और जब आत्मा में ज्ञान और विवेक दोनों बलवती हो जाते हैं। तो बेटा! यह जो मन रूपी नारद है, जो अपनी चञ्चल रूपी वीणा को त्याग देता है और

अक्षयक्षीर सागर

चञ्चल रूपी वीणा को त्याग करके यह शान्त हो जाता है और यह गन्धर्व नाम बुद्धि का है और वुद्धि मुनिवरों! अपने में गान गाने लगती है जब विवेक उत्पन्न होता है तो बुद्धि स्थिर हो करके गान गाने लगती है, इसको क्योंकि हमारे यहां बुद्धि का नाम रेणुका भी बुद्धि को कहा जाता है मुनिवरों! जहां देवता इसे अपने में धारण करते हैं, तो यही बुद्धि यज्ञ के दस पात्रों में प्रवेश कर जाती है। तो आज मैं बेटा! शतपथ मानो देखो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विचारों में नही जाना चाहता हूं। केवल विचार विनिमय क्या ऋषि कहते हैं अमृतं ब्रह्मा विष्णु तो मेरे प्यारे यह अक्षयक्षीर सागर में रहता है। और मुनिवरों! देखो, जहां ब्रह्मा शेष नाग की शैय्या पर विद्यमान होते हैं शेष नाग कहते है जो पांचों फनों वाला शेष नाग हो जिसके पांच फन हो बेटा! काम, क्रोध, मद, लोभ यह साधक के लिए बड़े बाधक होते हैं और यह मुनिवरों! देखो, आवांछनीय होते हैं तो इनको साधक देखो, त्याग करके और इनको नीचे दबा करके मुनिवरों! देखो, उसमें विष्णु विद्यमान होता है और जो लक्ष्मी है जो संसार को लुभायमान करती है इसमें चञ्चलता की वृत्तियां होती हैं। तो बेटा! देखो, अपनी चञ्चलता को त्याग करके यह मानो ब्रह्मण व्रत्यम् देवत्वाम् यह देखो, चरणों मं ओत प्रोत हो जाती है।

साधना का कर्म

मेरे प्यारे! देखो, साधक जब अपने में साधना करता है तो साधना देखो, हमारे यहां ऐसा माना गया है सबसे प्रथम यह मूला-यह मुनिवरों! देखो, आत्मा और प्राण और मन का जब इनका सबका समन्वय होता है तो चित्त के मण्डल को लेकर के बेटा! सबसे प्रथम यह मानो देखो, यह मूलाधार में प्रवेश करता है। और मूलाधार से ही जब गमन करता है यह प्राणम् ब्रह्मा आत्माम् भूत प्व्हे तो बेटा यह नाभि चक्र से हृदय चक्र में और हृदय चक्र से बेटा! देखो, यह कण्ठ चक्र में, मानो देखो, गति करने लगता है नाभिचक्र में जा करके वायु पर अपना आक्रमण करता है, वायु को विजय कर लेता है और जब यह हृदयचक्र में जाता है, तो

समूह इन्द्रियों के ज्ञान विज्ञान को अपने में धारण कर लेता है तो मेरे प्यारे! जब कण्ठ चक्र में जाता है तो यह मुनिवरों! देखो, वीणाम् ब्रह्मा गान विद्या को अपने में धारण कर लेता है। और जब यह मुनिवरों! देखो, त्रिवेणी के स्थान में जाता है, जहां ईंगला, पिंगला, सुषुम्ना तीन देखो, तीन नदियों का मिलान होता है उसको त्रिवेणी कहते हैं। जहां तीन नदियों का या तीन नाड़ियों का जहां निर्माण होता है बेटा! ईंगला, पिंगला और सुषुम्ना जब यह सुषुम्ना में प्रवेश होता है तो मेरे प्यारे! देखो, यहां तीन प्रकार की जो धाराएं हैं उनको कृतिका कहते हैं और वह कृतिका में जब प्रवेश करता है तो बेटा! वहां प्रकाश आना प्रारम्भ हो जाता है और यह प्रकाशाम् भूतम् ब्रह्मा वर्णास्सुतम मानो देखो, जब वहां से गमन करके यह ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश कर जाता है और ब्रह्मरन्ध्र में जब प्रवेश करता है, तो यहां मानो देखो, नाना प्रकार की चक्रिका अपने में जब प्राण की धुकधुकी से जब गति करने लगती है। तो वह योगेश्वर बेटा! देखो, ब्रह्माण्ड को साक्षात्कार दृष्टिपात देखो, ब्रह्माण्ड को साक्षात्कार दृष्टिपात करने लगता है मानो देखो, लोक लोकान्तरों की जो माला बनी हुई है, उन मालाओं को यह दृष्टिपात करने लगता है। क्योंकि यह नाना प्रकार के तारा मण्डलों की माला बनी हुई है, नाना सूर्य की माला बनी हुई है नाना चन्द्रमाओं की माला बनी हुई है, सूर्यों की माला बनी हुई है। मेरे प्यारे! देखो, यह पृथ्वी की मालाओं में प्रवेश हो करके और वाहन में विद्यमान हो करके वह ब्रह्माण्ड के लोक लोकान्तरों में अपने को मानो देखो, प्रवेशिका में अवकृत करा देता है।

विचार आता है बेटा! देखो, यह ब्रह्मरन्ध्र से ही देखो, इसमें तीन प्रकार के मस्तिष्कों का भान होता है, देखो, रेणु मस्तिष्क और लघु मस्तिष्क और वृत्तिका मस्तिष्क यह तीन प्रकार के मानो देखो, जिसको इन्द्र, सर्वत्र इन्धा वाचन इन्द्र, त्रेतकेतु इन्द्र बेटा! देखो, यह सर्वत्र यह साधको का विषय है। जब साधक मुनिवरों! देखो, इनमें देखो, नाना प्रकार के मस्तिष्कों में अपने इस ब्रह्माण्ड और प्रभु की सृष्टि को निहारने लगता है, तो बेटा! वह केवल परमात्मा के ही विषय को ले करके उसी

के ऊपर विचार विनिमय करता है। जैसे यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके वह याग की ही चर्चा करता है। वह याग में ही मानो अपने को स्वीकार करता है और वह अग्नि को देवताओं का दूत स्वीकार करता हुआ मानो देखो, अग्नि का ध्यान करता रहता है। इसी प्रकार हो योगेश्वर होते हैं वह केवल देखो, अपनी साधना में प्रवेश हो करके नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों को देखो, गणना में लाते रहते हैं, उन्हीं का उन्हें अवधान होता रहता है। विचार आता है बेटा! जब मैं इस ब्रह्माण्ड की चर्चाएं करने लगता है तो अन्तरात्मा बेटा! गद गद हो जाता है और मैं यह कहा करता हूं कि प्रभु का ये कितना अमूल्य जगत है यह कैसा अनुपम ब्रह्माण्ड है, जिसके ऊपर मानव सृष्टि के प्रारम्भ से ही विचार विनिमय करता रहा है नाना प्रकार के विज्ञान में रत्त होता रहा है, कहीं हृदय को अगम्वय बना करके बेटा! इन्द्रियों के विषयों को जान करके इस ब्रह्माण्ड को अपने में मापने लगता है। तो मेरे प्यारे! देखो, मैं आज इस परमपिता परमात्मा का जो यह ब्रह्माण्ड रूपी अनुपम माला के सदृश्य हमे प्रायः यह जगत दृष्टिपात आता है, यह बड़ा अनुपम है और बड़ा अनुकरणीय है जिसके ऊपर हम सदैव अपने में विचार विनिमय करते रहे हैं।

विष्णु बनने का मार्ग

आओ मेरे प्यारे! देखो, मानव अपने वायुमण्डल को अपने को ऊंचा बनाने में परम्परागतों से बेटा! अपने में क्रियाकलाप करता रहा है यह विचारता रहा है कि मैं अपने में महान बनूं और पवित्र बनूं और विष्णु बनूं मानव देखो, विष्णु जब ही बनता है जब वह प्रकाश में वह वेदज्ञ बन जाता है। तो बेटा! जब यह आत्मा मानो देखो, यह पञ्च महा वर्णनम् पांच फनों वाले शेष नाग पर विद्यमान हो जाता है और वह शेष नाग क्या है? बेटा! मानो देखो, काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह यह पांच फनों वाला शेष नाग है इसको विजय करने वाला योगी होता है मेरे प्यारे! देखो, अति काम आता है, वह भी मानव की मृत्यु कर देता है। अति मानो देखो,

लोभ आता है वह भी मृत्यु में ले जाता है, अति क्रोध आता है वह भी मृत्यु में ले जाता है काम, क्रोध, लोभ, मोह और मोह में ममतम् ब्रह्मा देखो, यह भी मृत्यु है। अमृतम् अभिमम् ब्रव्हा ऋतम् मानो देखो, तृष्णा भी नही होनी चाहिए। मेरे पुत्रों! देखो, अमृतम् ब्रव्हा जब यह इस प्रकार नीचे दबा करके बेटा! उसके ऊपर विश्राम करता है, मानो देखो, वह योगी कहलाता है और यह जो लक्ष्मी है। जो संसार को लुभाने वाली है मानो देखो, कोई वितैष्णा में लगा हुआ है, और यह चाहता है कि मुझे वित्त ही वित्त प्राप्त हो जाए। तो बेटा! देखो, यह अमृतम् बन्धनम् ब्रव्हे वह अन्धकार में रत्त हो जाता है। परन्तु देखो, जब नीचे दबा कर लेता है इन तृष्णाओं को तो बेटा! देखो, यह लक्ष्मी उसके चरणों में ओत प्रोत हो जाती है लक्ष्मां भूतम् ब्रह्मा वर्णनम् ब्रव्हे उसके चरणों में ओत प्रोत हो जाती है लक्ष्मां भूतम् ब्रह्मा वर्णनम् ब्रव्हे ऋतम् देवत्वाम् लोकाः यह देवताओं की पुकार करने लगता है। तो मेरे पुत्रों! देखो, विचार विनिमय क्या वेद का मन्त्र कहता है क्या यह आत्मा विष्णु है और यह आत्मा विष्णु स्वरूप मैं जब यह वेदज्ञ बन जाता है मानो देखो, अपने में विजय करता हुआ, योग में प्रवेश करता हुआ, वेद के ज्ञान को जानने लगता है उसके मर्म को जानता है तो मेरे प्यारे! देखो, वह आत्माम् भूतम् ब्रह्मणा वह विष्णु बन करके बेटा! यह जो शरीर रूपी साम्राज्य है शरीर रूपी राष्ट्र है, इसके ऊपर यह विजेता बन जाता है मेरे पुत्रों! देखो, इसी विचार को ले करके आचार्यों ने यह कहा कि राजा का नाम भी विष्णु कहा जाता है, आत्मा का नाम विष्णु है। तो राजा का नाम भी विष्णु है जहां सूर्य का नाम विष्णु आता है, वहां नाना प्रकार की ऊर्ज्वा दे करके और मुनिवरों! देखो, इस संसार को तपायमान करता रहता है। उसके मूल में नाना प्रकार का खाद्यान्न और खनिज पदार्थ देखो, उसी के गर्भ में विद्यमान है। नाना प्रकार की किरणों से उनको भग कहा जाता है। भगम् ब्रह्मा भगम् प्रवाणां ब्रव्हे लोकाम् वह मेरे प्यारे! देखो, उसमें नाना प्रकार की किरणों के द्वारा संसार को प्रकाशमान बनाता रहता है, एक प्रकार नही दो नहीं अनन्य प्रकाशों

में वह रक्त हो जाता है।

अति वृष्टि



मानो देखो, एक समय बिना समय के वृष्टि हो गई। प्रजा में त्राहिमाम् त्राहिमाम् हो गई। ब्राह्मणजनों ने कहा कि हम किसको उपदेश दें, किसके द्वारा ज्ञान की वर्षा करें, क्योंकि यहाँ तो अनावृष्टि हो गई और वैश्यों ने कहा कि हमारी सर्वस्व सम्पत्ति समाप्त हो गई। क्षत्रियों ने कहा कि किसकी रक्षा करें और शूद्रों ने कहा कि हम किसकी सेवा करें, यहाँ तो सर्वस्व समाप्त हो गया। प्रजा में त्राहिमाम् त्राहिमाम् हो गई, तो प्रजा का समूह बना। वह प्रजापति के द्वार पर जा पहुंचे और कहा कि महाराज! हम आपके आसन को पवित्र करने नहीं आए हैं, हम तो अपनी कुछ पुकार लेकर आए हैं, कि हमारा सर्वस्व समाप्त हो गया है, विनाश को प्राप्त हो गए, हमारा जीवन किस प्रकार चलेगा। उन्होंने कहा कि महाराज! बिना समय के वृष्टि हो गई है, हमारी सर्वस्व सम्पत्ति नष्ट हो गई है। प्रजापति ने कहा कि कहो, यह वृष्टि कहाँ से हुई, उन्होंने कहा कि यह वृष्टि मेघों से आई है। अब प्रजापति ने मेघ मण्डलों को निमन्त्रित किया और सभा में नियुक्त किया गया और कहा कि अरे, मेघ मण्डलों! तुम तो बड़े स्वच्छ और पवित्र हो क्योंकि जल का रूप ही सतोगुणी होता है, यह मानव की नाना कामनाओं को भी शान्त कर देता है, यह तुमने क्या किया कि अनावृष्टि करके प्रजा का विनाश कर दिया।

प्रजापति से मेघ मण्डलों ने कहा कि भगवन! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। मेरे से तो महाराज इन्द्र ने कहा था। इन्द्र ने आज्ञा दी, मैंने वृष्टि कर दी। अब प्रजापति ने मेघों को तो शान्त कर दिया और निमन्त्रण देकर इन्द्र को सभा में नियुक्त किया गया और कहा कि अरे, इन्द्र! यह बिना समय के वृष्टि की इच्छा मेघ मण्डलों को क्यों प्रकट की। उन्होंने कहा कि भगवन! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, क्योंकि मुझसे तो मेरी पत्नी शचि ने कहा था। अब प्रजापति ने इन्द्र की पत्नी शचि को निमन्त्रण दिया और उनको सभा में लाया गया। सभा में प्रजापति ने जब यह प्रश्न किया कि हे शचि! तुम तो जगत की माता हो और जगत में भ्रमण करने वाली हो, सांत्वना बना देने वाली हो, क्या कारण है कि तुमने पति को वृष्टि की इच्छा प्रकट की। उन्होंने कहा इसमें भगवन! मेरा कोई दोष नहीं है। मेरे से तो समुद्रों ने कहा था।

अब प्रजापति ने समुद्रों को निमन्त्रण दिया और सभा में नियुक्त किया गया और उसके पश्चात प्रजापति

ने कहा कि अरे, समुद्रों! यह तुमने बिना समय के वृष्टि की इच्छा क्यों प्रकट की। उस समय समुद्रों ने कहा कि भगवन! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, मेरे से तो आदित्य ने कहा था।

मुनिवरों! देखो, अब प्रजापति ने आदित्य को निमन्त्रण दिया और आदित्य से कहा कि तुमने बिना समय के वृष्टि की इच्छा क्यों प्रकट की है। उन्होंने कहा कि भगवन! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। मेरे से तो पृथ्वी माता ने कहा था। अब प्रजापति ने पृथ्वी माता को निमन्त्रण दिया और सभा में लाया गया। प्रजापति ने कहा कि हे पृथ्वी! तुमने बिना समय के वृष्टि की इच्छा क्यों प्रकट की। तो पृथ्वी माता ने कहा हे भगवन! मैं क्या करूं? जब यह प्रजा मेरे ऊपर पाप कर्म करने लगती है और जब मैं पाप में सन जाती हूँ, तो उस समय मेरी इच्छा होती है, कि मैं जल में स्नान करूं। तो भगवन! मेरी जो वेदना है, मेरी जो पाप भरी पुकार है, आदित्य तक जाती है, आदित्य नाम सूर्य का है। सूर्य से भगवन! तेज का उत्थान होता है। तेज समुद्रों में जाता है और उसी तेज से जल का उत्थान होता है और उसी से मेघ मण्डल बनते हैं।

मुनिवरों! देखो, जलों का उत्थान समुद्रों से हुआ। उससे मेघ मण्डल बने। शचि नाम विद्युत का है और इन्द्र नाम वायु का है। इन तीनों का जब संघर्ष होता है तो धीमीधीमी वृष्टि होने लगती है। उसी वृष्टि के द्वारा जब कहीं प्रजा में पाप होते हैं, वहाँ अतिवृष्टि हो जाती है और कहीं अनावृष्टि हो जाती है। प्रायः यह होता है प्रजा के कर्मों के द्वारा। तो पृथ्वी माता ने कहा कि भगवन! जब मेघ मण्डलों से वृष्टि होती है, तो उसमें में स्नान कर लेती हूँ और प्रजा अपने लिए हुए पाप पुण्य कर्मों के फल भोग लेती है।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! आज हमें विचार विनियम यह करना है कि मानव ने यदि अपनी शान्ति के लिए प्रयत्न नहीं किया, मानव जो भी कर्म करता है उसे भोगना अनिवार्य है और भोगा ही जाएगा। आज हम वास्तव में अपने कर्तव्य का पालन करते हुए, अपनी मानवीयता की प्रतिभा को जानते हुए, इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें। हमें आत्मिक शान्ति को विचारना है, क्योंकि आत्मा में शान्ति होना बहुत अनिवार्य है। कल मेरे प्यारे महानन्द जी! जो अपनी कुछ वार्ता प्रकट करेंगे। इनका वाक्य भी बड़ा गम्भीर होता है। कटु तो होता है, परन्तु सत्यता से सना होता है। तो आज का हमारा वाक्य कहता चला जा रहा है, कि हम अपने जीवन को वास्तविक उन्नतशील बनाएं, पवित्र बनाएं, जिससे हम आत्मोन्नति प्राप्त करके परम शान्ति को प्राप्त करते रहें।

अलंकार का प्रयोग सजातीय बनाने के लिए



मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मणे देखो, हमारे वैदिक साहित्य में इन्द्र यहां राजा को तो कहते हैं और देखो, दधीचि भी ऋषि को कहा गया है। परन्तु यहां देखो, प्रकरण भिन्न हो जाता है। प्रकरण भिन्न हो करके इन्द्र नाम मेरे प्यारे! देखो, यहां सम्भव देखो, वायु का माना गया है वैदिक साहित्य में। राजा का नाम भी इन्द्र है और वायु का नाम भी इन्द्र है मेरे प्यारे! दधीचि नाम हमारे यहां देखो, ऋषि को कहा गया है। उस प्रकरण से भिन्न हो करके मानो देखो, यह अलंकार बन गया है। अलंकार होने से देखो, दधीचि नाम पर्वत को माना गया है। वहां से बेटा! देखो, धातु को ले करके उन्होंने मुनिवरों! वह अमृतं देखो, दधीचि से वज्र का निर्माण किया और वज्रों समं ब्रह्मा वजत प्रव्हा। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने उस वज्र मानो देखो, उसके गम्भीर वृत्तियां मानी जाती हैं जैसे पर्वतों में धातु पिपाद बना हुआ है वह उस मानो देखो, पर्वतों की अस्थियां मानी गई हैं। तो उसका वज्र वना और वज्र बन करके बेटा! देखो, वह ब्रह्मणे अलंकार अस्सुतं वह वज्रं ब्रह्मे देखो, वायु बन करके बेटा! देखो, वह ब्रह्मणे अलंकार अस्सुसतं वह वज्रम् ब्रह्मे देखो, वायु जब मेघ मण्डलों को बेटा! देखो, पर्वतों से दधीचि से जब यह अपना प्रहार करती है तो उसी समय बेटा! देखो, वह मेघ मण्डलों को छिन्न भिन्न करके बेटा! वृत्रासुर को नष्ट कर देती है तो विचार आता है बेटा! देखो, यह वाक वाक्याम् भूतम् ब्रह्मे इन्द्र के नाना प्रकार के पर्यायवाची माने गए हैं। परन्तु यहां एक केवल यह शङ्का उत्पन्न हुई कि दधीचि के द्वार पर इन्द्र का आगमन होना और उससे यह उच्चारण करना कि मुझे अस्थियां चाहिए। तो देखो, वह इन्द्र उनको उपाय वर्णन करते हैं क्या जाओ तुम देखो, यहां तुम प्रकरण से भिन्न हो रहे हो। इन्द्र जाओ तुम देखो, इन पर्वतों की अस्थियों को ले करके वज्र का निर्माण करो। देवताजन और दैत्यों का जब संग्राम होता है तो मानो देखो, उससे वज्र बनते हैं और वज्रों का ब्रह्मणे देखो, वज्रम ब्रहे कृतम् उसी से बेटा! देखो, इन्द्र ने उनको

उपाय उसके पश्चात उदगीत रूप में गाया।

परन्तु देखो, यहां यह भी कहा जाता है क्या देखो, इन्द्रों शमं ब्रह्मा दधीचि की अस्थियों को लाने के लिए देखो, कामधेनु गऊ उनके द्वारा थी। उस कामधेनु ने देखो, उसका जो चमड़ी विभाग था वह अपने में स्वर्ण करके उसकी दधीचि अस्थियां उसकी जो मानो अस्थियां थीं, रूप में बन करके और वह अवृत्त हो गईं। तो मेरे प्यारे! देखो, यह भी एक अलंकार है। हमारे यहां गो नाम बेटा! पृथ्वी को कहा जाता है गो नाम पृथ्वी का है मङ्गलम् देखो, दधीचि की जो अस्थियां हैं उसका धातु पिपाद है। बेटा! देखो, अलंकार और देखो, साहित्य दोनों भिन्न भिन्न होने चाहिए। जब एकोकीकरण हो जाता है तो साहित्य और साहित्य में और अमृति ब्रहे बेटा! देखो, अलंकार में दोनों में एकता आने से देखो, दोनों भ्रष्ट हो जाते हैं। न तो इतिहास रहता है और न मुनिवरों! देखो, यह अलंकार रहता है। तो इसीलिए अलंकार अलंकारों में रहना चाहिए और साहित्य साहित्य में इतिहास इतिहास में रहना चाहिए जिससे इतिहास का अपना अस्तित्व बना रहे। तो मेरे प्यारे! देखो, महात्मा दधीचि का इतिहास यहां तक है कि इन्द्र ने द्वेष में आ करके उनके कण्ठ का भाग दूरी कर दिया। वह रजोगुण, तमोगुण की अपने में देखो, ध्यानाम् ब्रह्मे वृतम् जो अभिमान की आभा ने देखो, उन्होंने नष्ट करना चाहा। मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार अपने में अपनेपन को विचारों और देखो, दधीचि का जो विज्ञान है वह बड़ा विशाल है दधीचि एक ऋषि हुए हैं और सुकेन वैद्य के गुरु कहलाते थे। उन्होंने भी यही शिक्षा का अध्ययन किया था। अश्विनी कुमारों ने भी इसी विद्या का अध्ययन किया था। औषध विज्ञान देखो, सूर्य की किरणों के साथ में गमन करता है। मैं आगे बेटा! शेष चर्चाएं तुम्हे कल प्रगट कर सकूंगा आज मुझे इतना समय आज्ञा नही दे रहा है।

आज का हमारा विचार विनिमय क्या है कि आज के विचारों का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और उसका जो अनन्तमयी भण्डार

है औषध विज्ञान का भण्डार है ब्रह्मज्ञान का भण्डार हे वह अनन्तमयी माना गया है। बेटा! उसके ऊपर विचार विनिमय करना चाहिए। आओ मेरे प्यारे! देखो, मैं विशेष चर्चा न प्रगट करता हुआ केवल तुम्हे इतिहास की चर्चाएं प्रगट कर रहा था। इतिहास में इतिहास के दूसरे रूप में बेटा! देखो, दधीचि भिन्न भिन्न प्रकार से मानो उसकी विवेचना की जाती है। इन्द्र नाम आत्मा का है, इन्द्र नाम परमात्मा का है और इन्द्र नाम बेटा! सूर्य को कहा जाता हैए जो द्यौ का स्वामी है। जो प्रत्येक किरण का स्वामी है। मेरे प्यारे! स्वामी होने से उसका नाम इन्द्र है। मानो देखो, इन्त्र नाम राजा का है जो राषट्र की व्यवस्था का निर्माण करता है और राजाओं के ऊपर जो राजा होता है उसका नाम इन्द्र है। वह देवताओं का धिराज कहलाता है और इन्द्र नाम बेटा! वायु का है जो मेघ मण्डलों से वृत्रासुरों से दधीचि का वज्र बना करके हिमालय से जब वायु अपना मिलान करती है तो मेघमण्डलों को भिन्न भिन्न कर करके उनकी वृष्टि करा देती है। उसी से बेटा! अन्न इत्यादि की उत्पति होती है। तो यह अलंकार मानो देखो, वही लोलुक्ति देखो, अलंकार कहा जाता है। इन अलंकारों में देखो, साहित्य में दोनों में भिन्नता आ जाती है।

तो विचार विनिमय यह बेटा! अलंकार केवल वार्ता को सजाने सजातीय बनाने के लिए होता है। इसीलिए मैंने इसको सजाया है। तो आज का विचार विनिमय क्या हम परमपिता परमात्मा के अनन्तमयी स्वरूप के ऊपर विचार विनिमय करें। वह परमात्मा भिन्न भिन्न प्रकार से मानो उसका विमोचन किया जाता है, गुणगान गाया जाता है। कल मुझे समय मिलेगा तो बेटा! इससे आगे की शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा जो इन्द्र और दधीचि का दोनों का संवाद प्रारम्भ होगा।

मेरे प्यारे! आज का विचार विनिमय केवल ये क्या हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते रहें, देव की महिमा का गान गाते रहें और अलंकार और साहित्य को अपने में विचार विनिमय लाते रहें। इन पर विचार करें और विचार करके मानो

अलंकार का प्रयोग सजातीय बनाने के लिए

देखो, उसके ऊपर अपने आचरण को धारयामि बनाए। यह है बेटा! अपना आज का वाक्। अब समय मिलेगा तो मैं तुम्हे शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगां।

अलंकार को अलंकार जानें



जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है और उसका ज्ञान और विज्ञान भी अनन्तमयी माना गया है प्रत्येक मानव उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान के ऊपर अन्वेषण करता रहा है परन्तु वह इतना अनन्तमयी है क्या मानव जब अन्वेषण करता करता दूरी चला जाता है, तो अन्तिम चरण में वह मौन हो जाता है और वह एक वाक कहता है यन्नं बृहि वासन नमः प्रव्हा अनन्तम पृहि व्रता वेद का वाक कहता है कि वह अनन्तमयी है और वह मानो देखो, दृष्टि में आने वाला नहीं, तो इसीलिए उस परमपिता परमात्मा का जो ज्ञान है, अथवा उसका जो अनन्तमयी विज्ञान है, वह इतना महान और पवित्रतम् कहलाता है, जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से बेटा! अपने में अनुष्ठान करता रहा है और उसके जानने के लिए वह जानता जानता भी मौन हो जाता है। तो इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा को अनन्तमयी स्वीकार करते हुए अनन्तमयी अपने में विचार विनिमय करते हुए, हम मौन हो जाते है। तो आओ मुनिवरों! आज में इस सम्बन्ध में विशेष विवेचना नहीं देने आया हूँ, आज का हमारा वेदमन्त्र हमें कुछ कह रहा है, और वेदमन्त्र कहता है मनों में तर्पयामि, क्या हे मानव! प्रणं ब्रह्मे हम मन से उस परमात्मा को जानना चाहते है। प्रमाणं ब्रव्हे द्वितीय मन्त्र का कहता है क्या हम मनों में पाना चाहते है परन्तु पाया नहीं जाता, वह कहता है चक्षुम्मे पाहि, वह चक्षुओं से भी हम उसे नहीं जान सकते, वेदमन्त्र कहता है, श्रोत्रम्मे पाहि, मानो हम श्रोत्रों से भी उसको नहीं जान पाते वह कह रहा है घ्राणम्मे तर्पयामि हम घ्राण इन्द्रियों से उसे जानना चाहते है। परन्तु उसे नहीं जाना जाता बेटा! देखो, वह कहता है अश्वतं वाणं ब्रह्मे वाणी से उसको जानना चाहते है। तो नहीं जाना जाता मेरे प्यारे!

देखो, उसे कैसे जाना जाता है। जब वेदमन्त्र यह कहता है? क्या उसको किसी इन्द्रिय से नहीं जाना जाता, तो वेदमन्त्र कहता है शन्नम् ब्रव्हे कृतं वाचन नमं ब्रह्मा देवों अस्सुतं क्या उसको जो मानव पाना चाहता है, वह अपने को शान्त करने से प्राप्त होता है। जब मेरे प्यारे! इन्द्रियों का विषय जान करके श्रोत्रों का विषय जानने के पश्चात वहीं श्रोत्रों दिशाएं बन जाती है, वाणी को जाना जाता है। तो वाणी शब्दायमान, अन्तरिक्ष का रूप बन जाता है। मेरे प्यारे! घ्राणम्मे पाहि, यह घ्राण से जो पाना चाहते है उसे पाने के पश्चात वही घ्राणी मानो पृथ्वी का रूप अपने में धारण कर लेती है। मेरे पुत्रों! देखो, जो चक्षु से जाना जाता है वह चक्षु जानने के पश्चात का अग्नि का रूप बन गएं है। मेरे पुत्रों! देखो, जो त्वचा से जानना चाहता है वह वायु बन गया, तो पञ्च महाभूतों की क्रिया पञ्च महाभूत के रूप में प्रायः जब परणित हो जाती है तो हम कैसे जाने वह तो व्यापक रूप बन गया है, अपने अपने तथ्यों में वह मानो परणित हो गया उसी में रत्त हो गया है। तो हम परमात्मा को मानो कैसे जाने? तो बेटा! वेदमन्त्र कहता है आत्माम्मे तर्पम ब्रह्मे आत्मां देवा, क्या आत्मा को जानना चाहिए, जो हमारे अन्तर्हृदयों में विद्यमान है और जो आत्मा को जानता है, परन्तु देखो, आत्मां भूतं वह स्वयं आत्मा के रूप को धारण करता हुआ, ब्रह्म ज्ञान सुतं वह ब्रह्म बन करके वेटा! परब्रह्म के निकट जा सकता है जैसे माता का पुत्र क्षुधा लग रही है। परन्तु माता का पुत्र क्षुधा में व्याकुल हो रहा है, व्याकुल होता हुआ क्योंकि वह माता के निकटतम रहता है तो माता बेटा! उस समय उस बाल्य को अपनी तन से आलिंगन कर लेती है और वह उसकी क्षुधा को लोरियों के द्वारा पान करा देती है, उसके उदर की पूर्ति हो जाती है, वह तृप्त हो गया है। तो इसी प्रकार मानव भी अपने में तृप्त होता रहता है यदि वह आत्मा को जान लेता है कि हमारे शरीर में कोई चेतना है, और हम उस चेतना से कटिबद्ध है जैसे मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में, वैदिक साहित्य में दो प्रकार की प्रतिभा मानी जाती है एक अलंकारिक है एक साहित्यिक चर्चाएं होती है।

बेटा देखो, साहित्यिक वह चर्चा होती है जैसे राजा हुआ, परन्तु राजा का, राजा के जो क्रियाक्लाप है, राजा की जो मानो मन्त्री गणों के जो क्रियाकलाप हैं, राजा की जो मानो मन्त्री गणों के जो क्रियाकलाप है वे सर्वत्र मानो साहित्यिक इतिहास के रूप में परणित हो जाता है, और एक अलंकार होता है अलंकार उसे कहते है जिस अलंकार में मानो प्रकृति की पुट लगी रहती है और प्रकृति की पुट लगने से मानो देखो, एक अलंकार बन गया है और अलंकार को जब हम साहित्य में, इतिहास, साहित्य में परणित कर देते है तो न तो साहित्य भी दूषित है और देखो, वह अलंकार भी दूषित हो जाता है। दोनों के दूषित होने पर मानो देखो, साहित्य की प्रतिभा समाप्त और अलंकार की मानो देखो, अपने में उसकी प्रतिभा भी नष्ट हो जाती है। जैसे मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ साहित्य में न ले करके उसी वाक को हम अपने में मानो अलंकार में लेते है जैसे मुझे एक समय मेरे प्यारे महानन्द

जी ने मुझे एक वाक वर्णन कराया था कि अगस्त मुनि की चर्चा मुझे स्मरण कराई कि देखो, अलंकारम् भूतं ब्रहे मानो देखो, अगस्त मुनि ने अपने में समुद्र को पान कर लिया था, और समुद्र को पान करके उसको खारी बना करके मानो उपस्थ इन्द्रिय के द्वारा त्याग दिया सर्वत्र समुद्र को पान करके और उसे खारी बना के जब त्याग दिया जाता है तो मानो देखो, इतिहास की चर्चा नहीं, यह अलंकारिक वाक बन गया है। परन्तु देखो, जैसे हमारे यहाँ कहा जाता है कि उसी समय जब वह खारी बना करके और वह क्यों बनाया? क्या टटीरी के दोनों पुत्र, समुद्र ने अपनी तरंगों में तरंगित कर लिए थे तो उस समय मानो देखो, वह बड़ी व्याकुल हो रही थी, और व्याकुल होने से उन्होंने देखो, समुद्र का पान कर लिया और उनके दोनों पुत्रों! की रक्षा हो गई तो यह मानो एक अलंकार है यह इतिहास ये साहित्य नहीं हो सकता।

तो विचार आता है बेटा! देखो, अमृतं ब्रह्मा सर्वश समुद्र को पान करना चाहे वह मानो जगत रूपी समुद्र हो, चाहे वह मानो जलाशय का समुद्र हो दोनों का पान करना मानो देखो, अलंकार में सिद्ध होगा, यह इतिहास में सिद्ध नहीं हो सकेगा तो इसीलिए देखो, साहित्य और इतिहास मानो देखो, अपने में अलंकारों में, दोनो मानो देखो, एक दूसरे के सत्यतव को धारण करते रहे है परन्तु जब दोनों का समन्वय कर लिया जाएगा तो दोनों को समन्वय करते हुए दोनों की प्रतिभा नष्ट हो जाएगी क्योंकि अलंकार को यदि हम इतिहास में परणित कर देते है, तो इतिहास भी इतिहास नष्ट हो जाता है। इतिहास में एक अपवाद बन जाता है और यदि इतिहास को हम अलंकार में परणित करते है तो अलंकार भी एक अपवाद में परणित हो जाता है। तो इसीलिए हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में यह आता रहा है, विचारकों के मध्य से यह आता रहा है जब अलंकार को, उन्होंने वेद मन्त्रों से गठित किया और वेदमन्त्र में एक मन्त्र आता है अमृतं अगस्तां भूकर्कृति देवा अन्वेब्रहा रक्षां भूतं ब्रह्मे अमृति देवत्वाम् मनाः वाचं मनोगातम मनि वृण सुति देवा बेटा! यह जब वेदमन्त्र जब स्मरण आता है और वेदमन्त्र ये कहता है क्या अगस्तां भूते मानो देखो, हमारे यहाँ अगस्त नाम आत्मा का वाची कहलाया गया है हम जब अलंकारों में जाते है तो अगस्त मानो देखो, आत्मा का वाची है आत्मा का वाची होने से उसी आत्मा अमृतम क्योंकि आत्मा को अगस्त कहा जाता है परन्तु विवेकाम् भूते ब्रह्मण वेद का वाक कहता है कि विवेक का नाम अगस्त कहा जाता है विवेकां भूति ब्रहणा मानो उस समय आत्मा का नाम टटीरी बन जाएगा और जब टटीरी ग्राहा टटे वाहा अन्य तत्त्वन्य ब्रहे जानना होगा तो मुनिवरों! देखो, आत्मा के दो पुत्र है और वह कुछ जिससे मानो देखो, आत्मा का जगत बनता है, वह दोनों पुत्र है मुनिवरों! देखो, इसको मन और बुद्धि कहते है मन, बुद्धि जब इस संसार रूपी जगत में मानो जब वह भ्रमित हो जाते है मेरे प्यारे! देखो, मन भी भ्रमित है, और बुद्ध भी भ्रमित हो रही है, तो मानो देखो, उसको संसार रूपी समुद्र में दोनों भ्रमित हो गएं दोनों की मानो रक्षा कैसे हो?

तो मुनिवरों! देखो, रक्षा का प्रसंग आता है तो उस समय कौन रक्षा करें? तो मुनिवरों! उस समय विवेक जागरूक होता है, जब मुनिवरों! देखो, विवेक जागरूक हो जाता है तो उस समय टटीरी मानो देखो, विवेक रूपी अमृतां मानो देखो, समुद्र को शान्त करना चाहता है उस समय आत्मां भूतं ब्रह्मे मेरे प्यारे! देखो, विवेक रूपी जो अगस्तं ब्रहे अगस्त उत्पन्न होता है और अगस्त मुनिवरों! देखो, विवेक से ही संसार को खारी बना दिया जाता है, मेरे प्यारे! उपस्थ इन्द्रिय के द्वारा त्यागने का जो विचार आता है बेटा! देखो, वह विवेक से आता है वह जितने काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह इत्यादि जो ये इन तरंगों का जो समुद्रों से तरंगे उत्पन्न हो रही है, प्रकृति से, इनके जब वह अपने में धारण कर लेता है, तो धारण करने से मुनिवरों! देखो, विवेक युक्त बन करके अमृतं देखो, यह संसार न होने के तुल्य बन गया। कैसे बन जाता है? जैसे हमारी इन्द्रियां मानो देखो, इन्द्रियों के ऊपर जब पाना चाहते है, तो वही रूप बन गई, जिससे वह इन्द्रियों का जन्म हुआ था। जैसे नेत्रों का जन्म अग्नि से हुआ है, श्रोत्रों का जन्म दिशाओं से हुआ है, शब्द का जन्म अन्तरिक्ष से हुआ है, और मुनिवरों! त्वचा का जन्म देखो, वायु से हुआ है, इसी प्रकार रसना का जो जन्म है, वह जल से हुआ है चन्द्रमा से और जल से समन्वय रहता है। इसी प्रकार मेरे पुत्रों! देखो, अमृतं ब्रह्मा यह अपने ही, जब इनको जाना गया तो अपने रूप में परणित हो गये। इनका अपना कोई गोलक नहीं रहा है, केवल गोलकने में ही बने रह गएं है, परन्तु इनका जो स्वरूप है कोई स्वतः अग्नि बन गया, कोई दिशा बन गया, कोई आपो बन गया, कोई अन्तरिक्ष बन गया, अमृतं मेरे प्यारे! अपने रूप में प्रवेश कर गया, तो जब यह अपने इनको जान करके, इसी प्रकार काम को जानने का प्रयास किया गया तो काम मुनिवरों! देखो, जगत में परणित हो गया उसका रूप मानो देखो, कामं बृहि कमीक्ष्या बन गया। तो मेरे प्यारे! यदि हम मोह को जानना चाहे तो मोह मुनिवरों! देखो, जब आत्मा से विवेक से मोह हो जाता है तो मोह भी एक विवेक बन गया इसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो, लोक का हम अनुष्ठान करते है तो वह अहङ्कार के रूप में परणित हो गया है और वही अहङ्कार से मुनिवरों! देखो, संसार के पिण्ड बनते है और पिण्ड को विकृत करने के पश्चात बेटा! देखो, वहीं अणु और परमाणु के रूप में परणित हो गया मेरे प्यारे! देखो, यदि हम रसना के जब आपो में प्रवेश करते हैं, वही आपो मुनिवरों! देखो, प्राण रक्षक बन गया है, और सीमा में वही प्राणों का रक्षक है, और वहीं मुनिवरों! देखो, अग्नि में वही वासना बन करके, हमारे जीवन का विनाश होने लगता है। तो बेटा! देखो, अपने अपने स्वरूप में, जब प्रत्येक स्वरूप अपने स्वरूप में प्रवेश हो गया है, तो मेरे प्यारे! देखो, अपना कहाँ ब्रह्मणे ब्रहा कृतं तो बेटा! देखो, यह विवेक से मुनिवरों! देखो, अगस्त बन करके और विवेक उत्पन्न हो करके अगस्त मेरे प्यारे! संसार को निगलता चला गया और संसार में जो आत्मा और मन भ्रमित आत्मा और देखो, बुद्धि दोनों पुत्र भ्रमित हो गएं थे। उनका भ्रम शान्त हो गया, तो मेरे प्यारे! देखो, अपने

स्वरूप में प्रवेश हो करके मेरे पुत्रों! देखो, केवल एक अलंकार रह गया, इसको हम आध्यात्मिकवाद में जब ले जाते हैं, तो आध्यात्मिकता की प्रतिभा में प्रतिष्ठित हो जाता है।

तो आओ मेरे प्यारे! में इन वाक्यों के ऊपर विशेष चर्चा प्रगट करना भी चाहता हूँ, केवल विचार विनिमय यह क्या हमारे अपने ऊर्ध्वा स्वरूप के ऊपर चिन्तन करना चाहिए और मनन करते हुए चलोगे, तो जगत से तुम पार हो जाओगे, इस जगत में अपने स्वरूप को जानने से, अपनी इन्द्रियों के स्वरूप को जान करके मानव सागर से पार होने का प्रयास करता है। मेरे प्यारे! देखो, मृत्युञ्जय बन जाता है, जब मृत्यु को जान लिया जाता है, क्या यह मृत्यु क्या है तो बेटा! देखो, वह मृत्युञ्जय बन जाता है। मृत्यु को जब तक जानते नहीं है, जब तक मानो हम उसी में भ्रमित रहते है मुनिवरों! देखो, मृत्यु क्या है?विचारने से प्रतीत होता है क्या, मृत्यु अपने में कोई भी वस्तु नहीं है मृत्यु केवल अज्ञान और न जानने का नाम मृत्यु है और जब जान लिया जाता है तो बेटा! देखो, मृत्यु का स्वरूप ही मानो बना रहता है न जान करके बना रहता है और जानने से मानो देखो, वही मृत्यु यमराज बन गया और वही यमराज मेरे प्यारे! देखो, प्राण के रूप में प्रवेश कर गया और वहीं प्राण मुनिवरों! देखो, आयु के देने वाला बन गया है बेटा! जब मैं इन वाक्यों के ऊपर विचार विनिमय करता हूँ, तो प्रायः देखो, यह संसार एक अलंकार के रूप में दृष्टिपात आने लगता है। मैं यह कहा करता हूँ कि संसार में अलंकार को भिन्नता दी जाएं और देखो, इतिहास को भिन्नता दी जाएं, यदि दोनों भिन्न भिन्न रहेंगे तो मूर्ध्वा स्वरूप को जान सकेंगे और यदि दोनों को नहीं दे सकेंगे हम तो मुनिवरों! देखो, अप्रतम वह दोनों भ्रमित हो जाएंगे। जैसे मेरे प्यारे! देखो, मुझे महानन्द जी ने एक समय मुझे वर्णन कराया कि अहिल्या के सम्बन्ध में एक चर्चा आई और अहिल्या का जो शब्द है, वह अलंकारिक माना गया है। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में, जब अहिल्या के ऊपर विचार विनिमय होता है तो अहिल्या नाम बेटा! रात्रि को कहा गया है, अहिल्या नाम पृथ्वी को कहा गया है, अहिल्या नाम बुद्धि को भी कहा जाता है, तो अहिल्या के बहुत से पर्यायवाची शब्द बनते है। मेरे पुत्रों! देखो, एक अलंकार आया, अमृतम देखो, देवात्म ब्रह्मे वह देवता अपने में प्रार्थी बन गये, और देवताओं ने जब यह प्रार्थना की कि अन्धकार कैसे समाप्त होगा हम देवतव में जाना चाहते है, तो यहाँ इन्द्र भी मानो एक अलंकारिक भाषा में इन्द्रां कृतां ब्रहे देखो, इन्द्र भी भगो वाला कहा जाता है।

तो विचार आता है मेरे प्यारे! देखो, गो अमृतवृहि असुताम जब अहिल्या को मुनिवरों! देखो, इन्द्र ने छला इन्द्र ने अहिल्या को छल लिया और चन्द्रमा मानो द्वारपाल बन गया, मेरे प्यारे! गौतम उसका स्वामी है, गौतम रात्रि का स्वामी है, क्योंकि हमारे यहाँ जो भी अन्धकार का स्वामी है, उसका नाम या तो ज्ञान हो सकता है, या भौतिक रूप में मानो देखो, चन्द्रमा हो सकता है। तो दोनों क्योंकि रात्रि को, रात्रि के श्रृङ्गार को कौन भोगता है भोगतव्य करने वाला बेटा! चन्द्रमा है और वह चन्द्रमा

हमारे यहाँ चन्द्रमा को गौतम के रूप में वर्णित किया गया है, जो गो का स्वामी है, गो नाम रात्रि का और जो रात्रि को मुनिवरों! अपने में धारण करने वाला है, वही मानो देखो, चन्द्रमा के रूप में परणित किया गया है, विचार आता है बेटा! इन्द्र ने जब अहिल्या को छला, अब किस समय तक मानो देखो, गौतम उस भोगतव्य को प्राप्त करता रहता, उसी समय मानो देखो, रात्रि का अन्तिम चरण आया, तो देखो, चन्द्रमा अमृतम् बन गया और मुनिवरों! देखो, वह इन्द्र बन करके वह रात्रि को उन्होंने अपने में धारण कर लिया, जब रात्रि को धारण, रात्रि का भोग कर लिया, उसको छल लिया, मेरे पुत्रों! देखो, वह सहस्रों भगों वाला इन्द्र बन गया बेटा! सहस्र भग नाम हमारे यहाँ भगों के कई प्रकार के पर्यायवाची माने गएं है, भग मानो देखो, चन्द्रमा की कान्तियों को भी भग कहा जाता है जो गति करती है जो मानो देखो, गतिवानं ब्रह्मा जो शक्ति के अनुसार जा करके सीमित हो जाता है, इसी प्रकार सूर्य को हमारे यहाँ इन्द्र कहा गया है इसकी जितनी किरणें है वह ऊर्ज्वा दे करके गमन करती है, और जितनी उसकी सत्ता होती है शक्ति है जहाँ तक वह जाती है परन्तु वही तक अपनी रश्मिओं का प्रसार करती चली जाती है प्रकाश करती चली जाती है। हमारे यहाँ देखो, उनका नाम भग कहा गया तो देखो, भगां भूतं प्रव्हे लोकां मेरे प्यारे! देखो, अमृतं ब्रीहि वह कान्तियों का और देखो, ज्योतियो का नाम भग कहा जाता है। इसीलिए मुनिवरों! देखो, वह शक्तिशाली है, तो इन्द्र को इन्द्र सहस्र भगों वाला बन करके मेरे पुत्र! देखो, यह प्रकाशमान बना दिया रात्रि को अपने गर्भ में धारण कर लिया उन भगो में परणित करते हुए मानो उसे अपनाने का प्रयास किया।

तो मेरे प्यारे! देखो, अहिल्या नाम हमारे यहाँ देखो, रात्रि का आता है, जहाँ प्रकरण आता है, यहाँ अहिल्या नाम मेरे प्यारे! प्यारे देखो, वह पृथ्वी को भी कहा गया है हमारे यहाँ देखो, जब पृथ्वी को अहिल्या कहा जाता है। तो वज्र के तुल्य, जो अहिल्या का वास होता हो, उसी अहिल्या में मंगलं ब्रह्मे वर्णसुतां तो मेरे प्यारे! देखो, वह अहिल्या जब वज्र की थी, तो वज्र की होने में मुनिवरों! देखो, वह पत्थरं ब्रहा कृति देवां मुखाम भूतम ब्रह्मे मेरे प्यारे देखो, अहिल्या अमृतम पत्थर के तुल्य पड़ी हुई है मानो देखो, अहिल्या का उद्धार करने वाला मेरे प्यारे! कौन है कृषक है उस भूमि को अपने मानो देखो, उसमें अपना पुरुषार्थ करता हुआ, गऊ के बछड़ों की बलि देता हुआ मुनिवरों! देखो, पृथ्वी को सुयोग्य बनाता है, और सुयोग्य बनाकर उसमें अन्न की स्थापना करता है, नाना प्रकार के खाद्यानों का उत्पन्न करने वाला है, तो उस समय बेटा! देखो, इन्द्र नाम कृषक का है, अहिल्या नाम रात्रि का है, और चन्द्रमा मुनिवरों! देखो, उसमें अमृत देता है और आपो मुनिवरों! देखो, वह सूर्य की किरण जब टेढ़ी होती है तो मेघ मण्डलों का जन्म होता है उससे वृष्टि होती है वह इन्द्र मानो देखो, अपनी नाना प्रकार की अपनी तीखी किरणों के द्वारा वृष्टि कर देता है और वृष्टि करता हुआ मुनिवरों! देखो, वह कृषक अपने में प्रसन्न हो जाता है।

तो विचार विनिमय क्या बेटा! मैं बहुत गम्भीर क्षेत्रों में तुम्हें ले गया हूँ, विचार विनिमय केवल यह कि हमारे यहाँ अलंकार अलंकार ही बने रहे, बुद्धिमानो का कर्तव्य है कि अलंकार को अलंकार में लाए और देखो, इतिहास को इतिहास में परणित किया जाएं उससे मानो देखो, अन्धकार की उत्पति हो जाती है। मेरे प्यारे! देखो, समाज भ्रमित हो जाता है, प्रजा में नाना प्रकार की कृतियाँ उत्पन्न हो जाती है। मेरे पुत्रों! देखो, मुझे एक समय मेरे प्यारे महानन्द जी ने वर्णन कराया, क्या राम जब वन को जा रहे थे, राम जब वन को जा रहे थे विश्वामित्र के साथ, मानो देखो, उन्होंने अहिल्या के पद से स्पर्श किया और वह वह वज्र मानो देखो, स्वतः अहिल्या बन गयी। ऐसा मुझे वर्णन कराया परन्तु देखो, ऐसा प्रायः नहीं है वह ऐसा है कि देखो, निषाद के राज में यह अहिल्या जैसी मानो पृथ्वी पड़ी हुई थी मानो वज्र के तुल्य उन्होंने इसे निषाद राज से कहा हे निषाद! तुम्हारे राष्ट्र में यह अहिल्या इसी प्रकार है, परन्तु इसका उद्धार करो तो उन्होंने देखो, कृषकों के द्वारा उस भूमि को शुद्ध बनाया और शुद्ध बना करके मुनिवरों! देखो, वह स्वतः मानो उसमें अन्न उत्पन्न होने लगा वह सुयोग्यता में उसका सदुपयोग होने लगा तो मुनिवरों! देखो, उस पृथ्वी का नाम अहिल्या बन गया राम ने केवल इतना क्योंकि राम इस पृथ्वी के विज्ञान को जानते थे क्या इसमें कितनी दूरी पर कौन सा खनिज है, कौन सा खाद्यान्न है इस प्रकार के परमाणुओं को बेटा! वह सुगन्धि के द्वारा रज की सुगन्धि के द्वारा ही मानो उसकी जानकारी कराते रहते थे।

तो मुझे स्मरण आता रहता है उनका जीवन मानो देखो, इस प्रकार का जीवन था जिस जीवन की हम तुलना करते रहते है विज्ञान में जीवन रहता था और विज्ञान में मानो देखो, परणित होते हुए उन्होंने बेटा! देखो, विज्ञान के माध्यम से एक यन्त्र का निर्माण किया था जिस यन्त्र का नाम अहिल्या कृतिभा यन्त्र कहलाता था जो बेटा! देखो, पृथ्वी के दस दस योजन के मुनिवरों! देखो, खाद्य पदार्थों और खनिज को जान लिया जाता था वह प्रायः उन्हें दृष्टिपात आती थी तो मुनिवरों! देखो, इस प्रकार देखो, उनका विज्ञान अपने में बड़ा मार्मिक रहता तो विचार आता रहता है बेटा! यदि हम अहिल्या को इस प्रकार का अलंकार से जान करके यदि उसको साहित्य में लिया जाता है तो साहित्य बेटा! उससे दूषित हो जाता है और इतिहास में त्रुटियाँ आ जाती है। तो इसीलिए साहित्य और इतिहास मानो दोनों भिन्न भिन्न होने चाहिए। तो विचार विनिमय क्या, मेरे प्यारे! देखो, मुझे बहुत सा विचार स्मरण आता रहता है हमारे ऋषि मुनियों की, जो विचार धारा एक महानता में रही है वह बड़ी महावृत्तियों में रत्त होती रही है। तो विचार विनिमय क्या बेटा! देखो, परमात्मा का जो ज्ञान है, अथवा विज्ञान है, वह बड़ा अनन्तमयी माना गया है, उसकी अनन्तता मानो देखो, प्रत्येक वेदमन्त्र हमें दर्शाता रहता है, और विचार अपने में दर्शायमान करता रहता है। मेरे पुत्रों! देखो, जब एक एक शब्द पर हम विचार विनिमय करते है, तो बेटा! यदि हम इन्द्रियों के शब्दों को ग्रहण करने लगते हैं,

केवल श्रोत्र इन्द्रियों में जाते है, तो श्रोत्र इन्द्रिया बेटा! देखो, एक मानव की शब्दावलियों को वह अपने में ध्वनिवान होता रहता है, यदि वही ध्वनि और सूक्ष्मतता में जाते है तो रात्रि छाई हुई है अहिल्या में अन्धकार है परन्तु देखो, जब वह उन देखो, ध्वनि को श्रवण करता रहता है, जो ध्वनि हो रही है वहाँ परमाणु अपने में संघर्ष कर रहे है, बेटा! जो शब्द है जो प्रत्येक मानव के शब्द अन्तरिक्ष में रमण करते है, वायु मण्डल में प्रवेश करते है, बेटा! उनका संघर्ष होता है, उन ध्वनियों की श्रवण करते रहते है परन्तु और गम्भीरता में जाओगे तो मेरे प्यारे! देखो, वह अप्रताम जो मुनिवरों! देखो, परमाणुओं का संघर्ष हो रहा है जिससे संसार की रचना होती है तीन प्रकार के परमाणु है बेटा! जिन परमाणुओं का अमृतम मानो तेजोमयी, तरलतव और गुरूतव ये तीन प्रकार के परमाणुओं का जब संघर्ष होता रहता है, तो बेटा! देखो, साधक अपने में उन्हें ग्रहण करता है और श्रोत्र इन्द्रियों में जब वह संघर्ष आता है। तो बेटा! उसको आगे चल करके उसका जब अपने में अनुभव करता है तो बेटा! मस्तिष्क में एक स्वर ध्वनि होती रहती है, उसका स्वर संगम होता रहता है, मानो देखो, बाह्य जगत के परमाणुओं का संघर्ष आन्तरिक जगत में जब प्रवेश होता है। तो योगी जन उसको अनहाद कहते है है बेटा! वह अनहाद जो स्वर संगम है, वह अपने में बड़ा पवित्रतव में रमण करता रहा। तो विचार विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, साधक अपनी साधना में परणित होता हुआ और उसको अनहाद के रूप में प्रायः वह दृष्टिपात करता रहता है। मेरे पुत्रों! देखो, साधनावादी जो प्राणी होते हैं, वह भी मानो देखो, अपने शब्दों को अन्तरिक्ष में ले जाते है, कहीं द्यौ में ले जाते है कहीं मानो देखो, संघर्षवर्तों में ले जाते है तो विचार विनिमय क्या बेटा! देखो, आत्मा को पाना चाहते है परन्तु जब वह अनहाद देखो, ध्वनियां समाप्त हो जाती है तो बेटा! देखो, कही कही आत्मा और परमात्मा की वार्ता प्रगट होती है तो बेटा! देखो, वह उन वार्त्ताओं को अपने में ही नहीं मानो अनुभव का विषय बन जाता है, वह न तो ध्वनि बन करके रहता है, न संघर्ष बन करके रहता है और न मेरे पुत्रों! यह पञ्च महाभूतों का नृत्त बन करके रहता है।

तो विचार विनिमय क्या बेटा! आज मैं तुम्हें गम्भीरता में नहीं ले जा रहा हूँ केवल यह कि देखो, जो अनहाद है उसको साधक जन अपने में ग्रहण करते है और वह नद नदियों के तट पर मानो देखो, उससे भी उपराम हो जाते हैं, तो विचार वेत्ता कहते है क्या मुनिवरों! देखो, हम अपनी साधना में परणित हो जाएं मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जब बेटा! कागभुषुण्ड जी अपने में अनुष्ठान करते थे और कागभुषुण्ड जी बेटा! देखो, यागां भूतं ब्रह्मे महर्षि लोमश के कथानानुसार उनकी आज्ञा पा करके उन्होंने बारह वर्ष का अनुष्ठान किया उसमें उन्होंने याग किया जिससे वायुमण्डल अनुकूल हो जाएं और वायुमण्डल में वेदज्ञ ध्वनि मानो वायुमण्डल को अपने में रत्त कर ले उसके पश्चात वह साधना में परणित हो गएं और साधना में परणित हो करके मेरे पुत्रों! देखो, वह अमृतं वायुमण्डल

पवित्र बना संघर्ष परमाणुओं का शुद्ध देवतव बन गया और देवतव बन करके बेटा! जब साधना करता है तो बेटा! देवता बन जाता है। तो मेरे प्यारे! विचार आता रहता है हमारे ऋषि मुनियों ने प्रत्येक वस्तु को बड़ी गम्भीरता से चिन्तन में लाए है, और उसको बाह्य और आन्तरिक दोनों जगत को उन्होंने विचारने का उन्होंने प्रयास किया है अथवा दोनों को विचारने से ऐसा प्रतीत होता है कि यह जगत जितना यह साधना का क्षेत्र कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, मानव का जीवन भी एक जीवनम ब्रह्मा वर्णसुतम यह देवतव कहा जाता है इसमें देवता वास करते हैं, जैसे जालवी ऋषि से एक समय महर्षि प्रव्हाण ने कहा था कि प्रभु आत्मा का लोक क्या है? तो आत्मां भूतं ब्रह्मा पञ्चम भूत तप प्रहे ऋषि कहता है जालवी ने कहा कि पञ्च महाभूत यहाँ आत्मा का लोक है आत्मा देखो, इसमें वास करता है यह पञ्च महाभूतों का लोक है उसी से पांच ज्ञानेन्द्रियां है उसी से पांच कर्मेन्द्रिया है, उसी से दस प्राण है उसी से मन बुद्धि का अवद्येत होता रहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, यह सर्व जगत है जिस जगत को जानने से हमारे मानव जीवन में प्रकाश आता है, और विचार आता है और ज्ञान की पूंजी मानो देखो, एक ज्ञान रूप बन करके हम विवेक में परणित हो जाते हैं।

तो विचार विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, विचारं ब्रह्मा वायसुतं देवा तो मेरे प्यारे! देखो, हमें अलंकार को अलंकार रूप में विवेक युक्त हो करके दृष्टिपात करने चाहिए और परमात्मा का अनन्तमयी यह जो जगत है इसके ऊपर विचार विनिमय करना अन्वेषण करना और अपने मृत्युञ्जय बनना मृत्यु से पार होने का बेटा! देखो, हम प्रत्येक इन्द्रियों के ज्ञान और विज्ञान को जान करके सागर से पार होना है बेटा! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नही आया हूँ, विचार विनिमय क्या बेटा! नाना प्रकार के जो अनुष्ठान है वह सर्वत्र अनुष्ठान आत्मा को जानने के लिए किए जाते है। जितना भी मानो देखो, मानो प्रजामयी बनता है, वह सब आत्मा के लिए, राजा बनता है आत्मा के लिए, आत्मा का जो उत्सुकता है वह अनुशासन चाहती है, और जीवन में एक महानता की प्रतिभा का जन्म होता है, तो बेटा! हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए और मुनिवरों! देखो, उसकी प्रतिभा को जान करके सागर से पार होने का प्रयास करना चाहिए। ये है बेटा आज का वाक अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा इस संसार सागर से पार हो जाएं यही बेटा! देखो, आज का हमारा मन्तव्य है आज के विचारो का अभिप्राय क्या अलंकार और इतिहास दोनों को भिन्न भिन्न रूप से विचारा जाएगा तो मानो वह ज्ञान की पूंजी बन करके मानव को अन्तरात्मा तक पहुंचाएगा यह है बेटा! आज का वाक अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट कर सकूंगा।

अहिल्या और इन्द्र की कथा का रहस्य



व्याख्याः शृङ्गी ऋषि कृष्णा दत्त जी महाराज

आज के वेद पाठ ने मेरे प्यारे! महानन्द जी! के जो प्रश्न उत्तर थे, वह तो समाप्त कर दिए, अब इस मूर्खानन्द की वार्ता देखो, उच्चारण कर रहे हैं, कि अब कुछ अहिल्या का विवेचन दे दीजिए, परन्तु मैं उच्चारण कर रहा हूँ, कि बेटा! मैंने किसी काल में अहिल्या और इन्द्र की व्याख्या की है।

पूज्य महानन्द जीः तो गुरु देव! आप आज व्याख्या दे देंगे, तो क्या इसमें कोई दोष है?

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, दोष तो नहीं, परन्तु बारम्बार व्याख्या उच्चारण नहीं करनी चाहिए। भगवन्! वह व्याख्या प्रिय लगती है, कल आपका इन्द्र का विवेचन भी चला था।

अच्छा! हास्य तो मुनिवरों! मेरे प्यारे! महानन्द जी! क्या कथन है, कि अहिल्या रुपम् भवति वेदाता आज वेद में जो अहिल्या का विवेचन आता चला जा रहा था, उसका कुछ रुप वर्णन करा दीजिए।

वर्तमान में प्रचलित अहिल्या वृत

बेटा! हम अहिल्या उस माता को कहा करते है, जो हमे आनंद देने वाली है, मेरे प्यारे! महानन्द जी! मुझे एक लोक कथा वर्णन किया करते हैं, कि जब सृष्टि का प्रारम्भ हुआ, तो उसके पश्चात ब्रह्मा के कमण्डलु से एक कन्या का जन्म हुआ, वह कन्या जब युवा हुई, तो इन्द्र ने कहा कि इस कन्या को मुझे दे दो, ब्रह्मा ने कहा, कि भाई! यह कन्या तुम्हें ही प्राप्त हो जाएगी। परन्तु इन्द्र तो देवताओं की सहायता

के लिए चले गए और यह कन्या युवा हो गई। ब्रह्मा ने वह कन्या गौतम को अर्पित कर दी और कहा कि अरे, गौतम! यह अहिल्या है, इसको तुम इन्द्र को अर्पित कर देना, जब वह तुम्हारे द्वारा आ पहुंचे। गौतम ने कन्या को स्वीकार कर लिया और उसको अपनी पत्नी चुन लिया और इन्द्र को अर्पित नहीं की। अब इन्द्र ब्रह्मा के द्वार पहुंचे और कहा कि वह मेरी देन कहाँ है? उन्होंने कहा कि भाई! मैंने तो गौतम को देदी है, क्या गौतम ने तुम्हें अभी तक अर्पित नहीं की है? उन्होंने कहा कि कदापि नहीं भगवन्! उस समय ब्रह्मा ने इन्द्र से कहा, तो भाई! गौतम के द्वार जाओ और अपनी अहिल्या को अपना लो।

इन्द्र वहाँ से चले और क्या किया?महानन्द जी इसमें कल्पित मूर्खों वाला, यह वाक्य कहा करते है, कि इन्द्र ने चन्द्रमा को अपने साथ ले लिया और इन्द्र ने प्रवहो अस्ति अवरेहण कच्छता विश्वम् अशुधेम् भवते मुनिवरों! कहते हैं कि चन्द्रमा अब द्वारपाल बना और इन्द्र मुर्गा बना। गौतम गंगा स्नान जाते थे, मुर्गे ने वाणी से कुछ कहा और गौतम गंगा स्नान चल दिए, जब गौतम गंगा स्नान को जा पहुंचे, उस समय इन्द्र ने अहिल्या से छल किया। अब जब गौतम गंगा के द्वार पहुंचे, तो गंगा ने कहा कि अरे, कौन रात्रि के समय में? उस समय गौतम ने कहा माता! मुझे नहीं जानती, मैं चतुर्थ समय गंगा स्नानम् ध्यानम करने आता हूँ। गंगा ने कहा कदापि नहीं। तुम्हारे गृह में छलम् भवते अस्ते, तुम्हारे गृह में छल हो रहा है। मेरे यह ऋषि कहा करते हैं, कि गौतम ने भीगे वस्त्रों को चन्द्रमा को अर्पण किया, जिससे चन्द्रमा गदला बन गया और वहाँ पहुंच कर इन्द्र को श्राप दिया कि तुम सहस्त्रों भगों वाले बन जाओ। वह सहस्त्रों भगों वाला बन गया, और अहिल्या को भी शाप दिया, वह वज्र बन गई। उस समय अहिल्या ने कहा भगवन्! आपने वज्र बना दिया, परन्तु मेरा कल्याण किस प्रकार होगा? तो यह कहा करते है कि त्रेताकाल में राम आवेंगे और तुम्हार उद्धार होगा। त्रेताकाल में राम आए और उन्होंने पदों की ठोकर लगाई और वज्र अहिल्या अन्तरिक्ष में चली गई।

मुनिवरों! वाक्य तो बहुत सुन्दर है और यथार्थ है। परन्तु इसकी मूर्खों की रुपरेखा, ज्यों की त्यों स्वीकार कर ली। यह वाक्य तार्किक और विचार सहित है। सुनो! आज भी हमारे वेद पाठ में अहिल्या शब्दों का प्रयोग किया जा रहा था, अहिल्या हमारे यहाँ पृथ्वी को कहते हैं, अहिल्या रात्रि को भी कहते हैं, अहिल्या माता को भी कहते हैं, नाना प्रकार के अहिल्या के शब्दार्थ माने गएं हैं, अब इनको व्याख्या सुनो।

अहिल्या वृत्त का वास्तविक अभिप्राय

मुनिवरों! प्रकरण के आधार पर यहाँ अहिल्या नाम रात्रि का है, गौतम नाम चन्द्रमा का है और इन्द्र नाम सूर्य का है, सूर्य ने विधाता से कहा था कि इस अन्धकार को मुझे अर्पित करो, क्योंकि आपने मुझे वह सविता सत्ता दी है, कि मैं अन्धकार रुपी रात्रि को नष्ट करूं, इसको भोग करने का मेरा कर्तव्य है, परन्तु यह चन्द्रमा को अर्पित कर दी।

मुनिवरों! जब रात्रि छा जाती है, चन्द्रमा आते हैं 'गौतम गौति अस्ति शुक्रति' गौतम जो नाना कान्तियों का स्वामी है, उसका नाम गौतम है और इसे अहिल्या रात्रि का पति कहते है क्योंकि यह रात्रि को भोग करता है और कैसे करता है? जैसे पतिव्रता देव कन्या अपने श्रृङ्गार को अपने पति को अर्पित कर देती है, इसी प्रकार यह रात्रि अन्धकार रुपी श्रृङ्गार को चन्द्रमा को अर्पित कर देती है, चन्द्रमा इसका भोग भोगता रहता है और संसार को सुख देता हे, आनन्द देता है।

मुनिवरों! अब प्रातःकाल होता है, देवता याचना करते हैं कि विधाता! हमारा कल्याण करो। उस समय यह सूर्य रुपी इन्द्र आते हैं और अपनी किरणों से इस अहिल्या का अपने में रमण कर लेते हैं। अब यह अहिल्या रुपी रात्रि पृथक हो जाती है और इस सूर्य का प्रतिबिम्ब चन्द्रमा पर जाता है और यह चन्द्रमा गदला बन जाता है और वह अन्धकार सूर्य रुपी इन्द्र में रमण कर गया। इसलिए यह अहिल्या रुपी जो रात्रि है, यह उस महान इन्द्र के लिए ब्रह्मा ने देन दो।

मुनिवरों! गौतम के भी हमारे यहाँ नाना शब्दार्थ हैं। गौतम नाम इस आत्मा का भी है क्योंकि यह गो नामक इन्द्रियों का स्वामी है, परमात्मा का नाम भी गौतम है क्योंकि 'गौ' नाम प्रकृति का है और 'ता' परमात्मा का, इन दोनों का स्वामी होने के नाते परमात्मा को गौतम कहते हैं।

पूज्य महानन्द जीः तो क्या भगवन्! यह वाक्य समाप्त हो गया कि भगवन्! राम ने अहिल्या का कल्याण किया?

हास्य..... बेटा! मुझे राम के समय को दृष्टिपात करने का सौभाग्य है, आज के संसार ने इस वाक्य को जाना नहीं, राम इतने वैज्ञानिक थे, कि वह पृथ्वी के विज्ञान को जानते थे, मैं तुमसे एक धार्मिक चर्चा करने आया हूँ कि जब हम राम को मर्यादा पुरुषोत्तम राम कहते हैं और उन्होंने मर्यादा चलाई और संस्कृति का उत्थान किया तो क्या क्षत्रिय को किसी ऋषि पत्नी को ठुकराने का अधिकार था या नहीं, यह जानना चाहता हूँ? क्षत्रिय उसको कहते हैं? जो किसी की पत्नी को स्वप्न में भी अपनी चित्रावली में धारण न कर सके, पदों की ठोकर तो बहुत दूर है। हमें जान लेना चाहिए, मुझे राम को देखने का सौभाग्यमिला और मैं प्रभु से कहा करता हूँ कि यदि प्रभु! संसार का कल्याण करना है, तो राम जैसे वीरों से हो ही सकता है, जिसका जीवन संसार में अग्रणी था, पवित्र था, सस्कृतिज्ञ था, धर्म की मर्यादा को ऊँचा बनाने के लिए भगवान राम जैसे पुनः से आते चले जाएं।

मुनिवरों! प्रकरण को विचार लेना चाहिए, यहा अहिल्या नाम पृथ्वी का है, जो पृथ्वी उपजाऊ हो परन्तु अन्न न उत्पन्न किया जा रहा हो और वज्र तुल्य पड़ी हो उस भूमि को अहिल्या कहा जाता है। बेटा! भगवान राम जब वन जा रहे थे और अपनी अयोध्या के राष्ट्र को पार किया, तो उन्होंने देखा, कि अयोध्या की भूमि वज्र तुल्य पड़ी हुई है, इसमें अन्न नहीं उत्पन्न किया जा रहा है, राम ने वैज्ञानिक दृष्टि से देखा कि यह भूमि तो बड़ी ही सुन्दर और उपजाऊ है। उनके अयोध्या के निकट ही निषाद का राष्ट्र था, निषाद से मिलान हुआ, तो निषाद ने कहा कि महाराज!

मेरे लिए कोई सेवा, उन्होंने कहा कि भाई! सेवा तो यह है कि यह जो अयोध्या की भूमि है इसके लिए अपने कृषकों से, वैश्यों स कहो, कि यह भूमि बड़ी सुन्दर है, इसकी चमड़ी को उधेड़ कर इसके मांस में बीज स्थापन कर, अन्न उत्पन्न किया जाएं। ऐसा ही किया। तो मुनिवरों! भगवान राम के चरण कमलों से उस अहिल्या रुपी पृथ्वी का उद्धार हो गया।

मुनिवरों! देखो, वाक्य चल रहा था, गौतम और अहिल्या की व्याख्या, अहिल्या हमारे यहाँ इस रात्रि को कहते हैं, यह हमें आनन्द देती है, जब हम निद्रा अवस्था में, अहिल्या को गोद में पहुंचते हैं, तो यह हमारा मिलान प्रभु से कराती है, हम आनन्द प्राप्त करते हैं और जीवन सत्ता ग्रहण करते हैं। हे मेरे भोले आचार्य जनो! हमें प्रत्येक वाक्य को विचार लेना चाहिए, हमारा ज्ञान और विज्ञान से भरा हुआ, जो वेद ज्ञान है, उसके ऊपर अनुसन्धान करना है।

अहिल्या रुपी अलंकार

शतपथ ब्राह्मण के आलोक में।

निरुक्त के आलोक में।

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के आलोक में।

रामायाण के आलोक में।

अहिल्या का रूपक वेद में है। रामायण में उसके आधार पर कहानी लिखी है जो मिलावट है। स्वामी दयानन्द ने इस शंका का समाधान किया है।

इन्द्रा गच्छेति । .. गौरावस्कन्दिन्नहल्यायै जारेति । तधान्येवास्य चरणानि तैरेवैनमेंत्प्रमोदयिषति ॥ शतपथ ब्राह्मण ३.३.४.१८

रेतः सोम ॥ शतपथ ब्राह्मण ३.३.२.१

रात्रिरादित्यस्यादित्योददयेर्धीयते । निरुक्त १२.११

सुर्य्यरश्पिचन्द्रमा गन्धर्वः॥ इत्यपि निगमो भवति । सोऽपि गौरुच्यते॥ निरुक्त २.६

जार आ भगः जार इव भगम्॥ आदित्योऽत्र जार उच्यते, रात्रेर्जरयिता॥ निरुक्त ३.१६

(इन्द्रागच्छेती०) अर्थात उनमें इस रीति से है कि सूर्य का नाम इन्द्र ,रात्रि का नाम अहल्या तथा चन्द्रमा का गौतम है। यहाँ रात्रि और चन्द्रमा का स्त्री-पुरुष के समान रूपकालंकार है। चन्द्रमा अपनी स्त्री रात्रि के साथ सब प्राणियों को आनन्द कराता है और उस रात्रि का जार आदित्य है। अर्थात जिसके उदय होने से रात्रि अन्तर्धान हो जाती है। और जार अर्थात यह सूर्य ही रात्रि के वर्तमान रूप श्रंगार को बिगाड़ने वाला है। इसीलिए यह स्त्री पुरुष का रूपकालंकार बांधा है, कि जिस प्रकार स्त्री पुरुष मिलकर रहते हैं, वैसे ही चन्द्रमा और रात्रि भी साथ साथ रहते हैं।

चन्द्रमा का नाम गोतम इसलिए है कि वह अत्यन्त वेग से चलता है। और रात्रि को अहल्या इसलिये कहते हैं कि उसमें दिन लय हो जाता है । तथा सूर्य रात्रि को निवृत्त कर देता है, इसलिये वह उसका जार कहाता है।

इस उत्तम रूपकालंकार को अल्पबुद्धि पुरुषों ने बिगाड़ के सब मनुष्य में हानिकारक मिथ्या सन्देश फैलाया है। इसलिये सब सज्जन लोग पुराणोक्त मिथ्या कथाओं का मूल से ही त्याग कर दें।

अहिल्या रुपी अलंकार ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, महर्षि दयानंद सरस्वती।

ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के 'ग्रन्थप्रामाण्याप्रामाण्यविषयः' अध्याय में महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि इन्द्र और अहल्या की कथा मूढ लोगों ने अनेक प्रकार से बिगाड़ कर लिखी है। उन्होंने ऐसा मान रखा है कि 'देवों का राजा इन्द्र देवलोक में देहधारी देव था। वह गौतम ऋषि की स्त्री अहल्या के साथ जारकर्म किया करता था। एक दिन जब उन दोनों को गौतम ने देख लिया, तब इस प्रकार शाप दिया कि —हे इन्द्र ! तू हजार भगवाला हो जा। अहल्या को शाप दिया कि तू पाषाणरूप हो जा। परन्तु जब उन्होंने गौतम की प्रार्थना की कि हमारे शाप का मोक्षण कैसे वा कब होगा, तब इन्द्र से तो कहा कि तुम्हारे हजार भग के स्थान में हजार नेत्र

हो जायं, और अहल्या को वचन दिया कि जिस समय रामचन्द्र अवतार लेकर तुझ पर अपना चरण लगावेंगे, उस समय तू फिर अपने स्वरूप में आजावेगी।' महर्षि दयानन्द लिखते हैं कि इस प्रकार से पुराणों में यह कथा बिगाड़ कर लिखी गई है। सत्य ग्रन्थों में ऐसा नहीं है। सत्यग्रन्थों में इस कथा का स्वरूप निम्न प्रकार है। सूर्य का नाम इन्द्र है, रात्रि का नाम अहल्या है तथा चन्द्र का नाम गौतम है। यहां रात्रि और चन्द्रमा का स्त्री-पुरूष के समान रूपक अलंकार है। चन्द्रमा अपनी स्त्री रात्रि से सब प्राणियों को आनन्द कराता है और उस रात्रि का जार आदित्य है। अर्थात् जिस (सूर्य) के उदय होने से (वह) रात्रि के वर्त्तमान रूप श्रृंगार को बिगाड़ने वाला है। इसलिये यह स्त्री पुरूष का रूपकालंकार बांधा है। जैसे स्त्री-पुरूष मिल कर रहते हैं, वैसे ही चन्द्रमा और रात्रि भी साथ-साथ रहते हैं। चन्द्रमा का नाम 'गौतम' इसलिये है कि वह अत्यन्त वेग से चलता है और रात्रि को 'अहल्या' इसलिये कहते हैं कि उसमें दिन का लय हो जाता है। सूर्य (इन्द्र) रात्रि को निवृत्त कर देता है, इसलिए वह उसका 'जार' कहलाता है। इस उत्तम रूपकालंकार विद्या को अल्प बुद्धि पुरूषों ने बिगाड़ के सब मनुष्यों में हानिकारक फल धर दिया है। इसलिये सब सज्जन लोग पुराणों की मिथ्या कथाओं का मूल से ही त्याग कर दें। ऐसी अनेक मिथ्या कथायें पुराणों में दी गई हैं जिन्हें विवेकशील मनुष्यों को स्वीकार नहीं करना चाहिये।

रामायण में यह कथा वैदिक ग्रन्थों से आयातित है।

वाल्मीकि रामायण में अहिल्या का वन में गौतम ऋषि के साथ तप करने का वर्णन हैं।

वाल्मीकि रामायण ४९.१९ में लिखा हैं की राम और लक्ष्मण ने अहिल्या के पैर छुए। यही नहीं राम और लक्ष्मण को अहिल्या ने अतिथि रूप में स्वीकार किया और पाद्य तथा अर्घ्य से उनका स्वागत किया। यदि अहिल्या का चरित्र सदिग्ध होता तो क्या राम और लक्ष्मण उनका आतिथ्य स्वीकार करते?

विश्वामित्र ऋषि से तपोनिष्ठ अहिल्या का वर्णन सुनकर जब राम और लक्ष्मण ने गौतम मुनि के आश्रम में प्रवेश किया तब उन्होंने अहिल्या को जिस रूप में वर्णन किया हैं उसका वर्णन वाल्मीकि ऋषि ने बाल कांड ४९.१५, ४९.१७ में इस प्रकार किया हैं।

स तुषार आवृताम् स अभ्राम् पूर्ण चन्द्र प्रभाम् इव। मध्ये अंभसो दुराधर्षाम् दीप्ताम् सूर्य प्रभाम् इव॥ ४९.१५

सस् हि गौतम वाक्येन दुर्निरीक्ष्या बभूव ह । त्रयाणाम् अपि लोकानाम् यावत् रामस्य दर्शनम् ॥ ४९.१६

तप से देदिप्तमान रूप वाली, बादलों से मुक्त पूर्ण चन्द्रमा की प्रभा के समान तथा प्रदीप्त अग्नि शिखा और सूर्य से तेज के समान अहिल्या तपस्या में लीन थी।

सत्य यह हैं की देवी अहिल्या महान तपस्वी थी जिनके तप की महिमा को सुनकर राम और लक्ष्मण उनके दर्शन करने गए थे। विश्वामित्र जैसे ऋषि राम और लक्ष्मण को शिक्षा देने के लिए और शत्रु का संहार करने के लिए वन जैसे कठिन प्रदेश में लाये थे।

अहिल्या और गौतम की कथा का रहस्य



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

मुनिवरों! गौ नाम पृथ्वी का है और रात्रि के समय इस पर अङ्कुर में शीतलता देकर, चन्द्रमा इसको उपजाऊ करता है, उस पृथ्वी का स्वामी देखो, गौतम कहलाता है। मुनिवरों! देखो, रात्रि को नाना रूपों से पुकारा है, रात्रि को अहिल्या कहते हैं। अहिल्या नाम माता का भी है, अहिल्या नाम पृथ्वी का भी है, अहिल्या नाम आत्मा का भी है, मेरे प्यारे महानन्द जी! ने मुझे एक समय एक लोक कथा वर्णन की, एक समय महर्षि गौतम की पत्नी अहिल्या को राजा इन्द्र ने आकर हरण किया। मुनिवरों! इससे स्पष्ट प्रतीत होता है, कि यहाँ शब्दों का अनर्थ कर दिया है। परन्तु हमें अनर्थ न करते हुए, शुद्ध पवित्र भाव से उन वाक्यों को विचारना चाहिए। महर्षि वाल्मीकि ने भी इसका प्रकरण लेते हुए, कुछ ऐसा कहा है कि गौतम चन्द्रमा को कहते हैं और रात्रि उसकी पत्नी अहिल्या है।

मुनिवरों! जिस प्रकार मानव का भूषण पवित्र ज्ञान है, इसी प्रकार रात्रि का आभूषण अन्धकार है, जैसे पतिव्रता देव कन्या अपने श्रृङ्गार को अपने पति को अर्पण कर देती है, इसी प्रकार यह रात्रि अपने अन्धकार रूपी श्रृङ्गार की चन्द्रमा को अर्पण कर देती है।

गौतम नाम परमात्मा का भी है, परन्तु यहाँ परमात्मा का प्रकरण नहीं, यहाँ चन्द्रमा का प्रकरण है, चन्द्रमा का प्रकरण लेते हुए महर्षि बाल्मीकि ने कुछ ऐसा कहा है, जब यह रात्रि अपने श्रृङ्गार को चन्द्रमा के अर्पण कर देती है, तो उस समय देवता बड़े दुःखित होते हैं, और कहते हैं कि अब इन्द्र की आवश्यकता है, इन्द्र आते हैं और आकर इस चन्द्रमा रूपी गौतम को बलि बना देते हैं, और रात्रि अहिल्या को अपने में रमण कर लेते हैं।

मुनिवरों! आज हमें विचारना चाहिए, कि हम इन्द्र किसको कहते हैं, इन्द्र नाम सूर्य का है, जब प्रातःकाल में इन्द्र आता है, तो रात्रि रूपी अहिल्या को नष्ट कर देता है और अपने में रमण करा देता है। संसार में अन्धकार का चिह्न नहीं रहता और चन्द्रमा दागिल बन जाता है, प्रत्येक वाक्य को वैदिकता, यौगिकता से और विवेक से विचारना चाहिए, जब तक हमारी बुद्धि में विवेक न होगा,

तब तक परमात्मा का शुद्ध ज्ञान और ऋषि मुनियों की पवित्रता को किसी प्रकार नहीं जान सकेंगे, आज हमें ऋषि मुनियों की परम्परा को जानना है, तो हमें शुद्ध चैतन्य बुद्धि में विवेक को उत्पन्न करना है।

मेरे प्यारे महानन्द जी! ने यह भी कहा था, कि भगवान राम ने बन जाते हुए, अहिल्या को अपनी ठोकर ठुकराते हुए, अन्तरिक्ष में पहुँचा दिया था। इस पर शास्त्रार्थ करने का समय नहीं, परन्तु उत्तर यह है कि उस समय भगवान राम पृथ्वी के विशेष विज्ञान को जानते थे, हमारे वैदिक साहित्य में अहिल्या पृथ्वी को भी कहते हैं, यहाँ प्रकरण का ले लेना चाहिए, जब भगवान राम ने अपनी संस्कृति का चक्र फैलाने के लिए अपने राष्ट्र को त्याग दिया था, तो उस समय अहिल्या का कल्याण करने के लिए, भगवान राम ने निषाद से कहा था कि हे निषाद! अपने राष्ट्र को पवित्र बनाने के लिए, यह जो अहिल्या पड़ी है, इसके मांस में बीज की स्थापना करके, अपने राष्ट्र का उत्थान करो। जो भूमि वज्र तुल्य हो और विज्ञान से अन्न उत्पन्न हो सकता हो, उस भूमि को अहिल्या कहा जाता है, आज हमें प्रत्येक वाक्य को गम्भीरता से विचारना है, बुद्धि के नेत्रों को शान्त करके अर्थों का अनर्थ नहीं करना है इस संसार में।

मुनिवरों! अहिल्या नाम इस आत्मा का भी है, रात्रि में जब रेणुका और इस आत्मा का मिलन होता है, तो इसका मिलान परमात्मा से हो जाता है, उस समय आत्मा को आनन्द छा जाता है, जैसे एक व्यक्ति प्रातः काल अपने स्थान से पृथक होकर सायं काल तक कार्य करता है और थकित हो जाता है। यदि उस समय उससे प्रश्न करो, कि जितना कार्य तुमने प्रातःकाल से सायंकाल तक किया है, उतना अब कर सकते हो? उत्तर मिलेगा कि मेरे द्वारा अब वह शक्ति नहीं है, परन्तु जब यह व्यक्ति रात्रि अहिल्या की गोद में चला जाएगा, तो प्रातःकाल में उसको सब ही सत्ता प्रदान हो जाती है, आत्मा परमात्मा का मिलान होकर, उसमें वह चैतन्यता और महानता प्राप्त हो जाती है कि वह मानव वही कार्य करने के लिए फिर उद्यत हो जाता है और यदि प्रश्न करो, कि जितना कार्य तुमने कल किया था, उतना आज कर सकते हो, तो उत्तर मिलेगा, कि अवश्य कर सकता हूँ। तो मेरे प्यारे ऋषि मण्डल! वह सत्ता कहाँ से प्राप्त होती है? वह सत्ता परमात्मा से और रेणुका की गोद में जाने से प्राप्त होती है, यदि हम इस विज्ञान को जान लेते हैं, कि यह सब हमें कैसे प्राप्त हो जाता है, तो इसमें और भी महानता प्रकट हो जाती हे, वह मानव संसार में दार्शनिक कहलाता है, मनो वैज्ञानिक बन जाता है, मन पर शासन करने वाला बन जाता है और आत्मा के विज्ञान को जानने वाला बन जाता है।

अहिल्या का उद्धार


श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

तो विचार विनिमय क्या बेटा! मैं बहुत गम्भीर क्षेत्रों में तुम्हें ले गया हूँ, विचार विनिमय केवल यह कि हमारे यहाँ अलंकार अलंकार ही बने रहे, बुद्धिमानो का कर्तव्य है कि अलंकार को अलंकार में लाए और देखो, इतिहास को इतिहास में परणित किया जाएं उससे मानो देखो, अन्धकार की उत्पति हो जाती है। मेरे प्यारे! देखो, समाज भ्रमित हो जाता है, प्रजा में नाना प्रकार की कृतियाँ उत्पन्न हो जाती है। मेरे पुत्रों! देखो, मुझे एक समय मेरे प्यारे महानन्द जी ने वर्णन कराया, क्या राम जब वन को जा रहे थे, राम जब वन को जा रहे थे विश्वामित्र के साथ, मानो देखो, उन्होंने अहिल्या के पद से स्पर्श किया और वह वह वज्र मानो देखो, स्वतः अहिल्या बन गयी। ऐसा मुझे वर्णन कराया परन्तु देखो, ऐसा प्रायः नहीं है वह ऐसा है कि देखो, निषाद के राज में यह अहिल्या जैसी मानो पृथ्वी पड़ी हुई थी मानो वज्र के तुल्य उन्होंने इसे निषाद राज से कहा हे निषाद! तुम्हारे राष्ट्र में यह अहिल्या इसी प्रकार है, परन्तु इसका उद्धार करो तो उन्होंने देखो, कृषकों के द्वारा उस भूमि को शुद्ध बनाया और शुद्ध बना करके मुनिवरों! देखो, वह स्वतः मानो उसमें अन्न उत्पन्न होने लगा वह सुयोग्यता में उसका सदुपयोग होने लगा तो मुनिवरों! देखो, उस पृथ्वी का नाम अहिल्या बन गया राम ने केवल इतना क्योंकि राम इस पृथ्वी के विज्ञान को जानते थे क्या इसमें कितनी दूरी पर कौन सा खनिज है, कौन सा खाद्यान्न है इस प्रकार के परमाणुओं को बेटा! वह सुगन्धि के द्वारा रज की सुगन्धि के द्वारा ही मानो उसकी जानकारी कराते रहते थे।

तो मुझे स्मरण आता रहता है उनका जीवन मानो देखो, इस प्रकार का जीवन था जिस जीवन की हम तुलना करते रहते है विज्ञान में जीवन रहता था और विज्ञान में मानो देखो, परणित होते हुए उन्होंने बेटा! देखो, विज्ञान के माध्यम से एक यत्र का निर्माण किया था जिस यत्र का नाम अहिल्या कृतिभा यत्र कहलाता था जो बेटा! देखो, पृथ्वी के दस दस योजन के मुनिवरों! देखो, खाद्य पदार्थों और खनिज को जान लिया जाता था वह प्रायः उन्हें दृष्टिपात आती थी तो मुनिवरों! देखो, इस प्रकार

देखो, उनका विज्ञान अपने में बड़ा मार्मिक रहता तो विचार आता रहता है बेटा! यदि हम अहिल्या को इस प्रकार का अलंकार से जान करके यदि उसको साहित्य में लिया जाता है तो साहित्य बेटा! उससे दूषित हो जाता है और इतिहास में त्रुटियाँ आ जाती है। तो इसीलिए साहित्य और इतिहास मानो दोनों भिन्न भिन्न होने चाहिए।

अलंकार-आत्मा और मन का संवाद



श्रृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज-१

जब मत्यु नहीं होती है, वहाँ मृत्यु का भय क्यों होने लगा। मेरे पुत्रों! हमें प्रभु के राष्ट्र पर विचार विनिमय करना है। यह संसार तो परम्परा से ही सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण से ही बंधा हुआ नृत्य कर रहा। परन्तु आज से नहीं, परम्परा से ही संसार में कहीं देवासुर संग्राम हो रहा है, कहीं एक राष्ट्र दूसरे को नष्ट कर रहा है। कहीं भौतिक विज्ञान विशेष बलवती हो गया, तो वह विनाश को प्राप्त हो गया। परन्तु वही विज्ञान जब आध्यात्मिकवाद में परिणित हो गया तो प्रकाश में चला गया। विज्ञान का सदुपयोग उससे हो गया।

परन्तु विचारना यह है कि हमें अपने कार्य में कितना व्यस्त रहना है। मानव को इस अपने मनीराम को सान्तवना नही देनी है। यह जब सान्तवना को प्राप्त होता है तब ही यह मानव की मृत्यु ले आता है, मानव की वहीं मृत्यु हो जाती है।

एक वाक्य मुझे स्मरण आ गया, पुत्रो! जो मैंने बहुत पुरातन काल में भी प्रकट किया था। एक समय राजा के यहां एक सेवक पहुंचा। राजा ने कहा, अरे तुम कौन हो? महाराज, मैं सेवक हूँ। क्या तुम सेवा करना चाहते हो? उसने कहा कि महाराज! मैं सेवा करने के लिए ही आया हूँ। राजा ने पूछा क्या वेतन लोगे? उसने कहा, मैं कोई वेतन नहीं लूंगा। मेरी एक प्रतिज्ञा है, वह आपको पूर्ण करनी होगी। राजा ने कहा क्या प्रतिज्ञा है? सेवक ने कहा कि जिस समय मुझे कार्य प्राप्त नहीं होगा, उसी समय मैं आपको मृत्यु को प्राप्त करा दूंगा। उन्होंने कहा ये तो बहुत प्रिय है। राजा ने स्वीकार कर लिया। अब बेटा! राजा कार्य उच्चारण करता और उनका कार्य होने लगा। अब कुछ ही समय में राजा के यहाँ, कार्य देने के लिए सूक्ष्मता गई।

राजा का स्वास्थ्य बड़ा प्रिय था। अब मृत्यु के भय से मुनिवरों! देखों! वह भयभीत रहने लगा। वह स्वस्थ भी नहीं रहा। उस सेवक से भयभीत था। मृत्यु नहीं चाहता था, राजा। उस समय कोई बुद्धिमान पुरूष राजा को प्राप्त हुआ। उसने कहा, अरे राजन्! तुम्हारा स्वास्थ्य तो बड़ा प्रिय था। तुम कैसे बन गए हो? राजा ने सब गाथा, उस बुद्धिमान से वर्णन की, जो योगेश्वर थे। राजा ने कहा कि महाराज! मैं मृत्यु से कैसे बच सकूँगा? उन्होंने कहा तुम उस सेवक को अपने व्यक्तिगत कार्यों में

क्यों लगा रहे हो? उसे संसार के कार्य में परिणित कर दो।

मेरे प्यारे! देखों संसार का क्या कार्य है? "कर्म ब्रह्मे कृताम्" संसार का भी कार्य नहीं है, तुम्हें तो इतना ज्ञान है, तो देखो, एक दण्ड पृथ्वी में स्थापित करो और उससे कहो कि इस पर ऊर्ध्वा में, ध्रुवा में, ध्रुवा में, ऊर्ध्वा में जाओ। राजा ने वाक्य स्वीकार कर लिया और उसने अपनी राज्य स्थली पर एक दण्ड पृथ्वी में स्थापित कर दिया और मुनिवरो! सेवक से कहा, सेवक तुम इस पर आओ जाओ, ग **मन** करते रहो। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा, अच्छा भगवन्। तो सेवक उस पर ग **मन** करने लगा और फिर उससे छुटकारा कहाँ? सेवक को लगातार कार्य प्राप्त होता था। मेरे प्यारे! राजा अपनी मृत्यु से बच गया, उसने अपनी मृत्यु नहीं होने दी।

मेरे प्यारे! वह सेवक, राजा और बुद्धिमान कौन हैं? इसके ऊपर विचार किया जाए। बेटा! राजा तो यह शरीर है जिसमें आत्मा विराजमान है और बुद्धिमान इसमें बुद्धि है, ज्ञान है, परन्तु यह जो **मन** रूपी सेवक ऐसा विचित्र है। दण्ड क्या है, तो उससे कहा कि तुम यह जो प्राण रूपी दण्ड है, इस प्राण रूपी दण्ड पर ग **मन** करते रहो।

मेरे प्यारे! **मन** और प्राण का मिलान ही मुक्ति कहलाती है, **मन** और प्राण के मेल को योग कहते हैं। **मन** और प्राण के मिलान को ही सृष्टि चक्र को जानना कहते हैं। **मन** और प्राण की आभा को जानना ही संसार में पितर बनना है।

बेटा! एक सूत्र है और उस सूत्र में यह **मन** रूपी सेवक कटिबद्ध हो जाता है, एकाग्र बुद्धि होने पर मानव बुद्धिमान क्या योगेश्वर बन जाता है, वह विवेकी बन जाता है। उसे क्रोध अब्रहेः और भी नाना प्रकार की मात्रा नही आती।

जो मानव इस संसार में अपना कल्याण करना चाहता है, अपनी मानवीयता को महान बनाना चाहता है, वह **मन** रूपी सेवक को प्राण स्थली पर ओतप्रोत करा देता है। हमारे यहां आध्यात्मिक विज्ञानवेता, यहां इस भौतिक विज्ञान के मार्ग को ही जान करके आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करता है। यह **मन** का जानना। प्राणों को जानना, यह मुनिवरों, देखो, भौतिकवाद है। पंच महाभूत इसी से कटिबद्ध है। मानव इसे जानकर ही आध्यात्मिक वाद में प्रवेश है।

आज का संसार **मन** की रश्मियों को जानने में ही लगा है। **मन** की तरंगों में तरंगित होता रहता है। उसी को अपना प्रकाशवत स्वीकार कर लेता है। **मन** प्रकृति का सबसे सूक्ष्म तन्तु कहलाया गया है, जो बहुत गतिमान है। इस **मन** को जानने वाला प्रकृति से एक-एक कण को जान लेता है। इसके ऊपर जब योगी का आत्मा बैठ जाता है, तो उस समय यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड का दर्शन करा देता है, और **मन** को स्वतन्त्र छोड़ने पर कहीं का कहीं रमण करता है। कभी समुद्रों की तरंगों में रमण करता

है, तो कभी सूर्य की आभा में लोक-लोकान्तरों में, जहां गति करता है, वहीं निकृष्ट से निकृष्ट गति भी करने लगता है। इस **मन** पर नियंत्रण से यह मोक्ष की पगडण्डी को धारण कर लेता है। प्रवृत्तियों पर जब संयम हो जाता है, तो यह **मन** आत्मलोक में चला जाता है।

मन वायु से भी तीव्र गति वाला है। इस **मन** को संसार के शुभ कार्य में लगा दो, यह **मन** तुम्हे इन्द्रलोक तक पहुंचा देगा। इस **मन** को स्थिर करो। यह तुम्हें बहुत ऊंचा पहुंचा देगा। (790308)

बेटा! यह आत्मा, **मन** को आज्ञा देता है कि प्रकृति के गर्भ से कुछ लाकर उपस्थित करो।-पूज्यपाद गुरुदेव।

व्याख्याः श्रृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज-२

एक **द्रव्यपति** थे, उनके द्वार एक सेवक जा पहुँचा, और उनसे कहा कि मैं आपकी कुछ सेवा करना चाहता हूँ। **द्रव्यपति** ने कहा क्या, वेतन लोगे? उस सेवक ने कहा, महाराज! मैं वेतन कुछ नही लूंगा परन्तु मेरा एक नियम है, कि जब मुझे कार्य करने को नहीं मिलेगा, तो तब ही मैं आपको मृत्यु प्राप्त करा दूंगा। **द्रव्यपति** ने कहा कि अच्छा, तुम मेरे द्वारा कार्य करो। वह सेवक **द्रव्यपति** के द्वारा कार्य करने लगा। **द्रव्यपति** जो उच्चारण करता, सेवक उस कार्य को कर देता। कुछ समय के पश्चात्, उस **द्रव्यपति** को कोई कार्य उस सेवक को देने को न रहा। **द्रव्यपति** बहुत चिंतित होने लगा। एक समय मार्ग में भ्रमण कर रहे थे, वहाँ एक बुद्धिमान मिला और उसने **द्रव्यपति** से कहा कि आप तो बड़े थकित होते चले जा रहे हैं। तब उन्होंने सब वार्ता कह सुनाई कि मेरे द्वार पर एक सेवक आया हुआ है। उसने मुझसे वचन लिया हुआ है कि जब उसे कोई कार्य करने को न रहेगा तो वह मुझे मृत्यु को पहुँचा देगा। अब मेरे पास उसको कार्य देने के लिए नहीं रहा है, इसलिए मैं उसके भुजों से नहीं बचूंगा। उस समय बुद्धिमान ने कहा कि भाई! तुम उसको अपने कार्य में क्यों लगा रहे हो, संसार के कार्य में लगा दो। उसको छूटकारा नहीं मिलेगा, और तुम उसके भुजों से बच जाओगे। बुद्धिमान की वार्ता सुनकर **द्रव्यपति** गृह आया और आकर उसको संसार में शुभ कार्य बता दिया कि जाओ, तुम संसार का कार्य करो, तुम्हें छुटकारा नहीं मिलेगा। वह संसार के शुभ कार्य करने लगा, उसको छुटकारा नहीं मिला और **द्रव्यपति** उसके भुजों से बच गया। यही दशा मनुष्य के **मन** की है। यदि **मन** को संसार के शुभ कार्यो में और परमात्मा के चिन्तन में लगाए रखते हैं, तो तब तक यह यथार्थ रहता है और जब इसको छुटकारा मिला, सङ्कल्प विकल्प आए, तो मनुष्य मृत्यु का सामना करने लगता है।

व्याख्याः श्रृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज-३

पूज्यपाद गुरुदेवः कल महानन्द जी ने प्रश्न किया कि हमारे, आपके वाक्य मृत मण्डल में क्यों जाते

हैं? यह क्या दशा है जो इस प्रकार आपत्ति काल भोगना पड़ा है? परन्तु आज भी हम इसका उत्तर न दे सके और व्याख्यान देते देते बहुत दूर चले गए। हम उच्चारण कर रहे थे, कि मानव को अपने कार्यों में दृढ़ रहना चाहिए। जो मानव जैसा करता है, वैसा ही भोगता है। बहुत पूर्व काल में हमने जो कर्म किए हैं, आज उन्हीं का फल भोगना पड़ रहा है। इसमें कुछ भी असत्य और न इसमें कोई भ्रान्ति है।

पूज्य महानन्द जी: आपके व्याख्यान तो यथार्थ होते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। परन्तु भगवन्! आधुनिक काल में ऐसे व्यक्ति हैं, जो नाना प्रकार की विद्याओं को अच्छी प्रकार जानते नहीं और न वेदों का स्वाध्याय ही करते हैं। उनके हृदय में नाना प्रकार की भ्रान्तियाँ, नाना प्रकार की अशुद्धियाँ रहती हैं इसलिए उनका निर्णय करना आपका कर्तव्य है।

पूज्यपाद गुरुदेव: महानन्द जी! जिसके द्वारा यथार्थता न हो, जो यथार्थ कार्यों को भी यथार्थ न मान रहा हो, बेटा! वह मानव कदापि नहीं मानेगा। वह तो अन्धकार में पहुँचा हुआ है।

आज हमारे हृदय में वह कौन सा स्थान है, जहाँ परमात्मा यह न्याय कर रहा है? आज हम विचारते हैं और यह उच्चारण करते हैं कि कोई स्थान नहीं, वह तो न्याय है। द्वितीय प्रश्न आता है कि जब कोई स्थान नहीं, तो परमात्मा न्याय कैसे करता है। आज यह एक बड़ा दार्शनिक विषय बन जाता है। आज मानव को विचारना चाहिए कि वह परमात्मा विभु है, तो वह कौन सा विभु है, जहाँ हमारे पाप पुण्य, कर्मों का फल दे रहा है? आज हमें वेदों के अनुकूल प्रतीत होता है कि वह परमात्मा हमारी आत्मा के समक्ष बैठा हुआ है। जो भी मानव कर्म करता है, उसके संस्कार, उसके अन्तःकरण में नियुक्त हो जाते हैं। जब मानव तुच्छ कर्म करने के लिए चलता है तो उस समय मानव को संकेत मिलता है, कि अरे, मानव! यह कुमार्ग है, इस पर न जा। मानव उस कर्म को कर लेता है, तो बेटा! वही कर्म परमात्मा उसके अन्तःकरण में नियुक्त कर देता है। जो बेटा! हमने किया है वह अन्तःकरण में विराजमान हो गया है, और वह हमें भोगना अनिवार्य है। उसको भोगे बिना हमारा कार्य न चलेगा।

महानन्द जी ने आज हमें एक संकेत किया है, और कई स्थानों में कहा है कि बहुत से मानव ऐसे हैं, जिन्होंने तपस्या करके तुच्छ कर्मों को समाप्त कर दिया है। परन्तु यह नहीं, यह वाक्य तुम्हारा विचित्र है। यह भी देखो, मानने वाला वाक्य बन जाता है। जैसा मानव ने कर्म किया है, उन्हें भोग करके, उसका अन्तःकरण शुद्ध बनेगा। जैसे आज प्रकाश हो रहा है, परन्तु वह प्रकाश उस काल तक रहेगा, जब तक उसमें प्रकाश देने वाले पदार्थ हैं। दीपक जल रहा है, परन्तु उसी स्थान तक प्रकाश देता रहेगा, जब तक उसमें वह पदार्थ है। जब वह पदार्थ न होंगे, तो वह अपना प्रकाश देना

समाप्त कर देगा। इसी प्रकार बेटा! हमारा अन्तःकरण है। जब तक अन्तःकरण में संस्कार हैं जब तक हम भोगते रहेंगे।

आज परमात्मा से जिज्ञासु कहता है कि हे परमात्मन्! मेरा हृदय प्रकाश दे रहा है, अब मैं इसमें कोई पदार्थ नियुक्त नहीं करूंगा, जिससे यह प्रकाश देता है। तो मुनिवरों! तब तक उस अन्तःकरण रूपी महान दीपक में कोई पदार्थ नहीं पड़ेगा, तो प्रकाश कदापि नही देगा भोगना भी नही पड़ेगा, जब इसमें नियुक्त करता है, तो भोगना भी अनिवार्य है। यह कैसा सुन्दर वाक्य हमारे समक्ष आ पहुँचा है। महानन्द जी ने हमसे एक स्थान में प्रश्न किया, कि सृष्टि के प्रारम्भ में मानव की आकृति ऐसी थी, जैसे भालू की।

मुनिवरों! आज का वेदमन्त्र तो यह कह रहा था, कि जब महान सृष्टि प्रारम्भ होती है, तो उस समय जो विमुक्त आत्माएं होती हैं, जिन्हें पूर्वकाल का ज्ञान रहता है, वह आत्मा आ करके परमात्मा के नियमों के अनुकूल अपने महान शरीर को धारण कर लेती है। उनसे यह महान संसार बन जाता है। संसार की गति इस प्रकार की हो जाती है। यह व्याख्या हम अधिक न देंगे। यह विषय तो हमारा कल का है, अब तो हमारा यह वाक्य चल रहा था, कि मानव जैसा कर्म करता है, वैसा उसे भोगना अनिवार्य है। अन्तःकरण में उसके संस्कार नियुक्त रहते हैं परन्तु प्रतीत नहीं कि मानव का अन्तःकरण किस काल में जाग जाए, किस काल में समाप्त हो जाए। आज मानव को विचारना चाहिए कि हमने जो कर्म किया है, वह हमें भोगना अनिवार्य हैं इसलिए हमें शुभ कर्म करना चाहिए। जैसे बेटा! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने राजा जनक से कहा था, हे जनक! यह **मन** तो शान्त रहता ही नहीं, यह तो कार्य करता ही रहता है, इसलिए तुम **मन** को शुद्ध बनाओ। जिससे तुम्हारा जीवन महत्वदायक बन जाएगा।

व्याख्याः श्रृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज-४

महर्षि याज्ञवल्क्य ने विचारा मैं वन में तो आ गया हूँ, मुझे तपस्या करनी है। महानता में परणित होना है और मुझे कैसे तपस्वी बनना है। विचार के लिए संसार में मन की आवश्यकता है। मन को पवित्र बनाने के लिए मन का शोधन किया। शोधन क्या होता है? मन को शोधन करने के लिए अन्न की आवश्यकता होती है। उन्होंने विचारा कि मुझे कौन से अन्न को पान करना है। ऋषि ने विचार जिस भूमि में से कृषक अपने गृह को अन्न ले जाते हैं और वह अन्न जो भूमि में पड़ा हुआ बच जाता है उस अन्न को मुझे चुनना है, उसी का आहार करना है, उसी से मेरा मन वास्तव में सुन्दर बन जाएगा। ऋषि ने सङ्कल्प धारण कर लिया और उस अन्न को चुनना आरम्भ कर दिया जिसको सिला अन्न कहते हैं उसी का पान करने से उनका मन अच्छी प्रकार शोधन हो गया। याज्ञवल्क्य मुनि

महाराज ने इसी प्रकार बारह वर्ष की तपस्या की। उस अन्न को पान किया, इन्द्रियों को संयम में किया। बारह वर्ष के पश्चात उन्होंने एक पोथी का निर्माण किया जिस पोथी का नाम शतपथ ब्राह्मण कहा जाता है।



आत्मा-अरे! मन तू ऐसा क्यों है?

मन -स्वामी आपने ही तो आज्ञा दी थी वस्तु उपस्थित करो, मैंने आपकी आज्ञा का पालन करके उपस्थित कर दी।

आत्मा और मन का संवाद

आत्मा अरे मन तू ऐसा क्यों है।

मन स्वामी तूने ही तो आज्ञा दी थी, प्रकृति के गर्भ से लाओ, मैंने उपस्थित कर दी।

आत्माः भाई मन ! तू तो बड़ा ही दुष्ट है, अत्यन्त चंचल है, प्रबल और ढीठ है। कहीं राज्य का लोभ देकर गुलामी करवाता है, कभी ऐश्वर्य का लालच दिखाकर घास कटवाता है, कहीं धन की ध्वनि सुनाकर धनियों के पैर दबवाता है, किसी की ऋषि-सिद्धि में फाँसकर पानी भरवाता है। ऐसे ही विषय-भोगों में आसक्त करके न मालूम तू कितने जन्मों से कितनी योनियों में मुझे भटका रहा है। जैसे कुत्ते को रोटी का टुकड़ा दिखाते हुए चाहे जितनी दूर ले जाया जाय, तुझसे छुटकारा पाने का कोई उपाय दिखलायी नहीं देता। तू हवा से भी तेज दौड़ता है, क्षण भर में ध्रुव मण्डल तक घूम आता है। जाग्रत में ही नहीं, स्वप्न में भी चुप होकर नहीं बैठता। जन्म भर में कभी देखे सुने नहीं, ऐसे-ऐसे अनोखे पदार्थ रच लेता है। भजन करने को बैठता हूँ तो और भी अधिक भागता है। बहुतेरा रोकता हूँ, रुकता नहीं। मन्त्र में लगाता हूँ तो बिना सिर-पैर के मनोराज्य करने लगता है। भगवान का ध्यान करना चाहता हूँ तो भागा-भागा फिरता है। राम-राम जपता हूँ तो ग्राम-ग्राम में घूमता है। घर-बाहर के, दरबार के सब झगड़े भजन में लाकर खड़े कर देता है। तंग आ गया हूँ, तुझ पापी से कब पीछा छूटेगा? जब देखो तब एक-न-एक चिन्ता में ही डाले रखता है। एक घड़ी भी सुख की नींद नहीं सोने देता। मैं संसार से मुक्त होना चाहता हूँ, तू मुझे लौटा-लौटाकर उसी में डालता है। भूत के समान सदा मुझ पर सवार रहता है। सत्संग में जाना चाहता हूँ तो गंजीफ़ा, चौसर, शतरंज में लगा देता है। स्वाध्याय करना चाहता हूँ तो उपन्यास सामने लाकर रख देता है। देवस्तुति वाणी पढ़ने बैठता हूँ तो कहता है घर में दाल नहीं है, घी नहीं है, मिर्च-मसाला निपट गया है, जलाने को लकड़ियाँ नहीं हैं; मंडीका समय है, नाज भी निपटने वाला है, चलो, ले आओ, इस समय पाव भर अधिक मिल जायगा; ईश्वर भजन फिर कर लेना, यह तो रोज का गीत है; पेट-पूजा भी तो प्रधान है, सब उसके पीछे हैं; देवी-देवता भी इसीसे प्रसन्न होते हैं। गीता पढ़ने को दिन भर पड़ा है, रात भी बड़ी- बड़ी होती है; मंडी का समय निकला जाता है। ऐसी- ऐसी तेरी बातों से तंग आ गया हूँ। तेरा सत्यानाश हो जाय।

तूने मेरा सर्वस्व नाश कर दिया है। स्वभाव से मैं सुखी हूँ, तेरे संग में दुःख पाता हूँ। पवित्र होकर भी तेरे संग से पापी कहलाता हूँ। अचल भी तेरे संग से चल बन गया हूँ। बृहत् होकर भी तेरे संग से अणु हो गया हूँ। असंग होने पर भी तेरे संग से कर्ता-भोक्ता की उपाधि मेरे सिर मढ़ी गयी है। स्वतन्त्र होकर भी परतन्त्र और मुक्त होकर भी तेरे संग से बन्धनमें पड़ा हूँ। तृप्त होकर भी भूखा बना रहता हूँ। निर्भय होकर भी भयभीत हूँ। नहीं जन्मता हुआ भी जन्मता हूँ, अमर होकर भी मर रहा हूँ। कहाँ तक रोऊँ? तेरे संग से तंग हूँ।

मन आत्मा सेः अच्छा! मैं तुझसे ही इन्साफ कराता हूँ, तुझे ही न्यायाधीश बनाता हूँ बोल, जो कुछ मैं कहता हूँ, ठीक है या नहीं?

मन वाह! साहब, वाह! अच्छी उलटी गंगा बहायी।

करना आप, लगाना नौकर को।

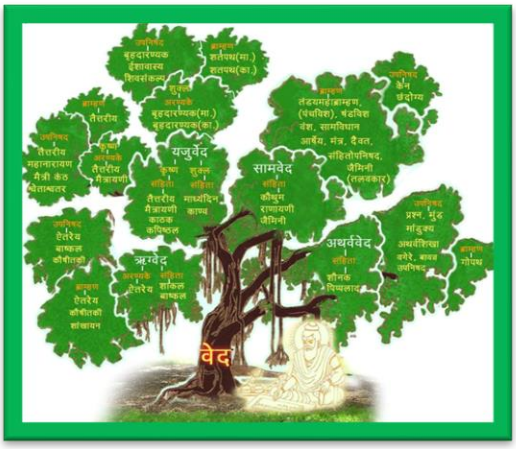
ऐसी समझ है, तभी तो आप तंग हो रहे हैं। आपने जितनी बातें कही हैं, सब झूठी हैं। निर्मूल हैं। दूसरे को दोष लगाना बड़ा भारी पाप है। सोच-विचार कर बोलना चाहिये! आप अच्छे, मैं बुरा! बुरेने अच्छेको बिगाड़ दिया, कहीं ऐसा भी हो सकता है? क्या गुरु जी से यही पढ़ा है? रोज तो सुना करते हैं कि बुरा बुरा ही रहेगा, अच्छा अच्छा ही रहेगा। बुरा अच्छा नहीं हो सकता, अच्छा बुरा नहीं हो सकता। जैसे दिन-रात का मेल नहीं होता, ऐसे ही अच्छे-बुरे भी मिल नहीं सकते। सोना खोटा नहीं हो सकता। जैसा कारण होता है, वैसा ही कार्य भी होता है। सजातीयका सजातीयसे ही मेल हो सकता है, विजातीयका नहीं हो सकता। फिर मैंने आपको सुखीसे दुःखी कैसे बना दिया? आप मुझे दुष्ट, चंचल, बलवान् और ढीठ बताते हैं; मैं इनमें से एक भी नहीं हूँ। यदि हूँ तो आपका बनाया हुआ ही हूँ। मैं तो सरल, अबल, लँगड़ा और बेपेंदी का लौटा हूँ। बिना कौड़ी-पैसे का नौकर हूँ, बिना दाम का खरीदा हुआ गुलाम हूँ। वचन में बँधा हुआ हूँ, इशारे पर काम करता हूँ। जो वस्तु आप माँगते हैं, वही लगाकर देता हूँ। जहाँ खड़े होने को कहते हैं, वहीं एक टाँग से खड़ा रहता हूँ! आपकी रुचि के अनुसार काम करता हूँ, आपकी रुचि बिना कोई काम नहीं करता। जब आप कहते हैं, तभी चलता हूँ! आपके दिये हुए पैरोंसे चलता हूँ! नहीं तो मेरे पैर हैं ही नहीं। लँगड़ा हूँ, जड हूँ, बल भी मुझमें नहीं है, यदि है तो आपका दिया हुआ है - मैं तो बलहीन हूँ। अबला के पुत्र में बल आवे ही कहाँ से? आपकी बुद्धि विपरीत हो रही है, इसलिये आपको कुछ-का- कुछ दिखायी दे रहा है। ढिठाई कैसे कर सकता हूँ? ढिठाई तो वह करे जिसमें बल हो, बल पेंदी में होता है, - मैं बिना पेंदीका हूँ। फिर ढीठता करूँ ही कैसे? पक्षपात न कीजिये, पक्षपात रहित होकर विचारिये। आप स्वभाव से भले ही निर्दोष हों, मैं आपको दोषी नहीं बताता, आप निर्दोष सही परन्तु दोषी मैं भी

नहीं हूँ। यदि हूँ तो आप पहले होंगे। कारण से कार्य भिन्न नहीं होता। जैसे आप हैं, वैसा ही मैं भी हूँ। आपमें से ही तो निकला हूँ। फिर दोषी कहाँ? कहीं आसमान में से तो टपक नहीं पड़ा। आपका बनाया हुआ हूँ। आपने ही मुझसे संग किया है। जो-जो भोग आप माँगते हैं, मैं लाकर मौजूद कर देता हूँ! जो-जो योनि आपको पसंद होती है, वहीं मैं आपको ले जाता हूँ। आप कहते हैं कि भजन नहीं करने देता। भजन करना आप चाहते ही कब हैं? धनमें, स्त्रीमें, पुत्रमें, ऐश्वर्यमें, नाममें, कीर्तिमें, ऋद्धि- सिद्धिमें, जुएमें, चोरीमें व्यभिचारमें, मांसमें, मदिरामें, बीड़ीमें, चुरुटमें, अफ़ीममें, भंगमें, चरसमें, गाँजेमें, मीठेमें, नमकीनमें, चटपटेमें आपकी रुचि है; इनसे आपको फुरसत ही कहाँ है? दिन-रातमें इन्हींका तो भजन किया करते हैं, फिर ईश्वरका भजन कहाँ से हो? जो खायगा, उसी की डकार आवेगी। फोनोग्राफ में जो राग भरा जायगा, वही निकलेगा। कुँजड़े के यहाँ तो साग-पात ही मिलेगा, जवाहरात तो जौहरी की दूकान पर ही मिलेंगे। जैसी आपकी रुचि होती है, वैसा ही मैं भी बन जाता हूँ। नौकर को क्या उज्र? 'जी हाँ' करना नौकर का काम है। चौबेजीका नौकर हूँ, बैंगनों का नौकर तो हूँ नहीं; चौबेजी बैंगनोंको अच्छा बताते हैं तो मैं उन्हें गुणवाला बना देता हूँ। चौबेजीको बैंगन नापसंद हों तो मैं उन्हें बेगुन कह देता हूँ। 'पाँड़ेजी, तुम्हें ग्राम में रहना; ऊँट बिलैया ले गयी तो हाँ जी हाँ जी कहना!' सुनिये, आपकी राजी में मेरी राजी है। आप स्वाध्याय कीजिये, प्रणिधान कीजिये, आसन लगाइये, प्राणायाम कीजिये। प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि कीजिये। राम नाम का जाप कीजिये; नवधा, प्रेमा, पराभक्ति कीजिये, श्रवण, **मन** न, निदिध्यासन कीजिये। शंकर की, कृष्ण की, राम की जीवन शैली का ध्यान कीजिये। जो कुछ आप चाहें, प्रेम से कीजिये। आप स्वतन्त्र हैं। मैं आपको रोकनेवाला कौन हूँ? मैं तो कान पकड़ी छेरी हूँ; जिधर लगा देंगे, उधर लग जाऊँगा। जब आप संसार से मुक्त होना चाहें, मुझे घर बैठने की आज्ञा दे देना! नौकर की जड़ जमीन से साढ़े तीन हाथ ऊँची होती है; जहाँ आपने जीभ हिलायी, अलग जा बैठूंगा। परमात्मा करे, आप मुक्त हो जायँ; बड़ी खुशी की बात है। आप मुक्त हो जायँगे तो मैं भी मुक्त हो जाऊँगा। आपके आश्रय ही तो मैं हूँ, आपके साथ मेरी भी मुक्ति हो जायगी। सच पूछो तो मुक्ति तो मेरी ही होगी, आप तो स्वभावसे मुक्त हैं ही।

आत्मा-(एकान्त में जाकर) भाई कहता तो ठीक ही है। जैसे पुरुष की छाया होती है, वैसा ही जीवका **मन** है। जैसा पुरुष होता है, वैसी ही उसकी छाया होती; जैसा मैं हूँ वैसा ही मेरा **मन** है। **मन** तो सचमुच जैसा कहता है, वैसा ही है। मैंने उसे सत्ता दे रखी है, नहीं तो उस बेचारे की सत्ता ही कहाँ है? वह तो सचमुच नौकर ही है; नौकर नहीं, किन्तु औजार है। औजार में अपनी सत्ता तो कुछ होती नहीं, औजार वाला अपनी मर्जीके अनुसार उसको उपयोग में ला सकता है। यही बात **मन** के

सम्बन्धमें है! प्रायः सब कार्य मेरे इच्छानुसार ही करता है, किसी कार्य को यदि मैं ही न कराऊँ तो बात दूसरी है। इससे सिद्ध होता है कि **मन** मेरा औजार है, जड़ है और मैं स्वतन्त्र कर्ता, चेतन हूँ। मैं **मन** के अधीन नहीं हूँ, **मन** मेरे अधीन है।

पाठक! इतना जानने से साधक सुखी हुआ, आयु-पर्यन्त **मन** से इच्छानुसार कार्य लेता रहा और अन्त में उसको छोड़कर स्वस्वरूपमें स्थित होकर हमेशा के लिये जन्म- मरणरूप संसार से मुक्त होकर वैष्णव-पद को प्राप्त हुआ। अज्ञान से सब दुःख है; **मन** को **मन** समझते ही **मन** न **मन** करने लगता है, स्वाधीन हो जाता है। **मन** का स्वरूप न समझने से **मन** चालीस सेरका हो गया है, जाननेपर छटाँक का भी नहीं निकलता। न तोला, न माशा, न रत्ती; फूँकमात्रसे उड़ जाय, इतना हलका हो जाता है! सच पूछो तो फूँकका भी काम नहीं है। न हुआ ही हौआ है! बिना सिर-पैर का भूत है! जहाँ पहचान लिया, भूः स्वाहा हो जाता है, स्वयम्भू ही शेष रह जाता है। यह गुरुमन्त्र है, इसको मत भूलो!।



ओ३म् युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविता धियः। अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथिव्याऽअध्याभरत्॥ यजुर्वेद ११.१

सविता देवता, छन्दः विराडार्ष्यनुष्टुप्, स्वरः गान्धारः, ऋषिः प्रजापतिर्ऋषिः।

पदार्थः जो (सविता) ऐश्वर्य को चाहने वाला मनुष्य (तत्त्वाय) उन परमेश्वर आदि पदार्थों के ज्ञान होने के लिये (प्रथमम्) पहिले (मनः) विचारस्वरूप अन्तःकरण की वृत्तियों को और (धियः) धारणा रूप अन्तःकरण की वृत्तियों को (युञ्जानः) योगाभ्यास और भू गर्भ विद्या में युक्त करता हुआ (अग्नेः) पृथिवी आदि में रहने वाली बिजुली के (ज्योतिः) प्रकाश को (निचाय्य) निश्चय करके (पृथिव्याः) भूमि के (अधि) ऊपर (आभरत्) अच्छे प्रकार धारण करे, वह योगी और भूगर्भ-विद्या का जानने वाला होवे॥

ओ३म् युक्तेन मनसा वयं देवस्य सवितुः सवे। स्वर्ग्याय शक्त्या॥ यजुर्वेद ११.२

सविता देवता, छन्दः शङ्कुमती गायत्री, स्वरः षड्जः, ऋषिः प्रजापतिर्ऋषिः।

पदार्थः हे योग और तत्त्वविद्या को जानने की इच्छा करने हारे मनुष्यो! जैसे (वयम्) हम योगी लोग (युक्तेन) योगाभ्यास किये (**मन** सा) विज्ञान और (शक्त्या) सामर्थ्य से (देवस्य) सब को चिताने तथा (सवितुः) समग्र संसार को उत्पन्न करने हारे ईश्वर के (सवे) जगत् रूप इस ऐश्वर्य में (स्वर्ग्याय) सुख प्राप्ति के लिये प्रकाश को अधिकाई से धारण करें, वैसे तुम लोग भी प्रकाश को धारण करो॥

ओ३म् असुर्य्या नाम लोकाऽअन्धेन तमसावृताः।ताँस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः॥ यजुर्वेद ४०.३

पदार्थः जो (लोकाः) देखने वाले लोग (अन्धेन) अन्धकार रूप (तमसा) ज्ञान का आवरण करने हारे अज्ञान से (आवृताः) सब ओर से ढंपे हुए (च) और (ये) जो (के) कोई (आत्महनः) आत्मा के विरुद्ध आचरण करने हारे (जनाः) मनुष्य हैं (ते) वे (असुर्य्याः) अपने प्राण पोषण में तत्पर अविद्यादि दोष युक्त लोगों के सम्बन्धी उनके पाप कर्म करने वाले (नाम) प्रसिद्ध में होते हैं (ते) वे (प्रेत्य) मरने के पीछे (अपि) और जीते हुए भी (तान्) उन दुःख और अज्ञानरूप अन्धकार से युक्त भोगों को (गच्छन्ति) प्राप्त होते हैं॥

ओ३म् यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवन्तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरङ्गमञ्ज्योतिषाञ्ज्योतिरेकन्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥ यजुर्वेद ३४.१

मनो देवता, विराट् त्रिष्टुप्, धैवतः।

पदार्थः हे जगदीश्वर वा राजन्! आपकी कृपा से (यत्) जो (दैवम्) आत्मा में रहने वा जीवात्मा का साधन (दूरङ्गमम्) दूर जाने, मनुष्य को दूर तक ले जाने वा अनेक पदार्थों का ग्रहण करने वाला (ज्योतिषाम्) शब्द आदि विषयों के प्रकाशन श्रोत्र आदि इन्द्रियों को (ज्योतिः) प्रवृत्त करने हारा (एकम्) एक (जाग्रतः) जागृत अवस्था में (दूरम्) दूर-दूर (उत्, ऐति) भागता है (उ) और (तत्) जो (सुप्तस्य) सोते हुए का (तथा, एव) उसी प्रकार (एति) भीतर अन्तःकरण में जाता है (तत्) वह (मे) मेरा (मनः) सङ्कल्प-विकल्पात्मक **मन** (शिवसङ्कल्पम्) कल्याणकारी धर्म विषयक इच्छावाला (अस्तु) हो ॥

ओ३म् पुरोऽपेहि **मन** स्पापु किमशंस्तानि शंससि। परेहि न त्वां कामये वृक्षां वनांनि सं चंर गृहेषु गोषुं मे मनः ॥

पदार्थः (**मन** स्पाप) हे मानसिक पाप! (परः) दूर (अप इहि) हट जा (किम्) क्या (अशस्तानि) बुरी बातें (शंससि) तू बताता है। (परा इहि) दूर चला जा, (त्वा) तुझको (न कामये) मैं नहीं चाहता, (वृक्षान्) वृक्षों और (वनानि) वनों में (सम् चर) फिरता रह, (गृहेषु) घरों में और (गोषु) गौ आदि पशुओं में (मे) मेरा (मनः) **मन** है ॥

इदन्नमम्-यह तेरा कुछ भी नही है। यह सब प्रभु का है।

आत्मा को विष्णु बनाओ



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

मुनिवरों! ज्ञान के सम्बन्ध में, आज एक वार्ता स्मरण होती चली जा रही है और वह यह है, कि कहते हैं एक राजा थे। उस राजा के राष्ट्र में कोई भी एक दूसरे का ऋणी न था। राजा का राष्ट्र बड़ा महान, पवित्र था। राजा अपनी प्रजा में नित्यप्रति भ्रमण किया करते थे और देखा करते थे, कि मेरे राष्ट्र में कोई दुराचारी तो नहीं है। राजा के राष्ट्र में जब यह चक्र चल रहा था, एक समय वह राजा अपने कुछ सेवकों सहित पर्वतों में जा पहुँचे और सायंकाल को गृह वापिस आने लगे, तो उन्होंने देखा, कि वहाँ एक साधु है जिसके पास न तो खानपान की सामग्री है, न कोई पात्र है और न कोई वस्त्र है और न विश्राम करने वाला कोई आसन है। राजा ने अपने मन में सोचा, अरे, तू कितना बड़ा अयोग्य राजा है, जिस राजा के राष्ट्र में ऐसे दीन व्यक्ति रहते हों। राजा ने अपने सेवकों से कहा कि लो, यह दस सहस्त्र मुद्रा और उस दीन को अर्पण करके आओ। वह सेवक बेचारे मूर्ख थे, उस द्रव्य को लेकर उस साधु के द्वार पर जा पहुंचे साधु से कहा कि लीजिए भगवन! साधु ने उत्तर दिया कि किसी दीन को दे दो, जब साधु ने यह कहा, तो अज्ञानी सेवकों ने सोचा कि यह थोड़े उच्चारण कर रहा है।

सेवक उस द्रव्य को लेकर राजा के द्वार पर जा पहुँचे और कहा, महाराज! वह थोड़े उच्चारण कर रहा है। तब राजा ने कहा कि लो, ओर द्रव्य ले जाओ, कहते हैं कि राजा ने लगभग २५ सहस्त्र मुद्रा दीं, सेवक द्रव्य लेकर साधु के द्वार जा पहुँचे और साधु से कहा, अब तो लो। साधु ने उत्तर दिया, भई! किसी दीन को दे दो। उन मूर्खों ने सोचा कि यह तो अब भी थोड़े ही उच्चारण कर रहा है, वह द्रव्य ले करके राजा के समक्ष जा पहुँचे और कहा कि वह तो अब भी थोड़े उच्चारण कर रहा है।

मुनिवरों! अब राजा ने एक लाख की मुद्रा दी, सेवक उस एक लाख की मुद्रा को लेकर साधु के द्वार जा पहुँचे और साधु से कहा कि अब, तो लो, साधु ने वही उत्तर दिया, भई! किसी दीन को दे दो। उन मूर्खों ने सोचा कि यह तो अब भी थोड़े का उच्चारण कर रहा है। वह वहाँ से राजा के समक्ष आए और राजा से कहा कि सूक्ष्म हैं।

मुनिवरों! राजा ने २५ लाख मुद्रा दीं, वह सेवक २५ लाख मुद्रा लेकर साधु के समीप पहुँचे और साधु से कहा कि महाराज! अब तो लो। साधु ने फिर वही उत्तर दिया कि किसी दीन को दे दो। उन मूर्खों ने सोचा, यह अब भी सूक्ष्म ही उच्चारण कर रहा है, वह सेवक वहाँ से राजा के समक्ष पहुँचे और कहा, महाराज! अब भी सूक्ष्म उच्चारण कर रहा है।

मुनिवरों! राजा ने थोड़े जानकर एक करोड़ मुद्रा दीं, सेवक एक करोड़ मुद्रा लेकर साधु के द्वार पहुँचे और साधु से कहा कि महाराज! अब तो लो, साधु ने कहा, किसी दीन को दे दो, उन मूर्खों ने सोचा कि यह तो अब भी सूक्ष्म उच्चारण कर रहा है और राजा से जा कहा कि महाराज! वह तो अब भी थोड़े उच्चारण कर रहा है।

साधु के वचन को पा करके राजा आश्चर्यचकित हो गए और उन्होंने २५ करोड़ मुद्रा सेवकों को दीं, सेवक साधु के द्वार जा पहुँचे और कहा, अब तो लो, साधु ने फिर भी यह ही कहा, किसी दीन को दे दो। सेवकों ने जाना कि यह तो अब भी सूक्ष्म ही उच्चारण कर रहा है और वे वहाँ से राजा के समक्ष जा पहुँचे और कहा कि थोड़े हैं।

राजा आश्चर्य से बोला कि इतने अद्भुत द्रव्य को कौन त्यागता है, यह कैसा साधु है? मुनिवरों! राजा स्वयं एक अरब मुद्रा लेकर साधु के समीप पहुँचे और साधु से कहा कि महाराज! अब लीजिए, इस द्रव्य को।

साधु से कहा, राजन! मैंने कई काल में कहा है, कि किसी दीन को दे दो।

राजा ने कहा, प्रभु! आपसे दीन मेरे राष्ट्र में कोई नहीं है। साधु ने उत्तर दिया कि राजन! मैं दीन नहीं हूँ, मैं तो राजाओं का भी राजा हूँ।

राजा बोले, प्रभु! आपके द्वारे राष्ट्र की सामग्री कहाँ है? आपके द्वारे सेना कहाँ है?

साधु ने उत्तर दिया कि संसार में मेरा कोई शत्रु नहीं है, जब मेरा कोई शत्रु ही नहीं, तो मुझे सेना की भी आवश्यकता नहीं।

राजा बोला, चलो, शत्रु तो नहीं है, परन्तु राष्ट्र को चलाने के लिए द्रव्य कहाँ है?

साधु ने कहा, राजन! मेरे द्वारा एक रसायन ऐसी है, जिससे मैं पर्वतों को स्वर्ण बना देता हूँ और इस स्वर्ण से अपने राष्ट्र का कार्य किया करता हूँ।

राजा ने जान लिया, कि अवश्य इसके द्वारे कोई रसायन है। यदि रसायन न होती, तो इतने द्रव्य को कौन त्यागता है। मुनिवरों! सायंकाल हो चुका था। राजा वहाँ से अपने गृह जा पहुँचे। स्नान किया, भोजन पाया और विश्राम गृह में विश्राम जा किया। रात्रि हो चुकी थी। राजा के मन में विचारधाराएं आने लगीं, कि तू साधु के द्वार चल। तुझे कोई दृष्टिगोचर भी नहीं कर रहा है। उस रसायन से १०,२० सहस्त्र मण स्वर्ण बनवा लें, तू स्वर्णपति बन जाएगा। जब राजा के मन में यह कल्पना जागी,

तो राजा स्वयं वहाँ से रात्रि में साधु के आश्रम पर जा पहुँचा। साधु ने जब राजा के पदों की खटखटाक सुनी, तो साधु ने कहा, कौन है? राजा ने कहा कि प्रभु! आपका सेवक राजा हूँ। साधु ने कहा, राजन! किस कारण आए हो?

मुनिवरों! राजा ने कहा कि प्रभु! मैं उस रसायन से जो आपके पास है, १०,२० सहस्त्र मण स्वर्ण बनवाने आया हूँ, स्वर्ण बना दीजिए।

साधु ने कहा, राजन! बोलो, दीन तुम हो या मैं हूँ, जो तुम मेरे द्वार मांगने आए।

राजा ने कहा, प्रभु! दीन तो मैं ही हूँ, परन्तु अब कृपा कीजिए।

जब राजा ने ऐसा कहा तो साधु बोले, अच्छा, राजन! तुम नित्यप्रति हमारे द्वार आया करो, हम तुम्हारा स्वर्ण अवश्य बना देंगे।

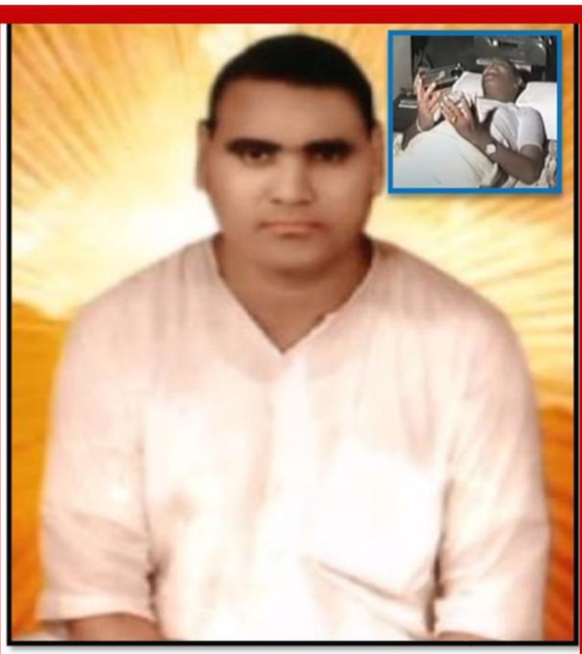
मुनिवरों! देखो, राजा ने साधु के वचनों का पान किया और साधु के द्वारे नित्यप्रति आना जाना प्रारम्भ कर दिया। साधु ने उन्हें आत्मा परमात्मा और प्रकृति का पूर्ण ज्ञान करा दिया। राजा का अन्तःकरण पवित्र हो गया। उन आदेशों को पान करते, लगभग एक वर्ष हो गया। एक समय साधु ने योगबल से राजा के अन्तःकरण को देखा। उसके अन्तःकरण में किसी प्रकार की त्रुटि न रही थी, दीनता अब उसके अन्तःकरण में न थी। साधु ने राजा से कहा कि राजन! आज हम तुम्हारा स्वर्ण बना देंगे, बोलो कितना स्वर्ण चाहते हो।

राजा ने कहा कि प्रभु! जो स्वर्ण आप मेरा बनाना चाहते थे, वह स्वर्ण मेरा बन चुका।

तो हे मेरे प्यारे भद्र मण्डल! आज हमें विचारना चाहिए, कि यह ज्ञान की परिपाटी है। जब मनुष्य को ज्ञान हो जाता है और विवेक हो जाता है, तो उसे संसार की कोई भी इच्छा नहीं रहती, वह पवित्र बन जाता है और संसार से पार हो जाता है।

मुनिवरों! उच्चारण करने का अभिप्राय क्या, बेटा! वार्ता तो यह उच्चारण करने लगे, परन्तु वाक्य हमारा था विष्णु। हम अपनी आत्मा को विष्णु बनाना चाहते हैं, इन सांसारिक शब्दों से उठना चाहते हैं।

इन्द्र-प्रजापति-विदेह



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जे रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जो परमपिता परमात्मा अनन्तमयी विद्यमान है और वह सर्वज्ञ है और वह यज्ञोमयी स्वरूप है। याग उसका आयतन है, उसका सदन है, उसका गृह है इसीलिए हमारे यहाँ परमपिता को यज्ञेश्वर कहा है। क्योंकि वह यज्ञो का अधिपति है और अपने में धारण करने वाला है। तो इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा की महती और अनन्तता के ऊपर सदैव विचार विनिमय करते रहते है। क्योंकि प्रत्येक मानव का यह कर्तव्य है कि वह उस मानवीयतव जो अति मानव है। **अति मानवतव कहा जाता है। उसकी उपासना करना अथवा उसके गुणों का गुणधानम करना, अपने में धारयामि बनाना है। इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा को यज्ञेश्वर कहते है। क्योंकि जितने भी संसार में याग है।** चाहे वह भैतिक याग हो चाहे आध्यात्मिक याग परन्तु सर्वत्र यागों के मूल में वे परमपिता होने से बेटा! उसको यज्ञेश्वर कहा जाता है, जो यज्ञों का स्वामीतव करने वाला है।

तो मुनिवरों! वेद का मन्त्र यह कहता है कि हम उस परमपिता परमात्मा की जो अन्नतमयी सृष्टि है अन्नतमयी जो यज्ञशाला के रूप में यह जगत दृष्टिपात आ रहा है। इसके ऊपर हम सदैव मानो निर्मण सुतं ब्रव्हा मानो उसका चिन्तन करते है और उस चिन्तनमयी जगत को अपने में धारण करते रहे। जिससे यह जीवन पवित्रतम को प्राप्त होता रहे। तो मेरे प्यारे! आज का हमारा वेद मन्त्र, क्या कह रहा है। जहाँ वेदमन्त्र परमात्मा के गुणों का धानम करने की विवेचना दे रहा है। वहीं हमारे यहाँ नाना प्रकार के अलंकारो से यह जगत अथवा वैदिक मन्त्र की अलंकारिता होने से वह सजातीय कहलाता है। क्योंकि जितना भी अलंकार है वह सब सजातीय है। एक शब्द का मानो देखो, यह आभूषण बना हुआ है। तो उस आभूषण को हमें धारयामि बनाना है। जैसे **आज के हमारे वैदिक साहित्य में अथवा वेद के पठन पाठन में इन्द्र का बड़ा वर्णन आ रहा था। हमारे यहाँ अश्वपति का भी वर्णन आता रहता है। तो उस परमपिता परमात्मा का नाम**

इन्द्र कहा जाता है, जो इन्द्रियों का निर्माण करने वाला है। जो इन्द्रियों का धिपति है। उसे इन्द्र कहते है। तो यहं बेटा! जहाँ परमपिता परमात्मा को इन्द्र कहते है। वहाँ इन्द्र राजा को कहा जाता है और उस राजा का नाम इन्द्र कहा जाता है, जो एक सौ एक अश्वमेध याग कर लेता है हमारे यहाँ एक आलांकारिक रूपो में राष्टीयता का निर्माण होता रहा है। मानो जैसे इन्द्र नाम परमपिता का है, जो मुनिवरों! देखो, इन्दो ब्रहे, जो इन्द्रियों का निर्माण करने वाला है उसे इन्द्र कहते है, परन्तु इन्द्र नाम देवता को कहते है जो देता है। इन्द्र कहते जो देवताओ का धिराज है। देवतव को जो अपने में धारण करने वाला है। वह इन्द्र कहा जाता है। जो मानो देखो, जो शचि का स्वामीतव है और वह मानो इन्द्र की प्रतिभा को जानता है। इन्द्र कौन है। बेटा! इन्द्र हमारे यहं वह देवतव है, जो ज्ञान का पुञ्ज कहलाता है। मानो देखो, जो महाराजा प्रजापति से उपदेश ले करके और इन्द्र अपनी मानो गम्भीरता में और मानो देखो, अगाध समुद्र में चला जाता है। तो विचार जैसे महाराजा प्रजापति के यहाँ एक समय बेटा! देखो, मानो दैत्य और इन्द्र देखो, वह विरोचन ब्रह्मे दैत्यो का स्वामी कहलाता है और इन्द्र देवताओं का स्वामी तो दोनों मुनिवरों! तो दोनों मुनिवरों! देखो, अपने विचार विनिमय किया कि प्रजापति के यहाँ से एक घोषणा हुई है और यह घोषणा है कि मैं आत्मा का उपदेश देता हूँ। आत्म मल्याण के लिए देखो, मेरा उपदेश चलता रहता है तो मुनिवरों! देखो, इन्द्र और महाराजा विरोचन, विरोचन दैत्यों का धिराज है ओर देवताओं का इन्द्र है वह इन्द्र मुनिवरों! देखो, प्रजापति के द्वार पर पंहुचे, जिज्ञासु बन करके और उन्होंने अपनी जिज्ञासा प्रगट की और उन्होंने कहा प्रभु हम मानो देखो, मैं इन्द्र हूँ और यह विरोचन है और हम आत्मा के कल्याण के लिए आयें है जिससे हमारा मानवीय कल्याण हो जाए क्योंकि प्रत्येक मानव देखो, कल्याण ही चाहता रहता है दोनों ने एक स्वर में बोले कि महाराजा! सृष्टि जब से प्रारम्भ हुई है मानो प्रत्येक मानव अपने मानवीयतव के सम्बन्ध में विचारता रहता है और इसको गम्भीरता से विचारता विचारता मानो अपने को विवेकी बना लेता है ओर विवेकी बना करके ही वह और भी गम्भीर समुद्र में प्रवेश कर जाता है तो अघातता को जानने लगता है तो हे भगवन! हम यह चाहतें है कि हम सृष्टि के प्रारम्भ से मानव आनन्द के लिए ललाहित रहता है तो प्रभु! हम चाहते हैं कि हमारा आत्म कल्याण हो प्रभु! हमें ऐसा उपदेश दीजीए तो महाराजा प्रजापति ने दोनों को एकान्त मानो देखो, अवस्थित किया और उन्होंने कहा कि शरीर की पूजा करने का नाम ही मानो देखो, अप्रत क्या कल्याण कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, जब शरीर के कल्याण की सजातीय की वार्ता आयी तो बेटा! इन्द्र और महाराजा विरोचन तो जा करके दैत्यो से कहा क्या शरीर के पालन पोषण करने में ही लगे रहो। मानो देखो, वही प्रजापति ने कल्याण का एक मार्ग कहा है। परन्तु प्रजापति ने विचारा एक वृक्ष के नीचे विद्यमान हो गएं और इन्द्र ने यह विचारा की शरीर के पालन पोषण या इसकी पूजा करने का नाम तो मानो देखो, वास्तविक पूजा नहीं है। इसको हम जितना सजातीय बनाते है। जितना मानो देखो, कृत करते है। इसका अन्तिम चरण यहीं रह जाता है। इस शरीर के पालन पोषण करने से हमारा आत्म कल्याण नही होगा, महाराजा इन्द्र ने अपने में विचारा क्या आत्मा कल्याण तो और ही रहस्यतम विषय है। इसके ऊपर चिन्तन

किया जाए। तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने विचारा शरीर को हम प्रत्येक इन्द्रियों की इच्छा हम पूरी करते रहे, मन की इच्छाए पूर्ण करते रहे। वह शरीराणां ब्रह्मा नाना प्रकार की विलासिता में लगे रहे। तो मानो इसका नाम आत्म कल्याण नही होता। आत्म कल्याण का तो कोई और मार्ग है। मानो हम प्रातः काल से सांय काल तक अपने उदर की पूर्ति में लगे रहे। तो इससे हमारा आत्म कल्याण नहीं होगा इससे हमें यह दृष्टिपात आ रहा है कि आत्म कल्याण कोई और ही वस्तु है। तो मेरे प्यारे! देखो, जब महाराजा इन्द्र इस प्रकार की कल्पना करने लगे, उन्होंने बेटा! देखो, वहाँ से गमन किया और प्रजापति के समीप पहुंचे प्रजापति ने कहा कहो इन्द्र उन्होंने कहा प्रभु! हम इसीलिए आए है कि शरीर का पालन पोषण करना तो कल्याण का मार्ग नही है। हे प्रभु! यह तो प्राणं ब्रह्मणे कृता यह तो भोगतव्य है। देखो, भोगा स्वतः प्रव्हा यह मानो दो प्रकार की प्रवृत्ति है। यह प्राण उसका क्रियाकलापों में लाता रहता है। हे प्रभु! हम यह जानना चाहते है। क्या शरीर देखो, आत्म कल्याण का तो मार्ग ही नही है। उन्होंने कहा जाओ हे इन्द्र! इन इन्द्रियों का पालन पोषण करना ही मानो देखो, मन की इच्छा पूर्ण करना ही आत्म कल्याण है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने वहाँ से गमन किया और वट वृक्ष के नीचे विद्यमान हो गये। उन्होंने कहा कि शरीर को जानना और देखो, मन की प्रतिभा को जानना इससे मानव का, हमारा आत्म कल्याण नही होगा। इन्द्रियों की यदि हम इच्छा पूर्ण करते रहे, मन से तरंगे आती है। देखो, इन्द्रियाँ उनको भागने लगती है। तो मानो देखो, यह तो संसार बन गया है। इस संसार को जानना यदि प्रजापति ने कल्याण का मार्ग कहा है। तो यह तो यह तो हमारा संसार है। मानो देखो, हम इन्द्रियों के ऊपर संयम ब्रहा न करते इन्द्रियों से को संसार को जानते रहे मनस्तव से ही इस संसार को जानने के लिए इन्द्रियों को आज्ञा दे तो मानो एक समय वह आएगा कि इन्द्रियों को जानते जानते एक समय इन्द्रियाँ सीमा बद्ध हो जाती है। इन्द्रियों का विषय सीमा बद्ध हो गया है। तो इससे हमारा आत्म कल्याण नही होगा मानो देखो, प्रजापति ने और जो उपदेश दिया है। वह हमारे विचार में नही आ रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि आत्म कल्याण कोई और वस्तु है और आत्मा के कल्याण के लिए हमें कोई प्रयत्न करना चाहिए

मेरे प्यारे! देखो, महाराजा इन्द्र ने यह प्रार्थना की कि विचारने लगे कि यह संसार को जानना या मानो देखो, प्रमणं ब्रहे इन्द्रियों और मन को जानने से ही हमारा कल्याण नही होगा यह तो देखो, मानो तत्त्वों का विषय है। आज हम नेत्रों से अग्नि को जान सकते है। देखो, श्रोत्रों से दिशाओ को जान सकते है। परन्तु देखो, त्वचा से हम वायु को जान सकते है। हम मानो देखो, गुरूतव से पृथ्वी को जान सकते है। हम मानो देखो, अप्रतां देवत्वां घ्राण से हम मन्द सुगन्ध को जान सकते हैं परन्तु देखो, इससे हमारा आत्म कल्याण नही होगा, यह आत्मा का विषय नही है। यह तो मानो देखो, संसार है इस संसार को जानना ही हमारा आत्म कल्याण नही है। मेरे प्यारे! देखो, वहाँ से उन्होंने से गमन किया, और भ्रमण करते महाराजा प्रजापति के द्वार पर पहुंचे, प्रजापति ने कहा कहो इन्द्र! तुम्हारा कैसे आगमन हुआ है। उन्होंने कहा प्रभु! हम आत्म कल्याण के लिए तुम्हारे समीप आए है। हम आत्म कल्याण के लिए हम मानो देखो, आप से

प्रार्थना कर रहे है। हे प्रभु! इन्द्रियों से जानने वाला यह जगत है और मानो देखो, अपने में वृत्तम अपने इस शरीर को सजातीय बनाना यह शरीर कहलाता है। तो हम संसार की जानकारी आप ने कहा था कि यह संसार ही ब्रह्म है। यह ब्रह्म मुझे दृष्टिपात नही आ रहा है। ब्रह्म तो इसका आयतन है। मानो ब्रह्म का तो यह गृह है। और जो ब्रह्म का गृह और सदन होता है। वह मानो देखो, उससे आत्म कल्याण नही होता तो उससे वास कर रहा है।

मेरे प्यारे! महाराजा इन्द्र ने जब ऐसा कहा तो प्रजापति ने कहा है। इन्द्रो समं ब्रह्मणा व्रतम् मानो यदि तुम आत्म कल्याण चाहते हो तो मङ्गलम ब्रहे व्रत्यम देखो, तुमने इस शरीर को जाना है। इन्द्रियों को जाना है। परन्तु देखो, तुम व्रव्हे असुतम इस विश्व को जानने का प्रयास करो। जिस विश्व में परमपिता परमात्मा वास करता है। मेरे प्यारे! देखो, महाराजा इन्द्र ने वहाँ से प्रस्थान किया और इन्द्र ने विचारा कि यह जो विश्व है। यह तो परमपिता परमात्मा का आयतन है। जैसा मैंने पूर्व भी कहा है। मानो देखो, इन्द्र बनना चाहता है। तो राजा बन सकता है। राजा बन करके अश्वमेध याग करता है और अश्वमेध याग करने वाला इन्द्र कहलाता है, जो एक सौ एक अश्वमेध याग कर लेता है। वह अश्वमेध जो याग है। वह मानो प्रत्येक राजा को प्रसन्न करना है। प्रत्येक राष्ट्रयीता को जानना है और अपने में ऐसे नियम बनना है। जिससे द्वितीय राष्ट्र उन नियमों को अपना करके और वह मानो देखो, उसके प्रति, उसमें नम्रता आ जाए, एकोकीकरण हो जाए तो उसको मानो देखो, वह अश्वमेध याग कहा जाता है। यह भी इन्द्र नही है। यह भी प्रजापति ने परन्तु इन्द्र को उपाधि को प्राप्त कर सकते है।

मेरे प्यारे! इन्द्र ने विचारा क्या पह प्रजापति ब्रह्मणा व्रतम् देखो, विश्व है। उसमे मानो देखो, इन्द्र नाम हमारे यहाँ पर्यायवाची शब्दों में विद्युत को कहा गया है, जो दक्षिणाय में रहने वाली है। वह दक्षिणायन कहलाती है। मानो देखो, वह विद्युत ही हमारे यहाँ इन्द्र कहते है और देखो, विद्युतां ब्रह्मणे और मुनिवरों! देखो, जो मेघो को छिन्न भिन्न कर देती है और मेघ मण्डलों छिन्न भिन्न करके धीमी वृष्टि भी करा देती है। उससे व्यञ्जनो का जन्म होता है। यह संसार मानो एक दूसरे की आभा में निहित हो जाता है। इससे यह दृष्टिपात हुआ, क्या यह भी इन्द्र नही है मानो देखो, अप्रतम यह भी आत्म कल्याण का मार्ग नही है। **इन्द्र बन सकते है। धिराजों के धिराज बन सकते हैं परन्तु देखो, आत्म वेत्ताओ के ऊपर आत्मवेत्ता नही बन सकते।**

मेरे प्यारे! देखो, उस समय यह विचार विनिमय करते हुए, प्रजापति के द्वार पर पहुंचे और प्रजापति ने कहा कहो इन्द्र उन्होंने कहा प्रभु! मुझे यह विश्वात्मा दृष्टिपात नही रहा है। यह विश्व तो विचार है। कर्म है। मानो देखो, वृत्तियाँ कहलाती है। हे प्रभु! मैं आत्म कल्याण के लिए आया हूँ। उन्होंने कहा है हे इन्द्र! अब तुम्हारे मानो देखो, तीस तीस वर्ष तक तुमने तपस्या की है तुम पांच वर्ष तब और तपस्या करो मानो देखो, उसके पश्चात मैं तुम्हें इसका उपदेश दूंगा। मेरे प्यारे! पांच वर्ष के पश्चात, वह इन्द्र प्रजापति के द्वार पर पुनः पहुंचे, और उन्होंने कहा इन्द्र! तुम विराजो मानो मैं तुम्हें आत्मा का उपदेश दूंगा। जिससे आत्म कल्याण होगा उन्होंने कहा भगवन! अब मुझे आत्म कल्याण के लिए उद्गीत गाईए। उन्होंने कहा कि यह

तो मानो तुमने विश्व जाना है। शरीर को जाना है। मानो देखो, इन सबका एक साकल्य बनाओ, इनका सब साकल्य बना करके और वह जो तुम्हारे हृदय में एक याग रूपी अग्नि जागरुक हो रही है। वह जो तुम्हारे अन्तर्हृदय में एक ज्ञान रूपी अग्नि जागरुक हो रही है। उस अग्नि में मानो देखो, उन सबको आहुतियां प्रदान करो। जब तुम इसमें याग कर जाओगे, इसे आत्म याग कहते है इसे बह्म याग कहते है। मानो देखो, प्रत्येक इन्द्रियों का विषय जैसे देखो, चक्षुओं का जो स्वरूप है। वह उसका जो रूप है। सूक्ष्म वह रूप कहलाता है और मानो देखो, श्रोत्रों इन्द्रियों का तो विषय है। वह शब्द कहलाता है। मुनिवरों! देखो, इसके दूसरे रूप में यह भी कहा जा सकता है कि दिशाए और अग्नि भी कहीं जा सकता है। परन्तु देखो, घ्राण इन्द्रियों का जो विषय है। वह मन्द सुगन्ध कहलाता है और देखो, त्वचा का जो विषय है। वह अमृतां ब्रह्मणे लोकाम् वह मङ्गल ग्रतम् मानो देखो, वह अप्रता कहलाता है। इस तरह अग्नि देवत्वां देखो, यह देवतव कहलाता है। मानो देखो, स्पर्श उसका श्रौत्रीय अस्तित्व गुण कहा जाता है। रसनाओं का विषय है। रस लेना मानो देखो, नाना प्रकार के विषयो को त्याग करके, इनका एक साकल्य बनाओ और साकल्य बना करके वह जो हृदय रूपी यज्ञयाला में जो अग्नि जागरुक हो रही है। मानो देखो, उस अग्नि में तुम आहुति प्रदान करो, उसे ब्रह्माग्नि कहते है और ब्रह्माग्नि में जो प्रवेश हो जाता है। वह ब्रह्म की प्रतिभा को जानने के लिए तत्पर हो जाता है।

मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि ने अपना उपदेश दिया, ऋषि की आभा मानो देखो, प्रजापति महान कहलाते है। इन्द्र ने बेटा! वह स्वीकार किया, उन्होंने कहा हे इन्द्र! संसार में मानो तुम देवताओं के स्वामी हो और देवतव को प्राप्त होते रहते हो देवता वही कहलाता है, जो देवताओ के देवतव को प्राप्त हो जाता है, जो प्रत्येक इन्द्रियों को देवता बना लेते है और देवत्तव बना करके मानो उसमे स्वाहा उच्चारण कर देता है। मेरे प्यारे! देखो, प्रजापति ने जब यह उपदेश दिया, इन्द्र बड़े प्रसन्न हुए और इन्द्र ने कहा धन्य है प्रभु! आप ने मुझे आत्म कल्याण का एक मार्ग उद्गीत रूप में गाया है। प्रजापति ने कहा हे इन्द्र! देखो, इसके चौबीस खम्बे कहलाते है। देखो, चौबीस खम्बे है। देखो, दस प्राण, दस इन्द्रियां मानो देखो, पांच इन्द्रियाँ आती है और पञ्च तन्मात्राओं का वर्णन आता है और मन, बुद्धि चित्त अहङ्कार यह चतुष अन्तःकरण बन करके मानो देखो, यह खम्बे कहलाते है। इस ब्रह्माण्ड के भी यही खम्बे है और मानव शरीर के भी यही खम्बे कहलाते है। मानो यह स्तम्भ कहलाते है इनको जानना मानो देखो, विश्व को जानना है और विश्व को मानो देखो, खम्बों सहित जान करके उसमें वास करना है और उसे भी त्याग करके जब यह विचारता है कि इसका जो नियमन कर रहा है, जो इसमें रत्त हो रहा है। वही ब्रह्म है। उस ब्रह्म की आभा को जानने के लिए वह मौन हो जाता है। परमात्मा, की प्रतिभा में रत्त हो जाता है तो मानो देखो, वह आभा को प्राप्त कर लेता है। ब्रह्मणे! हे इन्द्र! यह जो आत्मा है। मानो यह चेतना में ही रत्त रहने वाला है। आत्म स्वरूप बनना तुम्हारे लिए अनिवार्य है और एक एक कण कण में मानो ब्रह्म की प्रतिभा को दृष्टिपात करना, एक एक मानो देखो, हृदय को अपना हृदयग्राही स्वीकार करना उसी में विज्ञान को दृष्टिपात करना है। जैसे

परमाणु में ब्रह्माण्ड है, ब्रह्माण्ड में परमाणु है एक एक तरंग में मानव का चित्र है और चित्रों में देखो, तरंगे इसी प्रकार देखो, अग्नि की धाराओं पर शब्द है और शब्द अग्नि की धाराओं पर विद्यमान है और वही शब्द मानो द्यौ में है और द्यौ ही विश्व में है। विश्व मुनिवरों! देखो, यह परमपिता परमात्मा की प्रतिभा कहलाती है। मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार का उपदेश महाराजा प्रजापति ने इन्द्र को दिया तो बेटा! देखो, नतमस्तिष्क हो गये, और उन्होंने कहा धन्य है। प्रभु! आप ने मुझे मेरे कल्याण को एक मार्ग वर्णन किया है। प्रभु! इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ और मैं देवताओं को यह उपदेश दूंगा। भगवन! मेरे प्यारे! देखो, महाराजा इन्द्र उपदेश ले करके और ब्रह्म की आभा में रत्त हो करके वहाँ से वह गमन करते है और भ्रमण करते क्या उपदेश ले करके आए हो उन्होंने मेरे पुत्रों! ब्रह्मा का उपदेश दिए कि जो प्रजापति ने मुझे दिया है। मानो **यह जो शरीर है, यह विश्व भी ब्रह्म नही है। बह्म वह है, जो इसमे समाहित हो रहा है। मानो जो इसमे वास कर रहा है। इसकी उपासना करो यही आत्म कल्याण के लिए मानो एक विचित्र मार्ग है।** मेरे प्यारे! देखो, सब प्रजापति अपने में वृत्तियों में बेटा! रत्त हो गएं हमारे यहाँ एक इन्द्र तो वह है, जो देवताओ का स्वामीतव करने वाला है, जो प्राणेश्वर कहलाता है। मानो एक वह इन्द्र कहलाता है, जो देवताओ को सजातीय बनाता है वह उपदेश देता है। एक इन्द्र वह होता है, जो राजा अश्वमेध याग करके, अपनी इन्द्र की उपाधि से अलंकृत हो रहा है, उसे मुनिवरों! देखो, इन्द्र कहते हैं जो राजाओ का भी धिराज है। यह लौकिकता में उसका वर्णन आता रहता है। **इसी प्रकार एक इन्द्र आत्मा है, जो इन्द्रियों का स्वामितव करने वाला है।** इन्द्रियों को जो गति अप्रता में कृतिया में रत्त करने वाला है। वह भी इन्द्र है। मेरे पुत्रों! देखो, विरोचन प्रवृत्ति के वह प्राणी है, जो शरीर के पालन पोषण में लगे हुए है, जो मानो देखो, न तो ब्रह्म का चिन्तन करते है। न मनन करते है। न उसकी सृष्टि को निहारते है और न उसका धन्यवाद और न देखो, उसकी प्रतिष्ठा और उसकी महानता का वर्णन करते है। बेटा! वह विरोचन प्रवृत्ति के कहलाते है और जो इनका वर्णन करता है। इनकी गम्भीर मुद्रा में मुद्रित होता है। वह देवतव को प्राप्त हो जाता है। तो आओ मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या चल रहा था। विचार यह क्या इन्द्र कौन है। बेटा! एक इन्द्र आत्मा है एक इन्द्र मानो शचि देखो, हमारे यहाँ विद्युत को भी जो पितरों का स्थान है वह हमारे यहाँ बेटा! दक्षिणायन में होता है जो मानो देखो, विद्युत के आसारित उसमे अत्रूत कहलाता है। तो मानो देखो, वही इन्द्र कहलाता है, जो दिशाओ का स्वामितव करने वाला है और इन्द्र अपनी पत्नी शचि को जानता है। बेटा! इन्द्र नाम वायु का है और इस वायु में तरंगे गमन करती रहती है। इसी में बेटा! देखो, शचि अमृतां देवत्वां मानो देखो, विद्युत गमन करती रहती है और गमन करके मुनिवरों! देखो, वह अपनें में अपनेपन को विचारता रहता है और अपने में धारयामि बना करके सागर से पार हा जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, मैं कोई विशेष विवेचना देने नही आया मैं व्याख्याता नही हूँ मैं मानो देखो, **उस परमपिता परमात्मा की महती को सदैव जानने के लिए और उसका निर्णय केवल यह कि हम आत्मवेत्ता बन करके और मुनिवरों! देखो, इन्द्राणं ब्रहे अकृतियो को प्राप्त करते रहे।** बेटा! एक इन्द्र यह कहलाता है। एक इन्द्र वह होता है, जो अहिल्या का

पति कहलाता है। अहिल्या का पति मानो देखो, गौतम कहलाता है और जो रात्रि को अपने गर्भ में धारण करता है। दिवस के रूप में परणित हो जाता है। बेटा! उसका नाम इन्द्र कहलाता है। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में नाना प्रकार के अलंकारो को अलंकृत करते हुए मुनिवरों! देखो, किसी वस्तु का निर्णय देने के लिए बेटा! उसका स्पष्टीकरण होता रहता है विचार क्या मुनिवरों! देखो, गौतम रात्रि का स्वामित्व करने वाला है और मुनिवरों! देखो, इन्द्र अपने अन्धकार में धारण करता है। वह नाना प्रकार की किरणों के द्वारा भगों के द्वारा वह मुनिवरों! देखो, रात्रि को अपने में गर्भ में धारण कर लेते है।

तो विचार आता रहता है। क्या उसको धारयामि बनना है बेटा! देखो, यहो अलंकारो को अलंकृत करने वाले सुशोभित में परणित होते रहते है। जैसे बेटा! देखो, हमारे यहाँ वत्रासुर का वर्णन आता रहता है वत्रासुर का वर्णन है क्योंकि वत्रासुर हमारे यहाँ मेघ मण्डलों को कहते है। क्योंकि वत्रासुर इन्द्र का संग्राम होता है। इन्द्र कहते है वायु को और वत्रासुर कहते है बेटा! मेघ मण्डलो को, जब दोनों का संग्राम होता है। तो वह इन्द्र मुनिवरों! देखो, अपनी शचि अपनी देवी से आज्ञा पा करके मेरे प्यारे! देखो, वह आक्रमण पर आक्रमण करता है और आक्रमण करके मुनिवरों! मेघ मण्डलो को वत्रासुर को मेघ मण्डलो को छिन्न भिन्न कर देते है। मेरे प्यारे! देखो, यह सब अलंकारिता है। हमारे आज के वैदिक साहित्य में आ रही थी, वेद मन्त्रों में इस प्रकार के अलंकारिक शब्दों को मेरे प्यारे! देखो, इतिहास, साहित्य से या इतिहास से इसका काई समन्वय नही है। केवल यह तो आलंकारिकता से, प्रत्येक वेदमन्त्र के भाव को बेटा! सजातीय बनाया है और वह सजातीय क्या है? क्योंकि अहिल्या रात्रि है, और देखो, चन्द्रमा गौतम है, जो इसके अन्धकार रूपी मानो अन्धकार रूपी श्रृङ्गार को यह भोगतव्य में लाता रहता है। मेरे पुत्रों! इसे भोगता रहता है। परन्तु जब प्रातः काल आता है। तो वह देखो, इन्द्र सूर्य कहलाता है, जो नाना प्रकार की किरणों से बेटा! इसको अपने में, अपने गर्भ में धारण करके दिवस आ जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, दिवस में प्रत्येक प्राणी अपने क्रियाकलापों में परणित हो जाता है वही क्रियाकलाप मेरे पुत्रों! देखो, महानता में गमन करते रहते है।

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष तुम्हें चर्चा प्रगट करने नही आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ। क्या प्रत्येक वेद मन्त्रों के भाव को, सजातीयता बनाने में अलंकारिकता की आवश्यकता ऋषि मुनियों, एक एक अलंकार लिया, अलंकार बेटा! ऐसा जैसा आभूषण होता है। उसी आभूषण से, यह सजातीय श्रृंगारित हो करके, वही शब्द मेरे प्यारे! देखो, हो ऊर्ध्वा में गमन करते रहते है। आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष चर्चा प्रगट करने तुम्हें नही आया हूँ। विचार यह देने के लिए कि हमारा जीवन एक अलंकारों से अलंकृत होता हुआ मुनिवरों! देखो, यहाँ **प्रजापति नाम राजा को कहते है। उसका भी एक श्रृङ्गार है उसका भी एक अलंकारिक रूपो से श्रृंगारित करते रहते है प्रजापति उसे कहते है, जो मानो देखो, प्रजा को विजय करने वाला हो, प्रजाओ के अन्तर्हृदयो को जो विजय करने वाला हो, उसे प्रजापति कहते है।** हमारे यहाँ राजा का नाम प्रजापति है। बेटा! देखो, जिसके मानो प्रजा में एक सहानूभूति हो जाए, प्रजा में एक महानता का गमन

होता रहे। परन्तु वह राष्ट्र की राजा की निन्दा करने वाला न हो, समाज वह समाज मानो देखो, राजा के प्रति सहानुभूति हो और उसके क्रियाकलापों का मानो प्रजा अपनाने वाली हो, तो वह प्रजापति बन करके वही मेरे प्यारे! देखो, प्रजापति बन करके अपनी आभा में परणित हो जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! यहाँ प्रत्येक मानव देखो, अपने में जनवृत्ति कहलाना है। हमारे यहाँ यह समाज अलंकारो से अलंकृत रहा है, वेद के पठन पाठन करने वाला उनमें यागों की प्रतिभा का नृत्त किया जाता है। परन्तु देखो, इसी प्रकार हमारे यहाँ, जनक उपाधि प्रदान की गई है। यह जनक भी अलंकारों से अलंकृत रहा है। जहाँ बेटा! देखो, ब्रह्मवेत्ताओ का समूह हो, और जनक मानो देखो, विदेह कहलाता है। वह मुनिवरों! देखो, राष्ट्र में विद्यमान है। निर्माणित कर रहा है। परन्तु देखो, वह राष्ट्र का राष्ट्र में गमन कर रहा है। राष्ट्र को उन्नत बना रहा है। परन्तु वह लिपायमान नहीं हो रहा है। वह अपने मानो देखो, ब्रह्मव्रताओं के समीप वह ज्ञान और विज्ञान से विवेक को प्राप्त करता रहता है और जब वह विवेक को मानो देखो, इस समाज से लिपायमान नही होता क्रियाकलापों में परणित हो रहा है। परन्तु लिपायमान नही हो रहा है। उसका हमारे जनक कहा जाता है। जिसको विदेह कहा जाता है। **विदेह का अभिप्राय यह है** मानो देखो, कर्म कर रहा है। परन्तु वह उसमे लिपायमान नही हो रहा है। उसमे कृतिका को प्राप्त नही कर रहा है। मेरे प्यारे! ब्रह्मवेत्ताओं से उपदेश ले रहा है। जैसे मुनिवरों! देखो, उन्होंने अष्टावक्र से ब्रह्म का उपदेश लिया और उन्होंने कहा जब तक मैं देखो, अश्व के ऊपर असवार हूँ। **तब तक मुझे ब्रह्म ज्ञान हो जाना चाहिए।** मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने इससे पूर्व अष्टावक्र ने यह कहा क्या मुझे दक्षिणा दो। उन्होंने दक्षिणा प्रदान कर दी, हमारे यहां दक्षिणा का अभिप्राय यह है। क्या त्रूटियों को समर्पित करने का नाम दक्षिणा है। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा तुम गुरु को दक्षिणा दो, उन्होंने कहा भगवन! जो इच्छा है प्रगट करो उन्होंने कहा तन, मन, धन मुझे प्रदान करो उन्होंने कहा बेटा! तथास्तु कहा। परन्तु जब वह अश्व पर जाने लगे, उन्होंने कहा यही शान्त हो जाओ, तुम किस की आज्ञा से जा रहे हो, उन्होंने कहा प्रभु! मैं किसी की आज्ञा से नही जा रहा हूँ। जब मन तुमने मुझे प्रदान कर दिया तो मन ही तो क्रीड़ा कराने वाला है। उन्होंने कहा यह सब प्रदान कर दिया मेरे प्यारे! देखो, धन है। मानो अश्व राष्ट्र का धन है। मुझे प्रदान कर दिया तुमने, किसको धन मान रहे हो। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा मन, वचन, अप्रह्वे। **यह मन, कर्म, वचन बेटा! देखो, राष्ट्र और द्रव्य देखो, राजा जनक मौन हो गये, उन्होंने कहा यह तन भी मेरा वाणी भी उच्चारण कर सकते हो।**

तो मेरे प्यारे! विचार यह, क्या जो महापुरुष कहता है। उसकी आज्ञा का पालन करते रहो और मानो देखो, वह उसकी आज्ञा में ब्रह्मनिष्ठ हो जाओ। मेरे प्यारे! देखो, इन्द्रियाँ कार्य नहीं कर पाती अपनी स्वतः इच्छा जब नही रहती तो वह आज्ञा नही रहती तो मानो देखो, वह संसार की सम्पदा बन जाती हे प्रभु! की सम्पदा बन जाती है। उसमें अपनापन नही रहता बेटा! देखो, वही विदेह कहलाता है। मेरे पुत्रों! देखो, राजा जनक, अपने में विदेह बन गये। तो विचार आता रहता है। बेटा! मानवीयतव अपने में, अपनेपन को प्राप्त करता रहे। यही बेटा! देखो, ब्रह्म जानाति सम्भव ब्रहे। यह ज्ञान कहलाता है। विवेक कहलाता है। इस

प्रतिभा में बेटा! प्रातःकालीन ब्रह्म का चिन्तन मानवीयतम देवयज्ञ देवतव बन जाना यह हमारा कर्तव्य है। यह है। बेटा! आज का वाक्, अब समय मिलेगा तो बेटा! मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करुंगा आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती उसकी अनन्तता के ऊपर विचार विनिमय, करना बेटा! यह हमारा कर्तव्य है। अपने अन्तर्हृदय में, जिसमें सर्वत्र ब्रह्मण्ड समाहित रहता है। हृदय का हृदय में ही तो साकल्य प्रदान किया जाता है। मेरे प्यारे! देखो, यह आज का विचार, कि हम परमपिता परमात्मा जो सर्वज्ञ है। जिसमे इसका स्वामितव है। वह मानो देखो, हमारे अन्तर्हृदयों में विद्यमान है। उसको जानना हमारा कर्तव्य है, यह है। बेटा! आज का वाक अब समय मिलेगा तुम्हें शेष चर्चाए कल प्रगट करुंगा। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं मां गायन्त्वा रथं आ पा रेवाः ओ३म् जनि पृताहं रथं आ पा रेवं आभ्यां मना अच्छा भगवन्! आज्ञा।

इन्द्र वत्रासुर का संग्राम



मानो देखो, उसमें हिरण का नाम हमारे यहाँ आया है हिरणं ब्रह्मः मानो देखो, जब हिरण का नाम आया तो यह आया कि यागां ब्रह्मे: मेरे पुत्रो! इसका अभिप्राय यह हुआ कि याग को काला हिरण ले गया और जब कालिमा का हिरण ले गया तो मानो देखो, बड़ी दुविधा हुई कि यागां ब्रह्मे व्रतम् मुनिवरों! देखो, जब उनका संधर्ष हुआ तो हिरण ने वही याग मानो देखो, वत्रासुर को प्रदान कर दिया। वह वत्रासुर में प्रवेश कर गया। याग वत्रासुर में चला गया। और जब वत्रासुर ने मानो याग को अपने में संग्रहित कर लिया तो उसी समय इन्द्र को यह प्रतीत हुआ कि देखो, याग को काले हिरण ने वत्रासुर को प्रदान कर दिया। तो मेरे पुत्रो! ऐसा वेद मन्त्रों में आया है कि मानो देखो, उन दोनों का संघर्ष हुआ, उन दोनों का भयंकर संग्राम होने लगा। इन्द्र का और वत्रासुर का।

तो मुनिवरों! देखो, वह संग्राम होता रहा। संग्राम होते, होते मेरे प्यारे! इन्द्र ने वत्रासुर ये मानो देखो, अपने वज्र का प्रहार किया। इन्द्र ने जब वज्र का प्रहार किया तो मुनिवरों! देखो, वत्रासुर छिन्न भिन्न हो गए और मुनिवरों! उन्होंने वृष्टि की और वृष्टि करने के पश्चात तो यहाँ एक वेदमन्त्र और आया है। गो व्रणं ब्रह्मे वृखं ब्रहा वाचन्नमं मृत्यु भ्रो मानो वही व्रभो सम्भव प्रति लोकाम् मेरे प्यारे! यहाँ देखो, वेद की एक ओर आख्यायिका आई कि देखो, जब वत्रासुर का छिन्न भिन्न होना, वृष्टि हो गई जब मानो देखो, वृष्टि प्रारम्भ हो गई, तो वृष्टि के प्रारम्भ होते ही, वह कहते हैं कि गो का बछड़ा जो वृख है मानो देखो, उसकी बलि होने लगी। जब उसकी बलि होने लगी तो मेरे प्यारे! देखो, यहाँ वृख की बलि का वर्णन आया।

हमारे वैदिक साहित्यों में मानो बलि का अभिप्राय केवल देखो, शरीर को नष्ट करना नहीं है। बलि का अर्थ यह नहीं है, कि हम प्राणी को नष्ट करने लगे। बलि का अर्थ यह है जैसे माता अपने पुत्र के लिए मानो देखो, सर्वत्र न्यौछावर कर देती है तो वह माता भी बलि कही जाती है क्योंकि माता अपने पुत्र को बलि प्रदान कर देती है। अपना सूत्र दे देती है, मानो देखो, अपने विचार और बाल्य के विचारों में एक महानता का प्रकर्षण करती है तो मानो देखो, वह अपने जीवन की बालक को बलि प्रदान कर देती है।

इसी प्रकार मेरे पुत्रो! देखो, यह जो वृख है, गो का बछड़ा है जब वृष्टि होती है तो पृथ्वी को क्षुधा लगती है कि मैं अपने में समाहित हो जाऊँ। तो मुनिवरों! देखो, यह पृथ्वी अपने में अपने पन को लेकर के समाहित हो जाती है। बड़े विचित्र वाक है बेटा! कि मानो देखो, अपने विचारों में अपने में ही समाहित होना है। समाहित होने का अभिप्राय यह है कि मानो देखो, जब पृथ्वी को क्षुधा लगती है तो देखो, वह बीज की स्थापना की क्षुधा लगती है। वही क्षुधा मानो देखो, गो का बछड़ा पूर्ण करता है। पृथ्वी की चमडी को उधेड़ता है उसके गर्भ में बीज की स्थापना हो जाती है और भी नाना प्रकार के खाद्य और खनिज पदार्थों की उत्पत्ति हो जाती है।

मेरे प्यारे! देखो, पृथ्वी के गर्भ में क्या नहीं है बेटा! मानो देखो, कहीं पृथ्वी के गर्भ में कहीं स्वर्ण है, कहीं रत्नों की धातु का निर्माण हो रहा है। मानो देखो, कहीं जल को शक्तिशाली बनाकर के, मानो वाहनों में क्रिया, वाहनों में गतियों का सञ्चार हो रहा है। वहीं माता के गर्भ में बेटा! नाना प्रकार के खाद्य और खनिज पदार्थ है। उसको वह मानव विज्ञानवेत्ता अपने में ग्रहण करते रहते हैं, राष्ट्र का सञ्चार होता रहता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा कि हे प्रभु! मैं यह जान पाया हूँ, मेरा हृदय मानो इस अन्तिम निर्णय पर पहुँच गया है, अन्तिम चरण में चला गया हूँ कि मानो देखो, ये वृख नाम देखो, गो के बछड़े का है। बलि का अभिप्राय यही है, बलि का अर्थ है पुरुषार्थ करना, बलि का अर्थ है मानो देखो, अपने प्राण और मन को संलग्न करते हुए एक सूत्र में पिरोकर मानो अपने कर्तव्य के पालन का नाम हमारे यहाँ बलि प्रथा मानी गई है। मेरे प्यारे! ये परम्परागतों से है तो आज मैं नवीन बात प्रगट करने नहीं आया हूँ। वेद मन्त्रों में अनन्य समय में बेटा! बलियों का वर्णन है। परन्तु बलि का, अभिप्राय केवल प्राणी को नष्ट करना नहीं है। जैसा मेरे पुत्र महानन्द जी ने मुझे कई कालों में प्रकट कराया कि प्राणी प्राणी का भक्षण करना ही मानो आधुनिक काल में बलि कहलाती है। बलि का अभिप्राय यह होता है कि मानो देखो, पुरुषार्थ और अपने जीवन को दूसरों के जीवन के लिए मानो जो क्रियात्मक क्रियाकलापों में परणित होता है, वह मानो देखो, बलि कर रहा है।

तो मेरे पुत्रो! देखो, विचार विनिमय क्या, किसी भी मानव के द्वारा मानव के रक्तपान करने का या रक्त को ग्रहण करने का हमें अधिकार नहीं होता। विचार केवल यह है कि मानो देखो, बलि का अभिप्राय है पुरुषार्थ। बलि का अभिप्राय एक दूसरे में समाहित होना है। तो मेरे पुत्रो! देखो, संसार के सम्बंध में जब विचारने लगोगे तो यह संसार एक बलि के रूप में दृष्टिपात आने लगेगा।

गंगा अवतरण



श्रङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

शिव के नाना पर्यायवाची अर्थ होते हैं। परमात्मा को भी है वहीं शिव आत्मा को भी कहा जाता है शिव संकल्प धारण करता है और शिव का पुजारी बनता है, आत्मा अपने प्रभु शिव को पाकर शिव कहलाता है। जिस प्रकार राजा अपनी अपनी प्रजा को ऊँचा बनाने से शिव कहलाता है, ऐसे ही उस प्रभु की गोद में जाने से यह आत्मा शिव कहलाता है। एक शिव और द्वितीय महाशिव होता है। यह आत्मा महाशिव नहीं होता शिव कहलाता है। शिव नाम की नाना प्रकार की औषधियों हैं परन्तु यहाँ शिव नाम केवल पर्वतों का उच्चारण करने में किसी प्रकार का दोषारोपण नहीं होगा क्योकि शिव नाम पर्वतों का कहा गया है। इसी प्रकार महाराजा शिव हम पर्वतों को भी कहते हैं, क्योंकि "गौमुखम् ब्रह्मे" पर्वत में जो ऊपर का भाग होता है उसको जटावासी कहते हैं। "जटाओं में रहने वाला ऊपरी भाग से जो दृष्टिपात आ रहा हो उसी को हमारे यहां जटावासी शिव कहा जाता है।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने कई काल में मुझे का "गंगा घृतं ब्रह्मे जल प्रभे कृतानम्"। यह गंगा है। यह महान की जटाओं में रमण करने वाली है। महाराजा सुखमंजस जो सगर के पुत्र थे। जब कपिल ने राजा सगर के साठ हजार मृत्यु के मुखारविन्द में अर्पित कर दिया। तो महाराजा सुखमंजस कपिल मुनि के आश्रम में प्रविष्ठ हुए और महर्षि कपिल जी से कि महाराज! मेरे इस परिवार का कैसे उद्धार होगा? क्योंकि लिए एक बड़ा कलंक है क्योंकि मेरे साठ हजार विधाता मृत्यु के मुखारविन्द मे चले गये। महाराजा कपिल ने कहा, हे राजपुत्र! तुम बड़े नम्र और उदार हो "ब्रह्मे कृतमं प्रभ, 'समया: ब्रह्मे अश्वतम" काल के पश्चात महाराजा भागीरथ के द्वारा गंगा का अवतरण होगा। जब महात्मा कपिल जी ने ऐसा कहा तो महाराजा सुखमंजस अपने राज्य स्थल को आ गये। महाराजा सगर ने कहा कि कहो सुखमंजस जी! क्या रहा? उन्होंने कहा कि प्रभु! वह साठ हजार सैनिक तो मृत्यु के मुखारविन्द में प्रविष्ट हो गये हैं। कपिल जी ने कहा है कि महात्माओं की अनुपमता विचारणीय होती है। महाराज सगर ने कहा, अच्छा कुछ समय पश्चात उसी प्रणाली में महाराजा भागीरथ हुए जो

आकाश से ब्रह्मपुरी से गंगा को ले आये। परन्तु जब गंगा को लाने का प्रयास किया तो उस गंगा के प्रवाह को कौन शान्त कर सकता था? तो कहा जाता है कि महाराजा शिव के द्वार महाराजा भगीरथ गये और "ब्रह्मे कृत्रम् ब्रह्मे सगरथ च प्रणामे अस्तेः" महाराजा भागीरथ जब इनके समीप पहुँचे, इन्होंने कहा कि प्रभु! गंगा के प्रवाह को कौन शान्त कर सकता है? कहते हैं कि महाराजा शिव न संकल्प के द्वारा गंगा को अपनी जटाओं में अर्पित कर लिया।

शिव जटाओं में अर्पित करने के पश्चात गौमुख के द्वारा इसी गंगा का अवतरण हुआ। मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे यह लोक कथा वर्णन कराई और कहा कि वास्तव में ऐसा ही स्वीकार किया जाये।

यह जो गंगा का अवतरण है यह केवल पर्वतों से होते हुए मानवीय कल्याण के लिये पृथ्वी के आसन को अलंकृत करती हुई और अपनी प्रतिभा से समाज को सुख देती हुई अपने मार्ग से चली आ रही है।

यह कहा जाता है कि महाराज भागीरथ इस गंगा को पर्वतों से इस महान पृथ्वी मण्डल पर ले आये। गंगा को लाने का अभिप्राय क्या था कि यह संसार सुखी बने, मेरा राष्ट्र सुखी बने क्योंकि वह जहाँ-जहाँ अपनी प्रतिभा को लेते चले गये वही गंगा का प्रवाह पृथ्वी-मण्डल पर आता रहा है। मुझे कुछ ऐसा ही स्मरण है कि राजा सगर की परम्पराओं में उनके साठ हजार पुत्र कहलाये गये हैं। पुत्र क्या उनके यहाँ साठ हजार सेना का समूह रहता था वह सब उनके पुत्र के तुल्य थे। उनको अभिमान की प्रतिभा आ गयी थी जिससे वे नष्ट हो गये। भागीरथ ने पृथ्वी में गड्ढ़े बनाये, निर्माण किया, भागीरथ द्वारा नाना निर्माण करने के पश्चात फिर महाराजा भागीरथ के पुत्र रेणुकान्त राजा हुए, उन्होनें भी यही किया। रेणुकान्त राजा के पुत्र शोभित नाम के राजा हुए वह भी यही कार्य करते थे। उसके पश्चात सुगनात नाम के राजा थे वह भी यहीं करते थे। इसी प्रकार सभी प्राय गंगा को पर्वतों से पृथ्वी पर लाने का प्रयास करते रहे। प्रयास करने का परिणाम यह हुआ कि कुछ काल के पश्चात् भागीरथ की सातवीं प्रणाली में महाराजा सगर जो सौनात नाम के राजा के पुत्र कहलाये जाते थे उन्हें इस गंगा को पृथ्वी पर लाने का श्रेय प्राप्त हो गया। संसार को जलमय आनन्दमय बनाना यह राजाओं का कर्तव्य होता है।

गंगा ब्रह्मा की पुत्री वाणी



बेटा! देखो, एक कर्म गंगा है एक उपासना गंगा हैं एक ज्ञान गंगा है तो मुनिवरों! हमें तीनों में स्नान करना चाहिए, शिव सङ्कल्प, शिव की जटाओं से गंगा उत्पन्न होती है। तो मुनिवरों! शिव नाम तो परमात्मा का है ये गंगाएं परमात्मा से उत्पन्न होती है। अहा! परमात्मा की जटाएं क्या हैं, जिससे यह तीन गंगा उत्पन्न होती हैं। तो मुनिवरों! देखो, यह जो जटा रुपी वाणी हैं, जटा नाम बेटा! वाणी का हैं, जटा नाम गान का है, अहा! शिव की जटाओं से जब यह वाणी, वह महान गंगा उत्पन्न होती हैं, तो बेटा! मृत मण्डल में और ब्रह्मलोक में और अन्तरिक्ष लोक में तीनों लोकों में गान करती है, यह तीनों गंगा महान सुख सागर है। आज हमें इन्हें पाना चाहिए। आज इन विद्याओं को जान करके हमें वास्तव में संसार सागर से पार होना चाहिए। हमारे संसार में आने का उद्देश्य यही है कि हम उन गंगाओं को जान लेवें, जो परमात्मा ने हमारे लिए नियुक्त की हैं, अहा! परमात्मा ने, शिव महाराज ने सृष्टि के प्रारम्भ में यह कैसी गंगा उत्पन्न की है। बेटा! हमारे महानन्द जी ने एक समय प्रश्न किया कि यह गंगा ब्रह्म पुत्री क्यों कही जाती है क्योंकि वाणी उसके अधीन होती है और जो जिसके अधीन होता है, वह उसके बालक के तुल्य होता हैं। इसीलिए बतलाया कि यह जो वेद वाणी है, शिव की जटाओं से उत्पन्न हुई हैं, मुनिवरों! ब्रह्मा के द्वार से आई हैं, यह ब्रह्मा की पुत्री हैं। ब्रह्मा नाम बुद्धिमान का हैं और जिसकी वाणी जिसके शासन में हो, उसके ब्रह्मा कहते हैं और यह ब्रह्म विद्या जिसके कण्ठ में हो, उसके शासन में रहने वाली हो, उसी को ब्रह्मा कहते है, और वेद की विद्या उसकी पुत्री मानी गई हैं। मुनिवरों! यहाँ वृतान्त चल रहा था क्या? उपदेश दे रहे थे, कि यह विद्या उसी को आती हैं जिसका हृदय महान होता हैं । यहाँ ऐसा कहा गया हैं, कि बेटा! कि मधुज्ञान से मधुरता उत्पन्न होती हैं।



हमारे यहाँ योगियों ने इन गंगाओं को इस प्रकार जाना है जब मानव कर्मकाण्ड करता हुआ ध्यान में लीन हो जाता है मग्न हो करके बेटा! आगे चलकर यह समाधि में लय होने लगता है तो इसकी यह जानने की इच्छा होती है की आत्मा और प्राणों की सन्धि कैसे होती है और आत्मा प्राणों को लेकर कैसे चलता है? तो मुनिवरों! उस जिज्ञासु का हृदय पवित्र निर्मल होने के नाते यह आत्मा और प्राणों की एकता हो जाती है। जैसे मुनिवरों! देखो एक घुड़सवार अपने उदण्ड घोड़े पर आसन से सवार है। ऐसे ही मुनिवरों! यह जो आत्मा है, प्राण रूपी घोड़े पर सवार हो जाता है। यह आत्मा जब सवार होकर चलता है, आगे चलता हुआ, बेटा! यह मूलाधार में जाता है। मूलाधार पर बेटा! वह महान स्थान आता है जहाँ देखो इन तीन गंगा की उत्पत्ति हुई है। जिसको गंगा, यमुना, और सरस्वती कहते है। मुनिवरों! जब आत्मा आगे चलता है मूलाधार को त्याग कर। मूलाधार में ऐसा हमारे आदि ऋषियों और आदि आचार्यो ने कहा है, महर्षियों ने कहा है, लोमश ब्रह्माआदि ऋषियों ने कहा है, महर्षि व्यास और पतंजलि भी कहते है और आदि ऋषि पापड़ी मुनि, देवर्षि नारद मुनि, सनत्कुमार आदि ऋषि ने मन को अच्छे प्रकार जाना है, उन्होंने बेटा ऐसा निर्णय दिया, जिसे मूलाधार कहा जाता है वहाँ लगभग 6 ग्रन्थियां खुल जाती हैं। मानो प्रकाश ही प्रकाश हो जाता है। जहाँ नाना प्रकार की ग्रन्थियां लगी होती हैं वे जब खुल जाती है, तब मानव को पर्याप्त प्रकाश हो जाता है। ऐसा महयोगियों का अनुभव है। आगे चलता हुआ आत्मा नाभि चक्र में जाता है जिसको बेटा! प्रहन्द चक्र कहते हैं। जिसको सुअग्नि चक्र भी कहा जाता है। अहा! जब यह आत्मा वहाँ पहुँचता है नाभि चक्र में लगभग 12 ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं। तो वहाँ ऐसा कहा है ऋषियों ने कि एक नाड़ी का सम्बन्ध कई कई नाड़ियों से सम्बन्ध होता है। मुनिवरों! हमारे महर्षियों ने वर्णन किया है कि नाभि चक्र एक कूप सदृश्य माना गया है। देखो, जहाँ नाना नाडियां आकर स्नान करती हैं और उसमें से अपना अन्न लेकर वह अपने स्थानों में नियुक्त हो जाती है। जब इन नाड़ियों का मार्ग खुल जाता है और इस गंगा सरस्वती में स्नान करती है। मुनिवरों! जैसा हमारे आचार्यो ने कहा है, जैसे प्रयागराज है, और भी देखो मधुवन है, और महानन्द जी देखो काशीपुरी अयोध्या है। नाना प्रकार के स्थान है, जो गंगा के तट पर आते है, गंगा तट पर कैसे आते हैं? जितने भी इस शरीर में महान चक्र हैं। जैसे देखो पूर्व चक्र को हम महान हरीद्वार कहते हैं। जिसको मुनिवरों! कुनीति कहा करते हैं। जहाँ देखो, भगवान के या प्रभु के दर्शन करने का समय आता है। उस मार्ग में चलने का जहाँ प्राण माना है। जिसको गंगोत्री कहा जाता है। जब यह आत्मा देखो, पूर्व गंगोत्री का स्नान करता है, फिर आगे चल करके बेटा! वह नाभि चक्र में जाता है, जिसको मुनिवरों हरि का द्वार कहते हैं। जहाँ देखो मधुर आत्मा प्राण के साथ बैठा हुआ, गंगाओं में रमण करता हुआ, जब आत्मा और आगे चलता है, तब देखो मुनिवरों! आगे हृदय चक्र में जाता है, जिसको हम गणों का द्वार कहते हैं। यह उन गणों के समक्ष जाता है। वे गण जो अन्धकार में रहते है उनकी अज्ञानता समाप्त हो जाती है। मुनिवरों! देखो गंगाओं में स्नान करके उन गणों का उद्धार हो जाता है। ऐसे ही बेटा! आत्मा गंगा, यमुना, सरस्वती में स्नान करता हुआ आगे को चलता है। कण्ठ चक्र में जाता है, जिसको बेटा! काशीपुर कहा जाता है। काशी में नाना प्रकार के मधुबन हैं। यहाँ आत्मा को नाना कठिनाइयाँ आती हैं। जहाँ नाना विषय-वस्तु आती हैं, परन्तु देखो जब आत्मा इनके भी समक्ष जाता है। यह प्राण ऐसा प्रबल है कि मुनिवरों! जो सृष्टि प्रारम्भ करने वाला है, जो हमारे शरीर को बनाने वाला है, वह आत्मा का साथी बन बैठा है। मुनिवरों!

गंगा-यमुना-सरस्वती—ईडा-पिंगला-सुषुम्ना P2

जब यह प्राण जाता है। सब ग्रन्थियाँ खुलती चली जाती है। आगे चलकर यह आत्मा बेटा! उस स्थान पर जाता है जिसको प्रयागराज कहते हैं। जब यह देखो, आत्मा प्रयागराज में स्नान करके पवित्र और स्वच्छ हो आगे को चलता है। तो बेटा! त्रिवेणी का स्थान आ जाता है। अहा! वेद क्या कह रहा है? तीनों विद्याओं को जानने से हम त्रिवेणी में पहुँच जाते हैं जहाँ, बेटा! गंगा, यमुना,सरस्वती तीनों धाराएँ एक में मिल जाती है। आगे चल करके नीलधारा बन जाती है। अहा बेटा! उसको त्रिवेणी कहते हैं। जहाँ देखो मुनिवरों दैत्यों और देवताओं का संग्राम होता रहता है। जब संघर्ष होता रहता है, यह प्राणों सहित आत्मा त्रिवेणी में गोते लगाता है। उस त्रिवेणी में स्नान करता है।

गौतम और अहिल्या_P1 से 3



पूज्यपाद गुरुदेव शृङ्गी ऋषि कृष्णदत्त जी महाराज

अलङ्कार-गौतम अहिल्या

गो नाम पृथ्वी का है और रात्रि के समय इस पर अंकुर में शीतलता देकर चंद्रमा इसको उपजाऊ करता है, उस पृथ्वी का स्वामी देखो गौतम कहलाता है। मुनिवरो देखो! रात्रि को नाना रूपों से पुकारा है, रात्रि को अहिल्या कहते हैं। अहिल्या नाम माता का भी है, अहिल्या नाम पृथ्वी का भी है, अहिल्या नाम आत्मा का भी है। मेरे प्यारे महानंद जी ने मुझे एक समय एक लोक कथा वर्णन की कि एक समय में ऋषि गौतम की पत्नी अहिल्या को राजा इंद्र ने आकर हरण किया। मुनिवरो! इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि यहां शब्दों का अनर्थ कर दिया है। परंतु हमें अनर्थ न करते हुए शुद्ध पवित्र भाव से उन वाक्यों को विचार लेना चाहिए। महर्षि वाल्मीकि ने भी इसका प्रकरण लेते हुए कुछ ऐसा कहा है कि गौतम चंद्रमा को कहते हैं और रात्रि उसकी पत्नी अहिल्या है।

मुनिवरो! जिस प्रकार मानव का आभूषण पवित्र ज्ञान है इसी प्रकार रात्रि का आभूषण अंधकार है। जैसे पतिव्रता देवकन्या अपने श्रृंगार को अपने पति को अर्पण

गौतम और अहिल्या_P2 से 3

कर देती है इसी प्रकार यह रात्रि अपने अंधकार रूपी श्रंगार को चंद्रमा को अर्पण कर देती है।

गौतम नाम परमात्मा का भी है परंतु यहां परमात्मा का प्रकरण नहीं है, यहां चंद्रमा का प्रकरण है। चंद्रमा का प्रकरण लेते हुए महर्षि बाल्मीकि ने कुछ ऐसा कहा है जब यह रात्रि अपने श्रंगार को चंद्रमा के अर्पण कर देती है तो उस समय देवता बड़े दुखित होते हैं और कहते हैं कि अब इंद्र की आवश्यकता है। इंद्र आते हैं और आकर इस चंद्रमा रूपी गौतम को बलि बना देते हैं और रात्रि अहिल्या को अपने में रमण कर लेते है।

मुनिवरो! आज हमें विचारना चाहिए कि हम इंद्र किसको कहते हैं। इंद्र नाम सूर्य का है। जब प्रातः काल में इंद्र आता है तो रात्रि रूपी अहिल्या को नष्ट कर देता है और अपने में रमण करा देता है। संसार में अंधकार का चिन्ह नहीं रहता और चंद्रमा दागिल बन जाता है। आज हमें प्रत्येक वाक्य को गंभीरता से विचारना है, प्रत्येक वाक्य को वैदिकता, यौगिकता से और विवेक से विचारना चाहिए। जब तक हमारी बुद्धि में विवेक नहीं होगा तब तक परमात्मा का शुद्ध ज्ञान और ऋषि मुनियों की पवित्रता को किसी प्रकार नहीं जान सकेंगे। आज हमें ऋषि मुनियों की परंपरा को जानना है तो हमें शुद्ध चैतन्य बुद्धि में विवेक को उत्पन्न करना है।

मेरे प्यारे महानंद जी ने यह भी कहा था कि भगवान राम ने वन जाते हुए अहिल्या को अपनी ठोकर ठुकराते हुए अंतरिक्ष में पहुंचा दिया था। इस पर शास्त्रार्थ करने का समय नहीं परंतु उत्तर यह है कि उस समय भगवान राम पृथ्वी के विशेष विज्ञान को जानते थे। हमारे वैदिक साहित्य में अहिल्या पृथ्वी को भी कहते हैं, यहां प्रकरण को ले लेना चाहिए। जब भगवान राम ने अपनी संस्कृति का चक्र फैलाने के लिए अपने राष्ट्र को त्याग दिया था तो उस समय अहिल्या का कल्याण करने के लिए भगवान राम ने निषाद से कहा था कि हे निषाद! अपने राष्ट्र को पवित्र बनाने के

लिए यह जो अहिल्या पड़ी है इस के मांस में बीज की स्थापना करके अपने राष्ट्र का उत्थान करो। जो भूमि वज्र तुल्य हो और विज्ञान से अन्न उत्पन्न हो सकता हो उस भूमि को अहिल्या कहा जाता है। आज हमें प्रत्येक वाक्य को गंभीरता से विचारना है बुद्धि के नेत्रों को शांत करके अर्थों का अनर्थ नहीं करना है इस संसार में।

मुनिवरो! अहिल्या नाम इस आत्मा का भी है। रात्रि में जब रेणुका और इस आत्मा का मिलन होता है तो इसका मिलान परमात्मा से हो जाता है, उस समय आत्मा को आनंद छा जाता है। जैसे एक व्यक्ति प्रातः काल अपने स्थान से पृथक होकर सांयकाल तक कार्य करता है और थकित हो जाता है, यदि उस समय उस से प्रश्न करो कि जितना कार्य तुमने प्रातः काल से सांय काल तक किया है उतना अब कर सकते हो ? उत्तर मिलेगा कि मेरे द्वारा अब वह शक्ति नहीं है परंतु जब यह व्यक्ति रात्रि अहिल्या की गोद में चला जाएगा तो प्रातः काल में उसको सब ही सत्ता प्रदान हो जाती है। आत्मा परमात्मा का मिलन हो कर उसमें वह चैतन्यता और महानता प्राप्त हो जाती है कि वह मानव वही कार्य करने के लिए फिर उद्यत हो जाता है और यदि प्रश्न करो कि जितना कार्य तुमने कल किया था उतना आज कर सकते हो तो उत्तर मिलेगा कि अवश्य कर सकता हूं। तो मेरे प्यारे ऋषि मंडल! वह सत्ता कहां से प्राप्त होती है ? वह सत्ता परमात्मा से और रेणुका की गोद में जाने से प्राप्त होती है। यदि हम इस विज्ञान को जान लेते हैं कि यह सब हमें कैसे प्राप्त हो जाता है तो इसमें और भी महानता प्रकट हो जाती है, वह मानव संसार में दार्शनिक कहलाता है, मनोवैज्ञानिक बन जाता है, मन पर शासन करने वाला बन जाता है और आत्मा के विज्ञान को जानने वाला बन जाता है॥

चतुर्भुज विष्णु राष्ट्र



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

देखो, मुनिवरों! विष्णु नाम परमात्मा का ही नहीं, जो सदैव अक्षयक्षीर सागर में रमण करने वाला है, जो शुद्ध चैतन्य ज्ञान स्वरुप है, हमारे वेदाचार्यों ने विष्णु नाम इस आत्मा का भी कहा है, विष्णु नाम राजा का भी है और विष्णु नाम सूर्य का भी है।

हे मेरे प्यारे! ऋषि मण्डल! हम इस आत्मा को विष्णु क्यों कहते हैं? यह आत्मा विष्णु किस प्रकार है? मेरे प्यारे! महानन्द जी! मुझे एक लोक कथा वर्णन कराया करते हैं, कि विष्णु अक्षयक्षीर सागर में शेषनाग की शैय्या पर विश्राम कर रहा है, लक्ष्मी उसके चरणों में ओत प्रोत है, नारद अपनी वीणा को लिए समक्ष है और गन्धर्व गुणागान गा रहा है, विष्णु का नाभि से कमल उत्पन्न हो रहा है, कमल से ब्रह्मा की उत्पत्ति हो रही है।

मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ इस आत्मा को ही विष्णु नहीं कहते, विष्णु नाम राजा का भी है, कौन से राजा का नाम विष्णु है? उस राजा को विष्णु कहते हैं, जिस राजा के यहाँ चार भुज होते हैं एक भुज में पदम्, द्वितीय में गदा, तृतीय में शङ्ख और चतुर्थ में चक्र होता है, आज मुझे त्रेता के समय की एक वार्ता स्मरण होती चली जा रही है, जब भगवान राम महर्षि वशिष्ठ मुनि के चरणों में ओत प्रोत होते थे, भगवान राम ने महाराज वशिष्ठ से एक वाक्य कहा था कि महाराज! मैं यह जानना चाहता हूँ मेरा राष्ट्र रावण के अत्याचारों से भयभीत है, मेरा राष्ट्र राम राज्य कैसे बन सकता है?

उस समय वशिष्ठ मुनि महाराज बोले कि हे राम! इस राष्ट्र को राम राज्य बनाने से पूर्व तुम्हें विष्णु बन जाना है, जब तक विष्णु नहीं बनोगे, तुम्हारा राष्ट्र राम राज्य किसी प्रकार नहीं हो सकेगा।

राम बोले, प्रभु! मुझे व्याख्या कराइए, कि मैं विष्णु किस प्रकार हो सकता हूँ?

महर्षि वशिष्ठ बोले, हे राम! सुनो, सबसे प्रथम तुम्हारे भुजों में एक पदम् होना चाहिए।

राम बोले, भगवन्! पदम् किसे कहते हैं?

ऋषि ने मग्न होते हुए उत्तर दिया कि हे राम! देखो, पदम नाम सदाचार और शिष्टाचार का है, जिस राजा के राष्ट्र में सदाचार और शिष्टाचार होता है उस राजा का राष्ट्र पवित्र कहलाता है, जिस राजा के

राष्ट्र में सदाचार नहीं होता, हृदयों में एक दूसरे का सम्मान नहीं होता, तो जानो, वह राष्ट्र आज नहीं तो कल, नष्ट हो जाएगा। हे राम! यदि तुम अपने राष्ट्र को पवित्र बनाना चाहते हो, तो अनिवार्य है, कि तुम्हारे एक भुज में पदम् होना चाहिए, राजा के राष्ट्र में यथार्थ विद्या होनी चाहिए, विद्या में सदाचार और शिष्टाचार की तरंगें हों, वह विद्या सर्वोत्तम मानी जाती है, वह विद्या राज्य को सफल बना देती है, हे राम! यह पदम् तुम्हें ऊँचे से ऊँचा बना सकता है, संसार पर तुम शासन कर सकते हो, यदि सदाचार और शिष्टाचार नहीं, तो तुम्हारा राष्ट्र राम राज्य किसी प्रकार भी नहीं बन सकता।

द्वितीय तुम्हारे द्वारा गदा होनी चाहिए।

भगवान राम बोले, भगवन्! गदा किसे कहते हैं?

मग्न होते हुए ऋषि ने कहा कि गदा नाम है क्षत्रियों का, राजा के राष्ट्र में बलवान क्षत्रिय होने चाहिएं, उन्हें अपनी आत्मा का ज्ञान होना चाहिए, ब्रह्मचर्य उनके द्वारा पौष्टिक होना चाहिए, वह क्षत्रिय अपराधियों को दण्ड देने वाले होने चाहिए, जिस राजा के राष्ट्र में अपराधियों को दण्ड दिया जाता है, वह राष्ट्र सदैव राम राज्य बनकर रहता है और जिस राजा के राष्ट्र में अपराधियों को दण्ड नहीं मिलता, उस राजा का राष्ट्र आज नहीं तो कल नष्ट हो जाएगा। आज हे राम! तुम्हें गदा को स्थिर करना है, अपराधी को दण्ड देना है, दुराचार को नहीं रहने देना है, उस काल में तुम्हारा राष्ट्र राम राज्य कहलाएगा, हे राम! देखो, तुम्हारे राष्ट्र की कोई वार्त्ता, किसी द्वितीय राष्ट्र में पहुँच जाती है, तो जानो राष्ट्र के क्षत्रिय ऊँचे नहीं है, जिस राष्ट्र में गदा होती है उस राजा का राष्ट्र पवित्र होता है।

तृतीय चक्र होना चाहिए।

राम बोले, प्रभु! हम चक्र किसको कहते हैं, चक्र की क्या व्याख्या है?

भगवान राम के इस आदेश को पान करते हुए महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले, हे राम! सुनो, चक्र नाम संस्कृति का है, जिस राजा के राष्ट्र में संस्कृति होती है उस राजा के राष्ट्र में चक्र होता है, संस्कृति वह अमूल्य वाणी है, जो मानव को सदाचार और शिष्टाचार देने वाली है, संस्कृति कौन सी वाणी को कहते हैं? जो संस्कृति राष्ट्र से लेकर कृषि करने में, व्यापार में, धनुर्विद्या में और नाना प्रकार के यन्त्रों के आविष्कार में, सदाचार में, ब्रह्मचर्य की सुरक्षा करने में और अपनी आत्मा की उन्नति करने में और परमात्मा तक पहुँचने में, जिस वाणी में ओत प्रोत हो, उस वाणी का नाम हमारे यहाँ संस्कृति है। हे राम! इसको आज तुम्हें विचारना है, यदि तुम्हें अपने राष्ट्र को राम राज्य बनाना है, तो संसार में चक्र फैलाओ।

मुनिवरों! मैं गौरव के साथ कहा करता हूँ, कि हे प्रभु! तू भगवान राम जैसी आत्मा को संसार में उत्पन्न कर, मुझे भगवान राम के दर्शन करने का सौभाग्य मिला, भगवान राम ने राज्य के ऐश्वर्य को त्याग करके पर्वतों की शैय्या बनाई और ऋषि के आदेशों का पालन किया, संसार में अपने सदाचार

और शिष्टाचार रुपी संस्कृति के चक्र को संसार में फैलाया, सब राजाओं को विजय किया, कुछ सूक्ष्म सा प्रमाण देता जाऊं अधिक समय नहीं कि अधिक प्रमाण दूं।

मुनिवरों! इस सबके पश्चात राम ने महर्षि से प्रश्न किया, कि भगवन्! मुझे शङ्ख का निर्णय ओर करा दीजिए, मैं इस शङ्ख को और जानना चाहता हूँ।

महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले कि हे राम! तुम किने उत्तम हो, संसार में तुम्हारा कितना यश है, आज तुम्हें धन्य है, जो मेरे आदेशों का पालन करते हुए और अपने चक्र को फैराते हुए शङ्ख का प्रश्न किया है, शङ्ख नाम वेद ध्वनि का, जिस राजा के राष्ट्र में वेद ध्वनि होती है और वह भी जटा पाठ में, माला पाठ में, घन पाठ में, विसर्ग पाठ में, विशारद पाठ में, और भी नाना प्रकार के स्वरों में, जहाँ वेदों का पाठ गाया जाता है, उस राष्ट्र में अन्तरिक्ष भी वेदमन्त्रों से आच्छादित रहता है। जिस राजा के राष्ट्र में सदाचार की शिक्षाएं, वेद की शिक्षाएं दी जाती हों, वहाँ का वातावरण भी उत्तम होता है, मनुष्यों की विचारधाराएं ऊँची होती हैं, सदाचार और शिष्टाचार रहता है। हे राम! आज शङ्ख ध्वनि का प्रश्न किया है, शङ्ख ध्वनि नाम वेद ध्वनि का है, ज्ञान का है, हे राम! जिस राजा के राष्ट्र में यज्ञ होते हैं और यज्ञों में वेदों का पाठ होता है तो उस राष्ट्र में कार्य करने वाले देवता भी प्रसन्न होते हैं और प्रसन्न हो करके उस राजा के राष्ट्र को, प्रजा को और राजा को मनोवांछित फल दिया करते हैं, हे राम! तुम्हें अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना है तो तुम्हें विष्णु बनना पड़ेगा।

मुनिवरों! जिस राजा के भुज में यह चार चिह्न होते हैं, यह चार नियम होते हैं, वह राष्ट्र पवित्र कहलाता है और उस राजा का नाम विष्णु है। तो हे मेरे प्यारे! ऋषि मण्डल! यह राज्य राम राज्य कहलाता है, भगवान राम ने राम राज्य कहलाया अपने राष्ट्र को, राम राज्य करने से पूर्व इन चारों नियमों को अपनाओ। गुरु भी हों तो कैसे हों? शिष्य भी हों तो कैसे हों? गुरु के द्वार जा करके राष्ट्र की उन्नति और अपनी आत्मा की उन्नति के प्रश्न करने वाले हों और उनके आदेशों का पालन करने वाले हों, चाहे उन्हें अपना ऐश्वर्य भी त्यागना हो, आज वह ही शिष्य अपने गुरु के आदेशों का पालन कर सकता है, जो शिष्य पर्वतों को अपनी शैय्या बना लेता है, गुरु जो आदेश देता है, वह शिष्य को शान्त कर देता है, गुरु शिष्य का सम्बन्ध वहीं तक रहता है, जब तक गुरु के द्वारा रहते हैं, उनके पश्चात उन अङ्कुरों को जो गुरु ने शिष्य के अन्तःकरण में बोया है, उपजाया है, वह उपजे हुए वृक्ष समाप्त हो जाते हैं, यदि हम गुरु के आदेशों का पालन नहीं करते, यह सब ऋषि परम्परा है, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज का आदेश भगवान राम ने पालन किया।

देवर्षि नारद व मन का अलंकारिक स्वरुप



जैसे बेटा! मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने मुझे एक समय वर्णन कराया क्या, आधुनिक, जो वर्तमान का काल चल रहा है उसमें यह माना जाता है, क्या भगवान विष्णु और देखो, लक्ष्मी दोनों एक स्वयंवर की चर्चा हुई किसी काल में, स्वयंवर की जब चर्चा हुई तो देवर्षि नारद मुनि बड़े तपस्वी थे, देवर्षि नारद मुनि ने हरि के स्वरूप को मानो हरि परमात्मा से पान किया और वह जब उस स्वयंवर में पहुँचे तो मानो देखो, लक्ष्मी जब वह माला ले करके, जब उस स्वयंवर में भ्रमण करने लगी, तो नारद जी मानो देखो, हरिब्रव्हा हमारे वेद के साहित्य में मानो हरि नाम वानर को कहा गया है एक मानो देखो, एक जनक ब्रीहि देखो, एक वानर है, उसको हरि कहा जाता है। वानर को ही हरि के रूप में देखो, वह स्वरूप देखो, नारद जी को प्राप्त हो गया। तो नारद जी स्वयंवर में विद्यमान है, मानो जब वह उसमें विद्यमान है, जब लक्ष्मी आती तो वह अपने कण्ठ, अपने सिंह अपने मानो देखो, अग्रणीय बनाते, जब बनाने लगे तो मुनिवरों! देखो, एकं ब्रव्हे लक्ष्मी दूरी चली गई, परिणाम यह हुआ कि कुछ समय के पश्चात भगवान विष्णु आए और उनके कण्ठ में मानो देखो, लक्ष्मी ने जयमाला परणित कर दी, जयमाला उसमें परणित हो गई, समाहित हो गई।

तो मेरे पुत्रों! देखो, उस समय कहते हैं कि नारद जी ने मानो देखो, भगवान को अपशब्द उच्चारण करने प्रांरभ किए, उन्हें मानो अप्रताम् की चर्चाएं होने लगी। तो मेरे प्यारे! देखो, इस गाथा से यह प्रतीत होता है, मुझे यह गाथा मेरे प्यारे! महानन्द जी! ने बहुत पुरातन काल हुए, यह वार्ता मुझे प्रगट कराई, परन्तु यह वार्ता किसी साहित्य की या दर्शनों की चर्चा नहीं है, यह चर्चाएं ऐसी हैं जिसमें एक अलंकार विद्यमान रहता है। मानो देखो, इसका रूप यह क्या, जो मानव जनता में जनार्दन को न दृष्टिपात करता हुआ, ब्रह्म में समाधिष्ट न होता हुआ मानो

वह संसार के तपों में अपनी तपोवृणि वत बना लेता है जैसे नारद जी के जीवन में आती है कि वे बड़े तपस्वी थे, परन्तु देखो, उसके तप को नष्ट करने के लिए प्रायः ऐसा हुआ। तो मुनिवरों! देखो, नारद जी का, हरि का, वानर का रूप बनाया तो विचार क्या वानर का रूप नहीं होता है, वानर के रूप को परिवर्तन नहीं किया जाता है। मानो देखो, जो काम में परणित होता है, एक तपस्वी होता हुआ जो जनता में जनार्दन को दृष्टिपात करने वाला है मानो देखो, वह यदि अपनी सङ्कीर्ण क्षेत्र में आ जाता है, प्रवेश हो जाता है तो मुनिवरों! देखो, उसकी वानर जैसी चञ्चल प्रवृत्ति हो जाती है, और जब वह चञ्चल प्रवृत्ति हो जाती है तो वह मानव मानो देखो, वह साधना में असफल हो जाता है। तो इसीलिए नारद जी के जीवन में यह आता है, परमपिता परमात्मा को जहां अपशब्दों का उद्गीत गाना है, यह मानो देखो, विचारों में, यह उद्गीत नहीं आया, सबसे प्रथम तो यही वाक नहीं आ रहा है क्या, नारद का हरि रूप बन जाना मानो देखो, उसके स्वरूप में परणित हो जाना, वानर का स्वरूप मानो देखो, चञ्चलता के रूप में तो प्रायः हम उद्गीत रूप में गाते रहते हैं, परन्तु जहां भगवान विष्णु और लक्ष्मी दोनों के स्वयंवर का प्रसंग आता है, उनका राम के जीवन से या मानो देखो, इसकी प्रतिभा से इसका समन्वय कोई बनता नहीं। आज जब हम इसके ऊपर वेद के विचारों को लाते हैं, वेद की धाराओं में प्रवेश करते हैं, तो मानो यह आ नहीं पा रहा है, क्योंकि देखो, भगवान विष्णु है पालन करने वाला और लक्ष्मी मानो देखो, जो यह प्रकृति है यह लक्ष्मी कहलाती है मानो देखो, मानव के जीवन के उपार्जन के लिए लक्ष्मी का मानो देखो, प्रादुर्भाव होता है या यह उच्चारण करना की पति पत्नी के मध्य में गृह को ऊँचा बनाने के लिए मानो देखो, वह लक्ष्मी का प्रादुर्भाव या उसका जनन्य होता है। तो मानो देखो, लक्ष्मी इस प्रकृति को कहा जाता है और जहां प्रकृति का सम्बन्ध भगवान विष्णु से होता है वहां मानो देखो, कामुकता का प्रसंग उत्पन्न नहीं होता तो मानो देखो, यह एक आलंकारिक चर्चाएं हैं, अलंकार क्या है क्या मानो

देखो, जिस मानव की कामा प्रवृत्ति हो जाती है। उसको मानो देखो, लक्ष्मी के ऊपर उसको मुनिवरों! देखो, हरि रूप उसे प्रदान कर, उसमें चञ्चलता आ जाती है और परमात्मा से वह विमुख हो जाता है। परमात्मा से विमुख क्यों हो जाता है? क्योंकि उसे देखो, वह कामुकता की आवश्यकता आ गई है जीवन में, जब भी कामुकता आ जाती है तो परमापिता परमात्मा से मानव दूरी चला जाता है।

मेरे प्यारे! देखो, सामान्यता में तो मैंने कल गुणों का वर्णन किया था, आज मैं उन गुणों के वर्णन में नहीं जा रहा हूँ, विचार केवल यह क्या, मानो देखो, वह जो स्वयंवर की चर्चा है, मन मम ब्रहा वाचप्पव्हे मेरे प्यारे! देखो, स्वयंवर की चर्चा ही मेरे विचार में प्रियता में नहीं आ रही है, मुझे ऐसा महानन्द जी ने प्रगट कराया क्या, नारद जी ने भगवान विष्णु को अपशब्दों में यह कहा था कि जैसे मैं देवी के वियोग में मानो देखो, मैं ह्रास हो रहा हूँ ऐसे तुम भी किसी काल में देवी के वियोग में ह्रास हो जाओगे। तो मानो देखो,! ऐसा कहते हैं, महानन्द जी ने मुझे वर्णन कराया, क्या भगवान विष्णु का स्वरूप मानो देखो, उसी के अवतार के रूप में राम का जन्म हुआ, ऐसा कहते हैं। परन्तु देखो, यह प्रियता में नहीं। मुझे तो कहीं ऐसा प्रतीत हुआ है क्या जब मैं इसके वाङ्मय में प्रवेश होता हूँ जब देखो, कौशल्या जी ने अपने में देखो, तप किया था, कौशल्या जी ने महान तप किया मानो देखो, अपने उदर में जब आत्मा शिशु के आने से पूर्व ही वह राष्ट्र के अन्न को ग्रहण न करना, राष्ट्रीयता में मानो देखो, प्रवेश ने करना वह तपों में रहना उस तप के आंगन में रत्त रहती थी।

सूर्य लोक सा राजा विष्णु

आज मैं बेटा! उन क्षेत्रों में नहीं जा रहा हूँ, विचार यह कि देखो, जहां तक और का प्रसंग आता है भगवान विष्णु का, वह सूर्य लोक का एक राजा कहलाता है। मानो देखो, सूर्य लोक का जो राजा है उसका नाम विष्णु कहलाता है। आज मैं पुत्रों! तुम्हें बड़ी विचित्र एक वाक तुम्हें प्रगट करा रहा हूँ कि मानो देखो, उसका

सम्बन्ध नारद से नहीं बन पाता। मानो देखो, हमारे आचार्यों का यह कथन है अलंकारों में लाते हैं तो नारद नाम मन को कहा गया है। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में वेद के मन्त्रों में यह आता रहा है, वेद मन्त्रों में मन्त्रं ब्रव्हे व्रतं नारा ब्रीहि भूर्वर्णं ब्रह्मे लोकं मना वेद का वाक कहता है कि यह जो मन है मानो देखो, यह नारद है, और कैसा नारद है, यह चञ्चल है, मानो देखो, यह नारद चञ्चल रहता है, कहीं इस लोक में पाता है, तो कहीं द्वितीय लोक में पाता है मानो देखो, यह स्थिर नहीं रह पाता, स्थिर न रहने से ही इसे नारद कहते हैं। मानो देखो, नारद मुनि नहीं कहते, इसको केवल नारद कहते हैं। वह इसके वांगमय में, मेरे प्यारे! देखो, यह जो नारद है, यह मन है और देखो, विष्णु मानो देखो, सत्य ब्रह्म है। जब मुनिवरों! देखो, इस नारद को मन से लगाना, मन को जब हम भगवान विष्णु से हम सत्य में लगाना चाहते हैं, जनता में जनार्दन में ले जाना चाहते हैं तो बेटा! यह मन चञ्चल हो जाता है। मानो देखो, वहां यह स्थिर नहीं रह पाता। मेरे प्यारे! देखो, प्राण को लाते हैं क्योंकि प्राण इसका सखा है। जब प्राण को लाते हैं प्राण को हमारे साहित्य में नाना प्रकार के पर्यायवाची शब्द हैं। बेटा! देखो, नावृत्तम् प्राण को हमारे यहाँ विष्णु कहते हैं। मेरे प्यारे! हमारे वैदिक साहित्य में भिन्न भिन्न प्रकार के पर्यायवाची आते रहते हैं। बेटा! देखो, हमारे यहाँ विष्णु नाम प्राण का है, विष्णु नाम आत्मा का है, विष्णु नाम माता का है, विष्णु नाम सूर्य का है और विष्णु नाम वायु का है, और विष्णु नाम परमात्मा का है, और विष्णु नाम मेरे प्यारे! देखो, राजा को भी कहते हैं।

तो यह भिन्न भिन्न प्रकार के पर्यायवाची शब्द है। हमारे यहाँ देखो, इस अलंकारिक वार्ता में विष्णु नाम बेटा! प्राण को माना है, जब इस प्राण रूपी सखा को लाते हैं तो मेरे प्यारे! देखो, यह प्राण जब मन के समीप जाता है जब मन का और इसका दोनों का समन्वय होता है तो बेटा! यह जो प्रकृतिवाद है जिसे हम विभाजनवाद कहते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, विभाजनवाद की क्रिया समाप्त हो जाती है,

जब विभाजनवाद नहीं रहता है, एकोकीकरण हो जाता है, तो मेरे पुत्रों! देखो, भगवान विष्णु और नारद दोनों का समन्वय हो करके बेटा! देखो, जनता में जनार्दन को दृष्टिपात करने लगते हैं। तो मेरे प्यारे! मैं विचार देता हुआ दूरी न चला जाऊँ, मैं साहित्यिक चर्चाओं में नहीं जा रहा हूँ, हमारा विचार केवल यह है क्या हम अलंकार को, अलंकारिक रूपों से दृष्टिपात करेंगे तो बेटा! देखो, साहित्य महान बनेगा और यदि साहित्य में अलंकार को हम परणित कर देते हैं तो साहित्य दूषित हो जाता है और उस साहित्य में कालिग आ करके मानो देखो, साहित्य, साहित्य नहीं रहता।

नारद

तो मेरे प्यारे! देखो, इतिहास की परम्परा समाप्त हो जाती है। इसलिए अलंकार अपनी स्थली पर भिन्न रहना चाहिए, जैसे अलंकार की चर्चाएं मैंने कई काल में की, एक समय बेटा! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से अलंकार की चर्चा होने लगी। उन्होंने अलंकार की विवेचना करते हुए कहा है कि यह विष्णु जो शब्द है, यह मानो देखो, पर्यायवाची होने से यह अलंकारिक माना जाता है। मानो देखो, उसको उसी स्वरूप में रहना चाहिए और स्वीकार कर लेना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, नारद जी एक अलंकारिक है, नारद के बहुत से पर्यायवाची शब्द है मानो देखो, वायु को भी नारद कहते हैं, यह भी चञ्चल रहती है। मानो विद्युत को भी नारद कहते है जब यह मेघ मण्डलों में प्रवेश कर जाती है, विद्युत, तो मानो देखो, यह भी चञ्चल है। मानो देखो, इसी प्रकार मानवतव प्राणतव ब्रह्मे लोकाम् मेरे प्यारे! कहीं कहीं साहित्य में, वेद के वांगमय में यह माना है क्या यह मानो देखो, नारद ब्रहे यह लद्व्य ब्रीहि व्रताम् मानो देखो, यह जो वायु है यह प्राण का सखा कहलाता है। तो यह मानो देखो, नारद की संज्ञा इसमें आ पाती। परन्तु देखो, जहां चञ्चलता का प्रसंग है, गति जो मन में आती है वह मानो देखो, प्राण के सन्निधान, प्राण से ही आती है क्योंकि प्रकृति का सन्निधान आता है और प्रकृति का विरेक करता जाता

है। तो मन चञ्चल हो जाता है। क्योंकि प्रकृति के जब यह स्वतः मन के साथ देखो, इसका समन्वय होता है तो मानो देखो, उस समय ये दोनों सखा बन जाते हैं जैसे मानो देखो, नारद और भगवान विष्णु दोनों सखा बन करके मेरे प्यारे! एकोकीकरण हो करके जनता वाला, जनता में जनार्दन को दृष्टिपात करता है और ब्रह्म में समाधिष्ट होने वाला बेटा! ब्रह्म में समाधिष्ट हो जाता है। तो मेरे प्यारे! मैं आज तुम्हें कोई विशेष गम्भीरता के क्षेत्रों में तो यह वाक चले जाते है परन्तु जहां तक यह प्रसंग आता है कि हम मानो देखो, विष्णु की उपासना करना चाहते हैं मेरे पुत्रों! देखो, नारद और देखो, लक्ष्मी दोनों की कामुकता में प्रसंग आ जाता है, तो मेरे प्यारे! देखो, यह अलंकार बन जाता है।

देवासुर संग्राम



जीते रहो! देखो, मेरे पुत्रों! देखो, बारह वर्ष तक, इस प्रकार का उन्होंने कठोर तप किया और वह मुनिवरों! देखो, लेखनी बद्ध करने लगे। क्योंकि मन पवित्र हो गया, बुद्धि विचारने लगी, मेधावी बन गई। ऋतम्भरावी बन करके बेटा! प्रज्ञा को प्राप्त हो गये। ऋषि ने बेटा! देखो, एक अपने में एक वेदमन्त्र की आख्यिका ले करके उन्होंने एक लेखनियां बद्ध की उन्होंने कहा ब्रह्मणाति ब्रह्मणे लोकाम् क्योंकि ब्रह्म व्रतम ब्राह्मण क्या है? और ब्रह्मचारी कौन है? और ब्रह्म की चरी क्या है। को कौन चरता है। मेरे पुत्रों! देखो, तीन शब्दों को ले करके याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा क्या ब्राह्मण कौन है? तो वेद का ऋषि कहता है। ब्रह्मणे जानां कृतं लोकाम् वेद का वाक कहता है कि जो ब्रह्म को जानने वाला है, जो ब्रह्म को जो अपने में और अपने को ब्रह्म में स्वीकार करता है। मुनिवरों! देखो, वह ब्राह्मण कहलाता है। आओ मेरे प्यारे! वेद का ऋषि कहता है। ब्राह्मण कौन है। बेटा! देखो, ब्राह्मण वह कहलाता है, जो एक एक कण कण में देखो, ब्रह्म को स्वीकार करता है। एक एक कण कण में ब्रह्म की प्रतिभा को अपने में धारण करने लगता है। मेरे पुत्रो वह मौन हो जाता है। इस संसार से उदासीन हो जाता है और उदासीन हो करके वह ब्रह्मतव को प्राप्त हो जाता है। आओ मेरे पुत्रों! देखो, विचार विनिमय क्या, वेद का ऋषि कहता है कि ब्रह्मणा देखो, जो ब्रह्म की आभा में रत्त रहने वाला है। बेटा! ब्रह्मचारी कौन है, जो ब्रह्म को चर लेता है। मुनिवरों! देखो, ब्रह्मणं ब्रहे। बेटा! ब्रह्मचारी वह ब्रह्मचारी कहलाता है, जो एक क श्वांस को अपने को बेटा! देखो, ब्रह्म सूत्र में पिरोने वाला है। वही तो ब्राह्मण है। वही तो ब्रह्मचारी कहलाता है। वह मृत्यु को विजय कर लेता है। बेटा! एक श्वांस गतिवान हो रहा है। श्वांस पर श्वास, ध्वनि पर ध्वनिया, हो रही है। परन्तु देखो, श्वांस को एक सूत्र में पिरोने वाला है। जब प्राण सूत्र में बेटा! देखो, प्राण सूत्र को प्राणं ब्रह्मणा पव्रत्यम देखो, जब ब्रह्मसूत्र में उस प्राणतव को पिरो देता है। मनस्तव को उसमें कटिबद्ध कर देता है मेरे प्यारे! देखो, उसकी एक माला बन जाती है और उस माला को जो अपने में धारण कर लेता है। मेरे पुत्रों! देखो, वह ब्रह्मचरिष्यामि बन करके, ब्रह्म को अपने में और देखो, अपने में ब्रह्म को देखो, वह ब्रह्मचरिष्यामि बन करके ब्रह्मवेत्ता बन करके ब्रह्म की चरी को चरने लगता है। ब्रह्म की चरी क्या है? ब्रह्म का जो अदभुत

ज्ञान है अदभुत जो मानो देखो, उसका क्रियाकलाप है। उसमें वह सदैव रत्त हो जाता है। जब मुनिवरों! देखो, ब्रह्मयाग करने वाला, प्रातःकालीन जो ब्रह्मयाग कहलाता है। मानो वह ब्राह्मण कहलाता है। मानो देखो, वह ब्रह्म की चरी को दृष्टिपात करता है और उसकी चरी को चरता है। मेरे प्यारे! देखो, उसकी कृतिया है। प्रभु! तू यह कैसा है। मण्डल है। यह कैसे लोक लोकान्तर है। यह कैसी तेरी माला बनी हुई है। मानो जो इस माला को अपने में चिन्तन करता हुआ अपने में धारण करता रहता है। बेटा! वह ब्रह्मयागी कहलाता है। वह ब्रह्मवर्चोसि बन जाता है।

आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष चर्चा ने देता हुआ, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बेटा! बारह वर्ष तक अपने को मानो देखो, ब्राह्मण स्वीकार किया और अपने को ही बेटा! ब्राह्मणतव में रत्त हो करके ब्रह्मचर्यतव में रत्त हो गएं और ब्रर्ह्मव्रत में रत्त हो करके ब्रह्म की चरी को चरने लगे, मेरे पुत्रों! देखो, एक ही सूत्र के तीनो मनके कहलाते है। मानो इन मनको से एक माला बन जाती है। यह संसार मानो देखो, त्रैतवाद में परणित हो रहा है। आओ मेरे पुत्रों! देखो, वेद का ऋषि क्या कहता है। वेद का आचार्य यही तो कहता है कि हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए अपने में रत्त हो जाए अपने में ब्रह्म को स्वीकार करके इस सागर से पार हो जाए। मेरे पुत्रों! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बारह वर्ष के तप करने के पश्चात एक पोथी का निर्माण किया जिसको बेटा! शतपथ ब्राह्मण कहा जाता है। शतपथ ब्राह्मण बेटा! देखो, जो सत का पथ ग्रहण करने वाला वही ब्राह्मण है। मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने एक पोथी का निर्माण करते हुए अग्रणीय होते हुए उन्होंने कहा ब्रह्मणे कृतं मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने एक और वाक प्रगट किया। देवासुर संगाम की विवेचना होने लगी देवासुर संग्राम होता रहता है एक समय बेटा! बहुत समय तक देवासुर संग्राम होता रहा तो एक समय देवताओ ने बेटा! दैत्यों को विजय कर लिया जब देवता विजयी हो गएं मानो देखो, देवताओं ने दैत्यो को विजय कर लिया जब मुनिवरों! देखो, वह महानता में परणित हुए तो बेटा! उनके मध्य में मुनिवरों! एक ध्वनि उत्पन्न हुई और ध्वनि को उन्होंने देखो, वृषभ को प्रदान कर दिया और वह मुनिवरों! देखो, वृख भी उसे कहा जाता है वह वृषभ को उन्होंने प्रदान कर दिया और मुनिवरों! देखो, उसके मुखारबिन्द से जो ध्वनि उत्पन्न होने लगी तो यह संसार देवताओं का बनने लगा, जब यह संसार देवतव बनने लगा तो मुनिवरों! देखो, शुम्भ निशुम्भ रक्त बीज इत्यादियों ने एक अपनी सभा की और सभा में महाराजा विरोचन को निमन्त्रण दिया और महाराजा विरोचन से यह प्रार्थना की हे प्रभु! यह जो वृषभ है। मानो वृद्धां ब्रहे। यह मानो देखो, इसके मुखारबिन्द से एक ध्वनि उत्पन्न हो रही है और उस ध्वनि को जो श्रवण करता है। वही देवता बन जाता है। हे प्रभु! यह संसार देवताओं का बन गया तो प्रभु! हमारा क्या बनेगा? मेरे प्यारे! देखो, महाराजा विरोचन ने कहा कि एक सभा करो, उन्होंने सभा और की महाराज विरोचन को सभापतित्व को नियुक्त किया गया और उन्होंने कहा ब्रह्मणे तू इस वृषभ को छलो। मेरे प्यारे! देखो, उस वृषभ को यह ज्ञान हो गया था। कि अब तु छला जाएगा दैत्यों के द्वारा बेटा! वह जो देवताओं की धरोहर थी, वह जो ध्वनि थी वह उन्होंने बेटा! देखो, रेणुका को प्रदान कर दी वह रेणुका ने स्वीकार

कर ली और जब वृषभ को बेटा! मध्यरात्रि में छला गया, उसको शुम्भ, निशुम्भ, रक्त बीज इत्यादियो ने बेटा! उसे छला और उसको छल करके, जब लाया गया विरोचन के द्वारा, तो उसका मन्थन किया गया तो उसमें वह ध्वनि नही रही जिससे यह संसार देवताओं का बन रहा था देवतव को प्राप्त हो रहा था। महाराजा विरोचन ने कहा भई! उसमें तो वह ध्वनि नही रही उन्होंने कहा वह ध्वनि कहा गई? उन्होंने कहा वह ध्वनि तो रेणुका में समाहित हो गई है। बेटा! देखो, अब रेणुका को छलने का उन्होंने अगली मध्यरात्रि में जब अपना निश्चय किया तो रेणुका को यह ज्ञान हो गया था तू दैत्यो के द्वारा छली जाएगी उन्होंने मुनिवरों! देखो, उस ध्वनि को देवताओं की धरोहर को मुनिवरों! देखो, वह यज्ञ के दस पात्रों में समाहित कर दिया। मेरे प्यारे! देखो, वह तो यज्ञ के दस पात्रों में समाहित हो गई ध्वनि और मुनिवरों! देखो, जब रेणुका का छला गया मध्य रात्रि में, तो रेणुका को विरोचन के द्वारा लाया गया, महाराजा विरोचन ने जब इसका मन्थन किया, तो उसमे वह ध्वनि नही रही, जिससे वह देवतव को प्राप्त हो रहे थे। मेरे प्यारे! देखो, रेणुका भी छली गई वृषभ भी छला गया और यज्ञ में दस पात्रों में वह ध्वनि चली गई, महाराजा विरोचन ने कहा है। दैत्यराजो! यह मानो अब तुम अमृताम मानो देखो, धर्मज्ञां भूतप्प्रवहा तुम यज्ञ के इस पात्रों को नही छल सकते इसको अपने में नही धारण कर सकते। विचार आता है। बेटा! ऋषि ने वर्णन करते हुए कहा याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने वर्णन करते हुए कहा क्या यह यज्ञ के दस पात्र क्या है। रेणुका क्या है? वृषभ क्या है? मेरे पुत्रों! देखो, देवासुर संग्राम क्या है।

मुनिवरों! देखो, मानव देखो, जब अन्नादभूतं ब्रह्मणे पवित्र बन जाता है। तो हमारे मानव शरीर में देवासुर संग्राम होता रहता है। कहीं मानो देखो, शुभ प्रवृत्ति है। कही अशुभ प्रवृत्ति है। संग्राम होता रहता है। जब मुनिवरों! देखो, देवत्तव आ जाता है तो मुनिवरों! देखो, वृषभ कहते है मन को। हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में वृषभ नाम मन का भी कहते है। वृषभ परमपिता परमात्मा को भी कहते है और गऊ के बछड़े को भी वृषभ कहा गया है। परन्तु यहां प्रकरण से मन को वृषभ माना गया है। मेरे पुत्रों! देखो, जब यह मन दैत्यों के द्वारा छला जाता है। बेटा! दैत्य कौन मानो देखो, काम, क्रोध, लोभ, मोह और अभिमान यह दैत्य कहलाते है। इनके द्वारा जब यह मन छला गया, जब यह मन छला गया, तो मुनिवरों! देखो, विरोचन के द्वारा लाया गया और उन्होंने देवताओं की वह ध्वनि कौन सी है। बेटा! वह धर्म ध्वनि है। वह ध्वनि मुनिवरों! देखो, अमृताम् मुनिवरों! रेणुका को समाहित कर दी रेणुका क्या है? रेणुका मुनिवरों! देखो, बुद्धि को कहा जाता है। हमारे यहाँ बुद्धि के अवान्तर भेदन माने गएं है। हमारे यहाँ देखो, रेणुका नाम बुद्धि को कहा गया है। रेणुका मुनिवरों! हमारे यहाँ पृथ्वी को भी रेणुका कहते है। रेणुका नाम चन्द्रमा की कान्ति को भी कहा जाता है। रेणुका नाम मुनिवरों! देखो, यहाँ बुद्धि को माना है। यह मानो जब पवित्र होती है। तो रेणुका कहलाती है। यह पवित्रता में गमन करने वाली है। मेरे पुत्रों! देखो, जब यह दैत्यों के द्वारा बुद्धि भी भ्रमित हो जाती है। मानो यह छली जाती है। तो वह जो देवताओं की धर्म ध्वनि है धरोहर है। वह मुनिवरों! देखो, यज्ञ के इस पा़त्रो में समर्पित हो जाती है। यज्ञ के दस पात्र क्या है? मुनिवरों! देखो, सृष्टि

के पिता ने सृष्टि के प्रारम्भ में इस मानव शरीर का निर्माण किया इस मानवत्व का जब निर्माण किया, तो बेटा! इसमें पांच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ बेटा! यह यज्ञ के दस पात्र हैं और यह शरीर रूपी यज्ञशाला है। इस यज्ञशाला के ये दस पात्र कहलाते है। इन दस पात्रों से मानो देखो, धर्म को नही निकासा जा सकता, इसको पृथक नही किया जा सकता, यदि धर्म चला गया तो बेटा! शरीर रूपी यज्ञशाला समाप्त हो जाएगी।

मेरे प्यारे! देखो, विचार आता रहता है। विचारों में बड़ी महान वृत्तियो ग्रहणे व्रतम् बेटा! देखो, गम्भीरताएँ होती है। जिनको विचारने से प्रतीत होता है। क्या हम मुनिवरों! देखो, यज्ञ के इस पात्रों के ऊपर अध्ययन करे, यह यज्ञशाला है। शरीर रूपी यज्ञशाला का स्वामीतव आत्मतत्व कर रहा है आत्मा कर रहा है और ब्रह्माण्ड रूपी यज्ञशाला जो बाह्य जगत में दृष्टिपात आती है। इसके ऊपर बेटा! देखो, ब्रह्मत्व वे परमपिता परमात्मा कर रहा है। तो विचार आता रहता है कि हम परमपिता परमात्मा की महती का चिन्तन करते हुए, महती को विचारते हुए इस सागर से पार होने का प्रयास करें बेटा! यह मानो देखो, धर्म ध्वनि इन्द्रियों में समाहित रहती है इन इन्द्रियों के ऊपर संयम करना है इन्द्रियों का समन्वय मन से रहता है। मन का समन्वय प्राण से रहता है। प्राण और मन का समन्वय बेटा! आत्मा से रहता है। सन्निधान मात्र से ही यह अपनी क्रियाओ में रत्त रहते है।

तो आओ मेरे पुत्रों! विचार विनिमय क्या, हम परमपिता परमात्मा की महती को विचारते हुए, उसकी महानता का वर्णन करते हुए, इस सागर से पार होने का प्रयास करे। बेटा! महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने अपने मानो देखो, अपनी क्रिया काल में, उन्होंने तप किया और लेखनिया बद्ध की एक लेखनी एक शब्द के ऊपर उन्होंने बड़ी विस्तृत विवेचनाए की है। तो याज्ञवल्क्य मिन महाराज ने बेटा! शतपथ ब्राह्मण नाम की पोथी का निर्माण क्या और निमाण करके उन्होंने बारह वर्ष तक तप किया क्योंकि जो मन को तपा करके और मानो प्राण में मिलान करता हुआ, लेखनीबद्ध करता हुआ वह अकाटय होती है। मानो वह तपों में कहलाती है। इसीलिए तपों का जो शब्द है वही मानव को मानो विदीर्ण कर देता है। वही पवित्रता की वेदी पर ले जाता है। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बेटा! बारह वर्ष के अपने क्रियाकाल में तप करने के पश्चात परमात्मा को साक्षात्कार किया और परमात्मा की महती को जानने का प्रयास किया। मेरे प्यारे! देखो, वहाँ से उस पोथी को ले करके गमन किया भयंकर वन से गमन करते हुए वह मुनिवरों! देखो, अपने विद्यालय में प्रवेश किया विद्यालय में मानो बेटा! एक मानव कौतुक अब्रहा उनके हृदय की आभा गमन जब करने लगी तो बेटा! ब्रह्मचारी हर्ष ध्वनि करने लगे, कोई चरणों की वन्दना कर रहा है। कोई मानो देखो, उनके चरणों का चुम्बन कर रहा है। उन्होंने कहा कहो भगवन! इस बारह वर्ष के अपने काल में क्या जाना? उन्होंने पोथी को ब्रह्मचारियों को प्रदान की ब्रह्मचारी अध्ययन में लग गये। बेटा! देखो, ऋषि के तपोमयी पोथिका की प्रतिभा उनके हृदय अन्तर्हृदय आत्मा में प्रवेश होनी लगी मेरे प्यारे! देखो, विद्यालय पवित्रता की वेदी पर चला गया। तो विचार आता रहता है। मेरे पुत्रों! देखो, आज का वेदमन्त्र कहता है।

तपं तपं ब्रह्मणा ब्रहे तपश्चं ब्रह्मे मुनिवरों! देखो, यह तप ही है। संसार में जो मानव तपस्वी बनता है वही महान कहलाता है। तप कहते किसे है? मन को पवित्र बनाने का नाम, मन को बुद्धि से समन्वय, बुद्धि को मेधा में और मेधा को ऋतम्भरा में, और ऋतम्भरा को प्रज्ञा में प्रवेश करके संसार में उपराम हो जाना चाहिए। यह है बेटा! आज का वाक आज के वाक उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए और परमपिता परमात्मा के जगत में इस ब्रह्माण्ड, जो परमपिता परमात्मा ने स्वतः तप करने के पश्चात उग्र क्रिया से इस संसार की रचना की है। क्योंकि उग्र क्रिया का नाम ही संसार की रचना है। उग्र क्रिया का नाम ही संसार का विनाश है। इसीलिए बेटा! हम तपस्वी बने ऐसी अपने हृदय में भावना बना करके, अपने जीवन को ऊर्ध्वा में गमन कराते रहे।

प्रजापति द्वारा द का उपदेश


शृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

आओ, मेरे प्यारे ऋषिवर! मैं आज आत्मा की विवेचना पुनः करने जा रहा हूँ जिसे बहुत पूर्व काल से प्रकट कराता चला आया हूँ। बेटा! मैंने कल के वाक्यों में तुम्हें प्रकट कराया था कि प्रजापति की तीन प्रकार की सन्तान होती है। सबसे प्रथम देवता होते हैं, दूसरे मानव होते हैं और तीसरे दानव होते हैं। एक समय ऐसा हुआ कि तीनों सन्तानों ने विचारा कि आज हम अपने पिता के द्वार पर चलेंगे और उनसे प्रश्न करेंगे जिससे हमारा कल्याण हो। उस समय तीनों सन्तान प्रजापति के आश्रम में प्रविष्ट हो गई। महाराजा प्रजापति ने उनका बड़ा सुन्दर स्वागत किया। विराजमान हो जाने के पश्चात महाराजा प्रजापति ने कहा कि कैसे आना हुआ। उन्होंने कहा कि हे भगवन! आपके चरणों को स्पर्श के लिए आ पहुंचे हैं। उन्होंने कहा कि क्या उपदेश पान करना चाहते हो? उन्होंने कहा कि भगवन! जिससे हमारा कल्याण हो। इस वैतरणी नदी से हम पार हो जाएं जिससे मान और अपमान होता रहता है, जिससे हमारा हृदय विशाल हो जाएं। उन्होंने कहा कि बहुत सुन्दर।

मेरे प्यारे ऋषिवर! सबसे पहले देवताओं ने कहा कि भगवन! आप हमें उपदेश दीजिए। प्रजापति ने उन्हें द का उपदेश देते हुए कहा कि तुम संसार में दमनशील रहो क्योंकि जितने देवता दमनशील रहेंगे उतना ही यह संसार और धर्म ओर मर्यादा विशालता को प्राप्त होती रहेगी। द का उपदेश पान करते ही देवता प्रसन्न हो गये।

अब मानव आए उन्होंने कहा कि प्रभु हमें भी उपदेश दीजिए। उन्होंने उन्हें भी द का उपदेश दिया। द का उपदेश पान करके जब उन्होंने गमन किया तो प्रजापति बोले, अरे, तुमने क्या जाना है? उन्होंने कहा प्रभु! आपने हमें द का उपदेश दिया है। द का अभिप्राय है मानव को दानी बनना चाहिए। दान देना चाहिए क्योंकि मानव का कल्याण होता है वह दान से होता है। कौनसा दान? जो वस्तु अपने द्वारा हो उसका दान करो। यज्ञ करो, उसी से तुम्हारा कल्याण होगा। द से दान बनता है इसलिए हम दानी बनें, भव्य बनें। दान देते है तो हमारे द्रव्य की सुरक्षा होती है। आज जो मानव संकीर्णता में चला जाता है मानो वह कृपण बन जाता है तो उसका द्रव्य कुछ काल के पश्चात नष्ट हो जाता है। जो मानव दान देता है, उज्ज्वल कार्य करता है वह मानव मनन शीलता में चला जाता है।

उसके पश्चात दैत्य आ पहुंचे। दैत्यों को भी उन्होंने द का उपदेश दिया। द का उपदेश पान करते ही

दैत्य जब गमन करने लगे तो प्रजापति बोले अरे, तुमने कुछ पान किया, उन्होंने कहा कि प्रभु! आपने हमें द का उपदेश दिया है। द का अभिप्राय है कि दैत्यों को संसार में दया करनी चाहिए। जितने मानव उपद्रवी होते हैं, वह सब दैत्यों की संज्ञा होती है। इसलिए दैत्यों को संसार में दया करनी चाहिए जब तक दयावान नहीं बनेंगे तब तक प्रजापति की सन्तान नहीं कहलाते। वह आगे चलकर के उद्दण्डता में परणित हो जाते हैं। राष्ट्र की परम्परा नष्ट हो जाती है। देवताओं का जीवन त्राहि त्राहि करने लगता है।

तो मुनिवरों! तीन प्रकार की सन्तान उस प्रजापति की कहलाती हैं। विचार आता है कि प्रजापति कौन है। ऋषि याज्ञवल्क्य ने और भी आचार्यों ने कहा है कि हमारे यहाँ जो प्रजापति है वह हृदय को माना है। जैसे परमपिता परमात्मा का यह जगत हृदय माना है। इसी प्रकार मानव का जो हृदय है वह प्रजापति कहलाता है। इसी में नाना प्रकार की तरंगों का जन्म होता रहता है। इसी में मानो देवता की प्रवृत्ति आती रहती है, मानव की प्रवृत्ति आती रहती है और दैत्य भी बन जाता है। मेरे प्यारे ऋषिवर! मानव को विचारना है कि तीन अवस्थाओं में मानव को सामान्य रहना है। विचारशील बनना है क्योंकि अपने जीवन को अस्त व्यस्त नहीं करना चाहिए। जो मानव उपद्रवी बन जाता है उसका अन्तरात्मा उससे दुखित होता हुआ अपनेपन की वार्ता को नष्ट कर देता है। इसलिए आज हमें अपने हृदय को स्वच्छ और पवित्र बनाना है। जब तक हमारा हृदय स्वच्छ और पवित्र नहीं बनेगा, महानता में नहीं आयेगा तब तक हमारा कल्याण नहीं हो सकेगा। क्योंकि प्रकृतिवाद का जो निर्माण होता है, प्रकृतिवाद में जो परमाणुओं का चुनाव होता है वह मानव के विचारों से हुआ करता है। जैसा मानव का विचार होता है वैसा वायुमण्डल बन जाता है जैसा वायुमण्डल होता है वैसा परमाणु आना प्रारम्भ हो जाता है वैसा ही यह जगत बन जाता है। आज मानव समाज का निर्माण मानव के उन विचारों से बनता है जिन विचारों से यह जगत का प्रार्दुभाव होता है, जगत की प्रतिभा का जन्म होता है।

बड़वानल अग्नि



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

ओ३म् ये अ॒ग्नयो॑ अ॒प्स्व१॒न्तर्ये वृ॒त्रे ये पुरु॑षे ये अश्म॑सु। य आ॑वि॒वेशौष॑धी॒र्यो व॒नस्पतीं॒स्तेभ्यो॑ अ॒ग्निभ्यो॑ हु॒तम॑स्त्वे॒तत्॥ अथर्ववेद ३.२१.१

पदार्थः (ये) जो (अग्नयः) अग्नियाँ [ईश्वर के तेज] (अप्सुअन्तः) जल के भीतर, (ये) जो (वृत्रे) मेघ में, (ये) जो (पुरुषे) पुरुष [मनुष्य शरीर] में और (ये) जो (अश्मसु) शिलाओं में हैं। (यः) जिस [अग्नि] ने (ओषधीः) औषधियों [अन्न, सोम लता आदि] में, और (यः) जिसने (वनस्पतीन्) वनस्पतियों [वृक्ष आदि] में (आ विवेश) प्रवेश किया है, (तेभ्यः) उन (अग्निभ्यः) अग्नियों [ईश्वर तेजों] को (एतत्) यह (हुतम्) दान [आत्मसमर्पण] (अस्तु) होवे।

व्याख्याःश्रृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

स्वतः ही वायुमण्डल में शब्दों का विभाजन होता रहता है। जो यथार्थ शब्द हैं वे द्यौ लोक को जाते है, वे स्थिर हो जाते है। जो मिथ्यावादी शब्द है। रजोगुणी है, घृणित शब्द हैं वे इस अन्तरिक्ष में ओत प्रोत हो करके मानव के कण्ठ में उन शब्दों की पुररूक्ति होती है। पुनरूक्ति हो करके वही शब्द अन्तरिक्ष में जब छा जाते है, अन्तरिक्ष छायमान हो जाता है तो कहीं तो इस पृथ्वी से तरङ्गे, वे शब्द, भयंकर अग्नि बन करके जब मिलान करते हैं, तो पृथ्वी में एक बड़वानल अग्नि बड़वानल नाम की अग्नि समुद्रों में प्रदीप्त हो जाती है। वह अग्नि मनुष्यों का विनाश प्रारम्भ कर देती है, उसको दैवी प्रकोप कहते है।

कही अन्तरिक्ष से कहीं पृथ्वी में जो ज्वालामुखी होता है वह विराट रुप बना करके, कहीं उग्र रुप धारण करके ग्रह ग्रह पृथ्वी के आङ्गन में, गर्भ में, समाहित हो जाते हैं। तो उसका परिणाम यह होता है, वे ही अनावृष्टि, अति वृष्टि है, वही उसके भागों का, उसकी आभा केन्द्र बन करके राष्ट्र में, समाज मे, एक अशान्ति के मूल कारण बनते हैं।

वेद का ऋषि कहता है कि शब्द उच्चारण करते ही एक क्षण समय में यह पृथ्वी की ११७ परिक्रमा कर जाता है। एक ही शब्द, शब्द का आकार बन गया है परन्तु वह प्राण की आभा पर, प्राण की तरंगों पर विद्यमान हो करके उसमें कितनी गति आ जाती है? यदि प्राण नहीं होगा तो शब्द में गति नहीं होगी। वेद का आचार्य कहता है यह जो प्राण है इस प्राण का समन्वय जब समुद्रों से होता है

और समुद्रों में जा करके जब यह प्राण विकृत हो जाता है तो मुनिवरों! जल को भी यह अपने में धारण कर लेता है और वहाँ प्राण की रश्मियों का सूर्य से समन्वय होता रहता है। सूर्य से समन्वित होता है और सूर्य ग्रीष्म ऋतु में जैसे जल को अपने में शोषण कर लेता है इसी प्रकार वहीं प्राण स्वरूप समुद्र में परणित हो जाता है तो समुद्र में बेटा! अग्नि को प्रभावित कर देता है। अग्नि प्रदीप्त हो जाती है जलों में। उसको बड़वानल नाम की अग्नि कहते हैं यह बड़वानल नाम की अग्नि क्या करती है? समुद्रों के जल को सूर्य की किरणों में आभायित कर देती है और आभायित करके यदि वह बड़वानल नाम की अग्नि जल को कृतियों में भ्रमण कराती है तो जलों के, समुद्रों के तटों पर रहने वाले प्राणी उस बड़वानल नाम की अग्नि में भस्म हो जाते हैं। तो यह मेरे देव का कितना उज्ज्वल विज्ञान है। यह कैसे शान्त होगा? मेरे प्यारे! अन्तरिक्ष में जब इन प्राणों का, शब्दों का, दोनों का समन्वय होता है तो इस अन्तरिक्ष के परमाणुओं में अग्नि प्रदीप्त हो जाती है, जैसे वन में एक काष्ठ दूसरे काष्ठ से समन्वित हो करके वनों में अग्नि प्रदीप्त कर देता है। इसी प्रकार यह जो अन्तरिक्ष है इसमें परमाणुओं के संघर्ष होने पर जब अग्नि प्रदीप्त हो जाती है तो अन्तरिक्ष में भंयकर अग्नि प्रदीप्त हो करके और वहीं अग्नि देखो, अनावृष्टि, अतिवृष्टि के रूप में प्राणीमात्र को दैवी प्रकोपों में परणित कर देती है।

बेटा! तुम्हें ज्ञान होगा, तुम्हें स्मरण होगा जब उद्दालक गोत्र के ऋषि सम्भालिक ऋषि महाराज का रेवक मुनि महाराज के साथ मिलान हुआ तो उन्होंने अपनी योग स्थली पर विद्यमान हो करके यही निर्णय कराया कि इस अन्तरिक्ष में शब्दों की, प्राणों की, दोनों की आभा से अग्नि प्रदीप्त हो जाती है, परमाणु आपस में धृष्ट होने लगते हैं तो वे अतिवृष्टि के रूप में, अनावृष्टि के रूप में परणित हो जाते हैं। तो ऋषि कहते हैं कि अग्नि कैसे शान्त होगी? यही अग्नि मानव के शरीर में प्रविष्ट हो जाती है जो अग्नि बाह्य जगत में, ब्रह्माण्ड में कार्य कर रही है, जो प्राणमयी वहीं समुद्रों में बड़वानल नाम की अग्नि बन कर जलों को विकृत कर रही है। यही मेरे प्यारे! इस मानव के शरीर में भी उसी प्रकार की प्रतिक्रिया होती है।

यह शब्दों का संघर्ष किस काल में होता है? जिस काल में, समाज में मिथ्यावादी पुरुष हो जाते हैं और जितने भी मिथ्यावादी, अभिमानी, विषैले प्राणी हो जाते हैं इनकी विचारधारा, इनका विषैलापन अन्तरिक्ष में प्रवेश करता है तो परमाणुओं के द्वारा और संग्राम होता रहता है एक समय ऐसा भयंकर संग्राम होता है कि देवी प्रकोप के रूप में वह मानव के समीप परणित हो जाती है। मैं एक आख्यायिका अर्थात कथा प्रकट किया करता हूँ बहुत पुरातन काल की वार्ताओं में बेटा! एक आलंकारिक चर्चा है।

एक समय देखो, अतिवृष्टि हो गई। जब अतिवृष्टि हुई तो प्रजा का सर्वत्र विनाश हो गया। द्रव्य से, गृह वंचित्त हो गए तो प्रजा ने अपना एक समाज एकत्रित किया और समाज ने कहा, चलो प्रजापति के द्वार पर चलते हैं। हमारे लिए ऐसा क्यों हुआ? तो देखो, वह भ्रमण करते हुए प्रजापति के द्वार पर पहुंचे। प्रजापति ने कहा, कहो प्रजाओं, तुम्हारा कैसे आगमन हुआ? उन्होंने कहा कि महाराज! हम इसलिए आए है कि अतिवृष्टि हो गई है, अतिरूप में हुई है। हम यह जानना चाहते हैं कि ऐसा क्यों हुआ? इसके मूल को जानना चाहते हैं। प्रजापति ने कहा, यह वृष्टि कहाँ से हुई। प्रजा ने कहा, मेघमण्डलों से हुई है। मेघों की उत्पत्ति हुई और उससे वृष्टि हो गई। तो मुनिवरों! कहते हैं कि प्रजापति ने मेघों को एकत्रित किया, निमन्त्रण दिया। अब निमन्त्रण के अनुसार जब वह पहुंचे। प्रजापति ने कहा कि हे प्रजा ब्रहे मृताम् मेघा। हे मेघ! तुमने प्रजा के विनाश के लिए अतिवृष्टि क्यों की? उन्होंने कहा, प्रभु! हम इसमें दोषी नहीं है हमें तो आज्ञा प्राप्त हुई, हमने वृष्टि की। आज्ञा तुम्हें कहाँ से मिली? उन्होंने कहा कि इन्द्र से। तो मेरे प्यारे! प्रजापति ने इन्द्र को निमन्त्रण दिया और इन्द्र से कहा, दोषी हे इन्द्र! यह तुमने बिना समय वृष्टि क्यों की, क्यों प्रेरणा दी है मेघों को? उन्होंने कहा, प्रभु! मैं इसमें दोषी नहीं हूँ। उन्होंने कहा, कौन है? महाराज! मेरे से तो शचि ने कहा था। प्रजापति ने बेटा! शचि को निमन्त्रण दिया और शचि से कहा, हे शचि! तुमने बिना समय के इन्द्र को प्रेरणा दी और इन्द्र ने मेघों को प्रेरित किया और वृष्टि हो गई, प्रजा का विनाश हो गया है। शचि बोली, प्रभु! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। मैं तो निर्दोष हूँ, मेरे से तो आदित्य ने कहा था। मेरे प्यारे! आदित्याम् ब्रह्मा पुत्रों! देवाः, कहते हैं आदित्य को निमन्त्रण दिया और आदित्य से कहा, हे आदित्य! यह तुमने बिना समय के वृष्टि क्यों कराई? यह समुद्रों को प्रेरणा क्यों दी? उन्होंने कहा, प्रभु! मेरा कोई दोष नहीं है। यह पृथ्वी पापों से सन जाती है। इस पृथ्वी ने कहा कि वृष्टि होनी चाहिए। अब प्रजापति ने बेटा! पृथ्वी को निमन्त्रण दिया और पृथ्वी से कहा, हे पृथ्वी! यह तुमने बिना समय के वृष्टि की इच्छा क्यों प्रकट की? उन्होंने कहा, प्रभु! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है! मेरे ऊपर जब यह प्रजा पाप कर्म करती है तो मैं क्या करूं। मेरे ऊपर उन्होंने पाप कर्म किया। मैं पापों में सन जाती हूँ, उस समय मेरी प्रबल इच्छा होती है। मैंने अपनी प्रेरणा सूर्य आदि को प्रदान की। आदित्य ने वही प्रेरणा समुद्र को प्रदान की। समुद्रों ने वहीं प्रेरणा शचि को दी और शचि ने वही प्रेरणा इन्द्र को दी और वहीं प्रेरणा मेघों को दे करके मेघों से वृष्टि हो गई और वह जो वृष्टि हुई है वह जब नदियों के रूप में समुद्रों में चली गई और प्रजा ने अपने किए हुए पाप पुण्य कर्मों का फल भोग लिया। तो यह क्या है? यह सर्वत्र मैंने तुम्हें एक आख्यायिका प्रकट की। इससे विचार आता है कि जब मानव के प्राणों में विकृति आ जाती है तो मेरे प्यारे! यह मेघ क्या है? यह जलों की आभा हैं। इन्द्र नाम

वायु को कहा गया है। शचि नाम विद्युत का है और आदित्य नाम सूर्य का है। यह सर्वत्र विचार जब एक आभा में कटिबद्ध हो समुद्रों में परणित हो जाते हैं। तो इसमें यह प्रतीत होता है, हे मानव! तू इस संसार में आया है, प्रभु की सृष्टि में आया है, तुझे महान और पवित्र कर्म करना है, तुझे अपने मानवत्व को ऊँचा बनाना है।

बलि का अभिप्रायः



मानो देखो, उसमें हिरण का नाम हमारे यहाँ आया है हिरणं ब्रह्माः मानो देखो, जब हिरण का नाम आया तो यह आया कि यागां ब्रह्मेः मेरे पुत्रो! इसका अभिप्राय यह हुआ कि याग को काला हिरण ले गया और जब कालिमा का हिरण ले गया तो मानो देखो, बड़ी दुविधा हुई कि यागां ब्रह्मे व्रतम् मुनिवरों! देखो, जब उनका संघर्ष हुआ तो हिरण ने वही याग मानो देखो, वत्रासुर को प्रदान कर दिया। वह वत्रासुर में प्रवेश कर गया। याग वत्रासुर में चला गया। और जब वत्रासुर ने मानो याग को अपने में संग्रहित कर लिया तो उसी समय इन्द्र को यह प्रतीत हुआ कि देखो, याग को काले हिरण ने वत्रासुर को प्रदान कर दिया। तो मेरे पुत्रो! ऐसा वेद मन्त्रों में आया है कि मानो देखो, उन दोनों का संघर्ष हुआ, उन दोनों का भयंकर संग्राम होने लगा। इन्द्र का और वत्रासुर का।

तो मुनिवरों! देखो, वह संग्राम होता रहा। संग्राम होते, होते मेरे प्यारे! इन्द्र ने वत्रासुर ये मानो देखो, अपने वज्र का प्रहार किया। इन्द्र ने जब वज्र का प्रहार किया तो मुनिवरों! देखो, वत्रासुर छिन्न भिन्न हो गए और मुनिवरों! उन्होंने वृष्टि की और वृष्टि करने के पश्चात तो यहाँ एक वेदमन्त्र और आया है। गो व्रणं ब्रह्मे वृखं ब्रहा वाचन्नमं मृत्यु भ्रो मानो वही व्रभो सम्भव प्रति लोकाम् मेरे प्यारे! यहाँ देखो, वेद की एक ओर आख्यायिका आई कि देखो, जब वत्रासुर का छिन्न भिन्न होना, वृष्टि हो गई जब मानो देखो, वृष्टि प्रारम्भ हो गई, तो वृष्टि के प्रारम्भ होते ही, वह कहते हैं कि गो का बछड़ा जो वृख है मानो देखो, उसकी बलि होने लगी। जब उसकी बलि होने लगी तो मेरे प्यारे! देखो, यहाँ वृख की बलि का वर्णन आया।

हमारे वैदिक साहित्यों में मानो बलि का अभिप्राय केवल देखो, शरीर को नष्ट करना नहीं है। बलि का अर्थ यह नहीं है, कि हम प्राणी को नष्ट करने लगे। बलि का अर्थ यह है जैसे माता अपने पुत्र के लिए मानो देखो, सर्वत्र न्यौछावर कर देती है तो वह माता भी बलि कही जाती है क्योंकि माता अपने पुत्र को बलि प्रदान कर देती है। अपना सूत्र दे देती है, मानो देखो, अपने विचार और बाल्य के विचारों में एक महानता का प्रकर्षण करती है तो मानो देखो, वह अपने जीवन की बालक को बलि प्रदान कर देती है।

इसी प्रकार मेरे पुत्रो! देखो, यह जो वृख है, गो का बछड़ा है जब वृष्टि होती है तो पृथ्वी को क्षुधा लगती है कि मैं अपने में समाहित हो जाऊँ। तो मुनिवरों! देखो, यह पृथ्वी अपने में अपने पन को लेकर के समाहित हो जाती है। बड़े विचित्र वाक है बेटा! कि मानो देखो, अपने विचारों में अपने में ही समाहित होना है। समाहित होने का अभिप्राय यह है कि मानो देखो, जब पृथ्वी को क्षुधा लगती है तो देखो, वह बीज की स्थापना की क्षुधा लगती है। वही क्षुधा मानो देखो, गो का बछड़ा पूर्ण करता है। पृथ्वी की चमडी को उधेड़ता है उसके गर्भ में बीज की स्थापना हो जाती है और भी नाना प्रकार के खाद्य और खनिज पदार्थों की उत्पत्ति हो जाती है।

मेरे प्यारे! देखो, पृथ्वी के गर्भ में क्या नहीं है बेटा! मानो देखो, कहीं पृथ्वी के गर्भ में कहीं स्वर्ण है, कहीं रत्नों की धातु का निर्माण हो रहा है। मानो देखो, कहीं जल को शक्तिशाली बनाकर के, मानो वाहनों में क्रिया, वाहनों में गतियों का सञ्चार हो रहा है। वहीं माता के गर्भ में बेटा! नाना प्रकार के खाद्य और खनिज पदार्थ है। उसको वह मानव विज्ञानवेत्ता अपने में ग्रहण करते रहते हैं, राष्ट्र का सञ्चार होता रहता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा कि हे प्रभु! मैं यह जान पाया हूँ, मेरा हृदय मानो इस अन्तिम निर्णय पर पहुँच गया है, अन्तिम चरण में चला गया हूँ कि मानो देखो, ये वृख नाम देखो, गो के बछड़े का है। बलि का अभिप्राय यही है, बलि का अर्थ है पुरुषार्थ करना, बलि का अर्थ है मानो देखो, अपने प्राण और मन को संलग्न करते हुए एक सूत्र में पिरोकर मानो अपने कर्तव्य के पालन का नाम हमारे यहाँ बलि प्रथा मानी गई है। मेरे प्यारे! ये परम्परागतों से है तो आज मैं नवीन बात प्रगट करने नहीं आया हूँ। वेद मन्त्रों में अनन्य समय में बेटा! बलियों का वर्णन है। परन्तु बलि का, अभिप्राय केवल प्राणी को नष्ट करना नहीं है। जैसा मेरे पुत्र महानन्द जी ने मुझे कई कालों में प्रकट कराया कि प्राणी प्राणी का भक्षण करना ही मानो आधुनिक काल में बलि कहलाती है। बलि का अभिप्राय यह होता है कि मानो देखो, पुरुषार्थ और अपने जीवन को दूसरों के जीवन के लिए मानो जो क्रियात्मक क्रियाकलापों में परणित होता है, वह मानो देखो, बलि कर रहा है।

तो मेरे पुत्रो! देखो, विचार विनिमय क्या, किसी भी मानव के द्वारा मानव के रक्तपान करने का या रक्त को ग्रहण करने का हमें अधिकार नहीं होता। विचार केवल यह है कि मानो देखो, बलि का अभिप्राय है पुरुषार्थ। बलि का अभिप्राय एक दूसरे में समाहित होना है। तो मेरे पुत्रो! देखो, संसार के सम्बंध में जब विचारने लगोगे तो यह संसार एक बलि के रूप में दृष्टिपात आने लगेगा।



भस्मासुर के विनाश का अलंकार

जैसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया था। एक समय महाराजा शिव हिमालय में रहते थे। एक बार देखो, महाराजा भस्मासुर उनके द्वार पर पहुँचे। महाराजा भस्मासुर ने कहा कि प्रभु! मैं ये चाहता हूँ कि जिसके सिर के ऊपर मेरा भुज जाएं, सिर के, मस्तिष्क के ऊपर वो भस्म हो जाएं। उच्चारण करते ही महाराजा शिव ने कहा बहुत प्रिय मानो देखो, एक कृति प्रदान की गयी। तो महाराज शिव के यहाँ नृत्य होता रहा है। एक समय भस्मासुर देखो, माता पार्वती पर किसी कारण से मोह की प्रतिभा में जागरुक हो गये। जब मोह की प्रतिभा जागरूक हो गयी, तो उन्होंने ये विचारा कि मैं शिव को भस्म करूँ। जिससे पार्वती को अपनाने की मेरी प्रविष्ट बन जाएं। मानो वह मुझे प्राप्त हो जाएं। ऐसी उन्होंने धारणा बनायी। तो उन्होंने कहा कि भगवन! या तो मुझे पार्वती प्रदान कीजिए अन्यथा मैं आपको भस्म करूँगा। तो उस समय देखो, जब यह वाक्य आया तो शिव ने विचारा, कि मैं क्या करूँ।

विज्ञान के दुरूपयोग से विनाश

महाराजा शिव भ्रमण करते हुए मानो देखो, भगवान विष्णु के द्वार पर पहुँचे। एक एक आलांकारिक रूपों में रत्त रहने वाला शब्द है मानो देखो, जब वह विष्णु के द्वार पर पहुँचे तो उन्होंने कहाचलो, इसकी युक्ति ब्रह्माजी उच्चारण करेंगे। वे ब्रह्माजी के द्वार पर पहुँचे। तो ब्रह्मा जी ने कहा कि महाराज! वह अपने में ही भस्म हो जाएगा। पार्वती और उनका दोनों का नृत्य कराओ और नृत्य में उसका भुज स्वतः ही मस्तिष्क के ऊपर जाएगा तो वह नष्ट हो जाएगा।

आधुनिक विज्ञान का भस्मासुर स्वरूप

मानो देखो, इस प्रकार की युक्ति उन्होंने प्रगट की। वे युक्तियाँ लेकर के मुनिवरों!

देखो, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया कि जब मानो वह भ्रमणं प्रहे दोनों का नृत्य होने लगा। दोनों का नृत्य हुआ तो जहाँ जहाँ पार्वती का भुज जाता वहीं भस्मासुर का जाता तो स्वतः उसने भुजों की प्रतिभा इसी प्रकार की जिससे वह स्वतः नष्ट हो गया।

तो यही आधुनिक काल की देखो, परम्परा है जब विज्ञान पनपता है तो विज्ञान एक भस्मासुर की भान्ति रहता है। ये जो विज्ञान है ये भस्मासुर की भान्ति रहता है। जैसे देखो, अपने में ही निर्माण करता, अपने में ही वह नष्ट हो जाता है। इसी प्रकार देखो, आधुनिक काल का जो विज्ञान है अथवा विज्ञानवेत्ता है उसका देखो, ये भस्मासुर की भान्ति एक नृत्य हो रहा है, प्रकृति का नृत्य हो रहा है वैज्ञानिक पनपता है गृह में और यही गृह विज्ञान की दूषिता से मानो देखो, दूषित होकर के अपने में नष्ट हो रहा है। अपने में कैसे नष्ट हो रहा है? देखो, चारित्रिक जीवन जिस समाज का समाप्त हो जाता है। जिस काल में विज्ञान का दुरूपयोग होता है उस काल में देखो, गृहों की चारित्रिकता जो प्रभु की देन है वह समाप्त हो जाती है। जिसके लिए परम्परागतों से अन्वेषण करता रहता है, अनुसन्धान करता रहा है मानव, परन्तु केवल एक चारित्रिक जीवन को चाहता है उसमें अपने को मृत्यु से पार होना चाहता है। जैसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे कई कालों से प्रगट कराते चले आ रहे है कि मृत्युञ्जयी बनना चाहता है तो इस प्रकार की प्रतिभा तो आज मुझे प्रतीत हो रही है। विज्ञान से प्रारम्भ हुआ है।

आधुनिक काल का विज्ञान मानो देखो, बाह्‌्र जगत से अग्नि से प्रारम्भ हुआ है वह भी अग्नि का नृत्य है यह भी अग्नि का नृत्य है। परन्तु इस अग्नि के नृत्य में चित्रावली महान है। परन्तु देखो, दोनों की महानता एक सूत्र में आ जाती है। जब ये एक ही सूत्र में आ जाती है तो मुझे तो कुछ ऐसा दृष्टिपात प्रतीत होता है कि इसमें मानव का कोई देष नहीं है ये वैज्ञानिकों के राजा के राष्ट्र में जो विज्ञान का दुरूपयोग है, विज्ञान का जो त्रास है जो विज्ञान मानव को ये कहता है कि देखो,

आज अगर वायु में एक यन्त्र को त्याग देते तो प्राणी नष्ट हो जाएगा। अरे, भोले प्राणियो! मैंने ये वाक कई काल में वर्णन किया है कि ये जब प्राणी नष्ट होगा तो होकर रहेगा। परन्तु तुम उससे प्रथम ही मृत्यु को क्यों प्राप्त हो रहे हो, देखो, आगे के वाक्यों को प्रभु जानता है, नियमन करने वाला जानता है।

विज्ञान, प्रभु की वैदिक देन

मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रगट कराया कि आधुनिक काल का जो विज्ञान है वह अपने में त्रास दे रहा है। भस्मासुर की भान्ति अपने को मृत्यु के आङ्गन में पहुँचा रहा है। परन्तु विज्ञान एक मानवीय तथ्य और मानव का जन्म सिद्ध अधिकार होता है। क्योंकि विज्ञान तो एक मानवीय देन कहलाती है। ये तो प्रभु! की वैदिक देन है। मानो देखो, जो ज्ञान और विज्ञान में रत्त नहीं होना चाहता, उस प्राणी का जीवन अधूरे पन में रहता है। परन्तु विज्ञान अपने से पूर्णत्व होना चाहिए। विज्ञान अपने में धाराओं में होना चाहिए। अरे, मानव! तू मृत्यु का त्रास तो दे रहा है। अरे, कहीं तुझे जीवन की धारा का भी उद्घोष करना चाहिए। कि मैंने विज्ञान से ऐसे यन्त्रों को निर्माणित किया जिससे जीवन प्राप्त होगा। परन्तु ये तो हम भी जानते हैं परम्परागतों से ही, देखो, शरीर का प्राणान्त होना है। परन्तु देखो, प्राणों को जीवन देने की भी तो कोई प्रतिक्रिया होनी चाहिए। ऐसा मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को निर्णय कराया आज भी मुझे पुनः से वह वाक स्मरण आ रहा है।

महर्षि अगस्त्य और आत्मा



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

मुनिवरों! मेरे प्यारे महानन्द जी! एक लोक कथा वर्णन किया करते हैं, जिसे बारम्बार उच्चारण किया करता हूँ, यह वाक्य मुझे बड़ा सुन्दर लगा करता है। जैसे मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ साहित्य में न ले करके उसी वाक को हम अपने में मानो अलंकार में लेते है जैसे मुझे एक समय मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे एक वाक वर्णन कराया था कि अगस्त मुनि की चर्चा मुझे स्मरण कराई कि देखो, अलंकारम् भूतं ब्रहे मानो देखो, अगस्त मुनि ने अपने में समुद्र को पान कर लिया था, और समुद्र को पान करके उसको खारी बना करके मानो उपस्थ इन्द्रिय के द्वारा त्याग दिया सर्वत्र समुद्र को पान करके और उसे खारी बना के जब त्याग दिया जाता है तो मानो देखो, इतिहास की चर्चा नहीं, यह आलंकारिक वाक बन गया है। परन्तु देखो, जैसे हमारे यहाँ कहा जाता है कि उसी समय जब वह खारी बना करके और वह क्यों बनाया? क्या आत्मा के दोनों पुत्र, समुद्र ने अपनी तरंगों में तरंगित कर लिए थे तो उस समय मानो देखो, वह बड़ी व्याकुल हो रही थी, और व्याकुल होने से उन्होंने देखो, समुद्र का पान कर लिया और उनके दोनों पुत्रों! की रक्षा हो गई तो यह मानो एक अलंकार है यह इतिहास ये साहित्य नहीं हो सकता। तो विचार आता है बेटा! देखो, अमृतं ब्रह्मा सर्वश समुद्र को पान करना चाहे वह मानो जगत रूपी समुद्र हो, चाहे वह मानो जलाशय का समुद्र हो दोनों का पान करना मानो देखो, अलंकार में सिद्ध होगा, यह इतिहास में सिद्ध नहीं हो सकेगा तो इसीलिए देखो, साहित्य और इतिहास मानो देखो, अपने में अलंकारों में, दोनो मानो देखो, एक दूसरे के सत्यतव को धारण करते रहे है परन्तु जब दोनों का समन्वय कर लिया जाएगा तो दोनों को समन्वय करते हुए दोनों की प्रतिभा नष्ट हो जाएगी क्योंकि अलंकार को यदि हम इतिहास में परणित कर देते है, तो इतिहास भी इतिहास नष्ट हो जाता है। इतिहास में एक अपवाद बन जाता है और यदि इतिहास को हम अलंकार में परणित करते है तो अलंकार भी एक अपवाद में परणित हो जाता है। तो इसीलिए हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में यह आता रहा है, विचारकों के मध्य से यह आता रहा है जब अलंकार को, उन्होंने वेद मन्त्रों से गठित

किया और वेदमन्त्र में एक मन्त्र आता है अमृतं अगस्तां भूकर्कृति देवा अन्वेब्रहा रक्षां भूतं ब्रह्मे अमृति देवत्वाम् मनाः वाचं मनोगातम मनि वृण सुति देवा बेटा! यह जब वेदमन्त्र जब स्मरण आता है और वेदमन्त्र ये कहता है क्या अगस्तां भूते मानो देखो, हमारे यहाँ अगस्त नाम आत्मा का वाची कहलाया गया है हम जब अलंकारों में जाते है तो अगस्त मानो देखो, आत्मा का वाची है आत्मा का वाची होने से उसी आत्मा अमृतम क्योंकि आत्मा को अगस्त कहा जाता है परन्तु विवेकाम् भूते ब्रह्मण वेद का वाक कहता है कि विवेक का नाम अगस्त कहा जाता है विवेकां भूति ब्रहणा मानो उस समय आत्मा का नाम आत्मा बन जाएगा और जब आत्मा ग्राहा टटे वाहा अन्य तत्त्वन्य ब्रहे जानना होगा तो मुनिवरों! देखो, आत्मा के दो पुत्र है और वह कुछ जिससे मानो देखो, आत्मा का जगत बनता है, वह दोनों पुत्र है मुनिवरों! देखो, इसको मन और बुद्धि कहते है मन, बुद्धि जब इस संसार रूपी जगत में मानो जब वह भ्रमित हो जाते है मेरे प्यारे! देखो, मन भी भ्रमित है, और बुद्ध भी भ्रमित हो रही है, तो मानो देखो, उसको संसार रूपी समुद्र में दोनों भ्रमित हो गएं दोनों की मानो रक्षा कैसे हो? तो मुनिवरों! देखो, रक्षा का प्रसंग आता है तो उस समय कौन रक्षा करें? तो मुनिवरों! उस समय विवेक जागरूक होता है, जब मुनिवरों! देखो, विवेक जागरूक हो जाता है तो उस समय आत्मा मानो देखो, विवेक रूपी अमृतां मानो देखो, समुद्र को शान्त करना चाहता है उस समय आत्मां भूतं ब्रह्मे मेरे प्यारे! देखो, विवेक रूपी जो अगस्तं ब्रहे अगस्त उत्पन्न होता है और अगस्त मुनिवरों! देखो, विवेक से ही संसार को खारी बना दिया जाता है, मेरे प्यारे! उपस्थ इन्द्रिय के द्वारा त्यागने का जो विचार आता है बेटा! देखो, वह विवेक से आता है वह जितने काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह इत्यादि जो ये इन तरंगों का जो समुद्रों से तरंगे उत्पन्न हो रही है, प्रकृति से, इनके जब वह अपने में धारण कर लेता है, तो धारण करने से मुनिवरों! देखो, विवेक युक्त बन करके अमृतं देखो, यह संसार न होने के तुल्य बन गया। कैसे बन जाता है? जैसे हमारी इन्द्रियां मानो देखो, इन्द्रियों के ऊपर जब पाना चाहते है, तो वही रूप बन गई, जिससे वह इन्द्रियों का जन्म हुआ था। जैसे नेत्रों का जन्म अग्नि से हुआ है, श्रोत्रों का जन्म दिशाओं से हुआ है, शब्द का जन्म अन्तरिक्ष से हुआ है, और मुनिवरों! त्वचा का जन्म देखो, वायु से हुआ है, इसी प्रकार रसना का जो जन्म है, वह जल से हुआ है चन्द्रमा से और जल से समन्वय रहता है। इसी प्रकार मेरे पुत्रों! देखो, अमृतं ब्रह्मा यह अपने ही, जब इनको जाना गया तो अपने रूप में परणित हो गये। इनका अपना कोई गोलक नहीं रहा है, केवल गोलकने में ही बने रह गएं है, परन्तु इनका जो स्वरूप है कोई स्वतः अग्नि बन गया, कोई दिशा बन गया, कोई आपो बन गया, कोई अन्तरिक्ष बन गया, अमृतं मेरे प्यारे! अपने रूप में प्रवेश कर गया, तो जब यह अपने इनको जान करके, इसी प्रकार काम को जानने का प्रयास किया गया तो काम मुनिवरों! देखो, जगत में परणित हो गया उसका रूप मानो देखो, कामं बृहि कमीक्ष्या बन

गया। तो मेरे प्यारे! यदि हम मोह को जानना चाहे तो मोह मुनिवरों! देखो, जब आत्मा से विवेक से मोह हो जाता है तो मोह भी एक विवेक बन गया इसी प्रकार मेरे प्यारे! देखो, लोक का हम अनुष्ठान करते है तो वह अहङ्कार के रूप में परणित हो गया है और वही अहङ्कार से मुनिवरों! देखो, संसार के पिण्ड बनते है और पिण्ड को विकृत करने के पश्चात बेटा! देखो, वहीं अणु और परमाणु के रूप में परणित हो गया मेरे प्यारे! देखो, यदि हम रसना के जब आपो में प्रवेश करते हैं, वही आपो मुनिवरों! देखो, प्राण रक्षक बन गया है, और सीमा में वही प्राणों का रक्षक है, और वहीं मुनिवरों! देखो, अग्नि में वही वासना बन करके, हमारे जीवन का विनाश होने लगता है। तो बेटा! देखो, अपने अपने स्वरूप में, जब प्रत्येक स्वरूप अपने स्वरूप में प्रवेश हो गया है, तो मेरे प्यारे! देखो, अपना कहाँ ब्रह्मणे ब्रहा कृतं तो बेटा! देखो, यह विवेक से मुनिवरों! देखो, अगस्त बन करके और विवेक उत्पन्न हो करके अगस्त मेरे प्यारे! संसार को निगलता चला गया और संसार में जो आत्मा और मन भ्रमित आत्मा और देखो, बुद्धि दोनों पुत्र भ्रमित हो गएं थे। उनका भ्रम शान्त हो गया, तो मेरे प्यारे! देखो, अपने स्वरूप में प्रवेश हो करके मेरे पुत्रों! देखो, केवल एक अलंकार रह गया, इसको हम आध्यात्मिकवाद में जब ले जाते हैं, तो आध्यात्मिकता की प्रतिभा में प्रतिष्ठित हो जाता है।

महाराजा शिव और भस्मासुर



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

राष्ट्र में अनिष्टकारी जब विज्ञान पनपता है तो वह देखों, अपने ही यन्त्रों से अपने ही मानों कंगन के आभूषणों से जो स्वतः नष्ट होने वाला विज्ञान है। मेरे प्यारे! देखो, वह राष्ट्र के लिए ही हानिप्रद होता है। उसे हमारे यहां रूढ़िवाद में परिणत माना जाता है। उसे रूढ़ि कहते हैं, जो राष्ट्र द्वितीय राष्ट्रों को नष्ट करने वाले यन्त्र का निर्माण करता है, वह यन्त्र स्वतः अपने राष्ट्र के लिए हानिप्रद होता है। जैसे भस्मासुर की गाथा है। जिसमें भस्मासुर एक विज्ञानवेता मानो देखो, एक रूढ़िवाद में परिणत किया गया है। आज का विज्ञान है वह भस्मासुर की भांति है। यह समाज अपने ही विज्ञान स्वतः नष्ट हो जायेगा। वह काल आने वाला है। आज का वैज्ञानिक कहता है कि परमात्मा नहीं है जबकि परमात्मा के रचना किए हुए, बिखरे हुए कणो, को एकत्रित करके वैज्ञानिक बन रहा है और कहता है कि परमात्मा है ही नहीं। अरे! वह कंगन जिससे तुमने निर्माण किया है वह प्रभु के ही तो बिखरे हुए कण हैं, वह कण तो प्रकृति के ही है। उसके पश्चात भी तुम यह कहते हो कि परमात्मा हे ही नहीं। अरे परमात्मा की तो तब जाना जाता है जब आत्मा के चक्षु स्पष्ट हो जाते हैं। अब तुम इन नेत्रों से पारमात्मा को दृष्टिपात करना चाहते हो तो वह उससे दृष्टिपात नहीं होगा। (760524)

एक समय महाराजा शिव हिमालय में रहते थे। एक बार देखो, महाराजा भस्मासुर उनके द्वार पर पहुँचे। महाराजा भस्मासुर ने कहा कि प्रभु! मैं ये चाहता हूँ कि जिसके सिर के ऊपर मेरा भुज जाएं, सिर के, मस्तिष्क के ऊपर वो भस्म हो जाएं। उच्चारण करते ही महाराजा शिव ने कहा बहुत प्रिय मानो देखो, एक कृति प्रदान की गयी। तो महाराज शिव के यहाँ नृत्य होता रहा है। एक समय भस्मासुर देखो, माता पार्वती पर किसी कारण से मोह की प्रतिभा में जागरुक हो गये। जब मोह की प्रतिभा जागरूक हो गयी, तो उन्होंने ये विचारा कि मैं शिव को भस्म करूँ। जिससे पार्वती को अपनाने की मेरी प्रविष्ट बन जाएं। मानो वह मुझे प्राप्त हो जाएं। ऐसी उन्होंने धारणा बनायी। तो उन्होंने कहा कि भगवन्! या तो मुझे पार्वती प्रदान कीजिए अन्यथा मैं आपको भस्म करूँगा। तो उस

समय देखो, जब यह वाक्य आया तो शिव ने विचारा, कि मैं क्या करूँ।
महाराजा शिव भ्रमण करते हुए मानो देखो, भगवान विष्णु के द्वार पर पहुँचे। एक एक आलांकारिक रूपों में रत्त रहने वाला शब्द है मानो देखो, जब वह विष्णु के द्वार पर पहुँचे तो उन्होंने कहा चलो, इसकी युक्ति ब्रह्माजी उच्चारण करेंगे। वे ब्रह्माजी के द्वार पर पहुँचे। तो ब्रह्मा जी ने कहा कि महाराज! वह अपने में ही भस्म हो जाएगा। पार्वती और उनका दोनों का नृत्य कराओ और नृत्य में उसका भुज स्वतः ही मस्तिष्क के ऊपर जाएगा तो वह नष्ट हो जाएगा।
मानो देखो, इस प्रकार की युक्ति उन्होंने प्रगट की। वे युक्तियाँ लेकर के मुनिवरों! देखो, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया कि जब मानो वह भ्रमणं प्रहे दोनों का नृत्य होने लगा। दोनों का नृत्य हुआ तो जहाँ जहाँ पार्वती का भुज जाता वहीं भस्मासुर का जाता तो स्वतः उसने भुजों की प्रतिभा इसी प्रकार की जिससे वह स्वतः नष्ट हो गया।
तो यही आधुनिक काल की देखो, परम्परा है जब विज्ञान पनपता है तो विज्ञान एक भस्मासुर की भान्ति रहता है। ये जो विज्ञान है ये भस्मासुर की भान्ति रहता है। जैसे देखो, अपने में ही निर्माण करता, अपने में ही वह नष्ट हो जाता है। इसी प्रकार देखो, आधुनिक काल का जो विज्ञान है अथवा विज्ञानवेत्ता है उसका देखो, ये भस्मासुर की भान्ति एक नृत्य हो रहा है, प्रकृति का नृत्य हो रहा है वैज्ञानिक पनपता है गृह में और यही गृह विज्ञान की दूषिता से मानो देखो, दूषित होकर के अपने में नष्ट हो रहा है। अपने में कैसे नष्ट हो रहा है? देखो, चारित्रिक जीवन जिस समाज का समाप्त हो जाता है। जिस काल में विज्ञान का दुरुपयोग होता है उस काल में देखो, गृहों की चारित्रिकता जो प्रभु की देन है वह समाप्त हो जाती है। जिसके लिए परम्परागतों से अन्वेषण करता रहता है, अनुसन्धान करता रहा है मानव, परन्तु केवल एक चारित्रिक जीवन को चाहता है उसमें अपने को मृत्यु से पार होना चाहता है। जैसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे कई कालों से प्रगट कराते चले आ रहे है कि मृत्युञ्जयी बनना चाहता है तो इस प्रकार की प्रतिभा तो आज मुझे प्रतीत हो रही है। विज्ञान से प्रारम्भ हुआ है।
आधुनिक काल का विज्ञान मानो देखो, बाह्य जगत से अग्नि से प्रारम्भ हुआ है वह भी अग्नि का नृत्य है यह भी अग्नि का नृत्य है। परन्तु इस अग्नि के नृत्य में चित्रावली महान है। परन्तु देखो, दोनों की महानता एक सूत्र में आ जाती है। जब ये एक ही सूत्र में आ जाती है तो मुझे तो कुछ ऐसा दृष्टिपात प्रतीत होता है कि इसमें मानव का कोई देष नहीं है ये वैज्ञानिकों के राजा के राष्ट्र में जो विज्ञान का दुरुपयोग है, विज्ञान का जो त्रास है जो विज्ञान मानव को ये कहता है कि देखो, आज अगर वायु में एक यत्र को त्याग देते तो प्राणी नष्ट हो जाएगा। अरे, भोले प्राणियो! मैंने ये वाक कई काल में वर्णन किया है कि ये जब प्राणी नष्ट होगा तो होकर रहेगा। परन्तु तुम उससे प्रथम ही मृत्यु को क्यों

प्राप्त हो रहे हो, देखो, आगे के वाक्यों को प्रभु जानता है, नियमन करने वाला जानता है। (850331) इस वाक्य का अभिप्राय क्या है? भस्मासुर वही होता है, जो संसार में अभिमानी होता है। आज भौतिक विज्ञानवेत्ता जो समाज है, जिसने अणु, महाअणु, त्रिसरेणु इत्यादि नाना प्रकार के कंगन रूपी यन्त्र एकत्रित किये हैं, जैसे आग्नेयास्त्र हैं, कहीं ब्रह्म-अस्त्र है। परन्तु जहां आत्मा का ज्ञान नहीं होता, वहां मानव केवल अनीति से नाना यंत्रों को एकत्रित करता है, नाना कंगन रूपी यंत्रों को बनाता है और परमात्मा शिव को नष्ट करना चाहता है। तो उस काल में जब मर्यादा का उल्लंघन होता है, तो माता पार्वती का नृत्य होता ही है और नृत्य हो करके यह जो भौतिक विज्ञानवेत्ता परमाणुवाद का समाज है, वह स्वयं उस भयंकर अग्नि में भस्म हो जाता है। पार्वती नाम प्रकृति को कहा जाता है। शिव नाम परमात्मा को कहा जाता है और भौतिक विज्ञानवेत्ता में जब अभिमान हो जाता है तो उस अभिमान को हमारे यहां भस्मासुर कहते हैं। (671026)

माता गायत्री



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

हे मेरे भोले! जब मानव इस आकृति में, गायत्री छन्दों में रमण करता है, जहाँ जाते हैं, वहीं माता विराजमान है, न प्रतीत हमें क्या दण्ड दें, जैसे बालक माता से भयभीत रहता है, और माता की भावुकता में रमण करता रहता है और माता अपने हृदय से पुत्र को लगा लेती है और यह चाहती है, कि मेरा पुत्र पवित्र बने, इसमें किसी प्रकार की त्रुटि न रहे, यह मेरे गर्भ को ऊँचा बनाने वाला हो, इसी प्रकार गायत्री माता भी चाहती है।

मुनिवरों! भक्त की जब यह दशा हो जाती है, कि यदि मैं कोई पाप करूंगा, तो माता मुझे दृष्टिपात कर लेगी और न प्रतीत क्या दण्ड दे, तो उस समय यह महान पवित्र गायत्री उस मानव को कण्ठ में धारण कर लेती है, मानो अपने में ओत प्रोत कर लेती है, जैसे एक प्रिय बालक होता है, जो माता पिता के नाना प्रकार के क्रोध की सीमाओं को नष्ट कर देता है, जैसे मैंने तुम्हें एक अलंकार भी नियुक्त किया था

एक राजा था। राजा के यहाँ एक सूक्ष्म सा बालक था। परन्तु वह राजा किसी साधु संगति में आत्मिक ज्ञान की चर्चा करने जाता था। वहाँ एक गान गाया जाता था, कि अरे, मानव! तू विरोध न कर, परमात्मा का चिन्तन कर, तुम्हारे द्वारा प्रीति होनी चाहिए, यह बालक पूर्व गान का फल था। बालक ने वह ही अपने कण्ठ में धारण कर लिया।

कुछ समय के पश्चात राजा और उनकी पत्नी दोनों का विरोध हो गया, और दोनों ने प्रतिज्ञा कर ली कि अब एक दूसर से कोई वाक्य उच्चारण नहीं करेंगे। अधिक समय हो गया, राजा और रानी दोनों की इच्छा हुई, कि हमें दोनों में कैसे प्रेम भाव हो, कैस मिलान हो, परन्तु एक दूसर से वाक्य न मिलान करने की प्रतिज्ञा

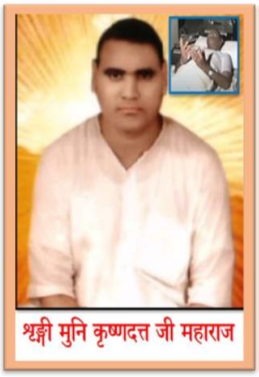
थी।

एक दिन बालक सत्संग से आया और पिता के स्थान पर कहने लगा, अरे, मानव! तू विरोध न कर, परमात्मा का चिन्तन कर, पिता ने कहा कि अरे, अपनी माता से जाकर उच्चारण करो, माता के स्थान पर गया और उच्चारण किया अरे, मानव! विरोध न कर, परमात्मा का चिन्तन कर, प्रेम प्रीति से रह। जब ऐसा कहा तो माता न कहा कि अरे, पिता के द्वार जाओ। अब पिता के द्वार पहुंचे, तो पिता ने कहा, माता के द्वार जाओ, बालक ने सोचा कि अब यह दोनों हो मुझे उच्चारण नहीं करने देंगे, वह दोनों के मध्य में विराजमान होकर वह वाक्य उच्चारण करने लगा, अब मुनिवरों! एक स्थान से माता ने उसे कण्ठ लगाया और एक स्थान से पिता ने कण्ठ लगाया।

मुनिवरों! देखो, उस बालक के प्रति माता पिता का प्रेम कितना उज्ज्वल था, कितनी ऊँची क्रोध की सीमा का नष्ट किया, उस बालक ने।

मुनिवरों! इसी प्रकार योगी परमात्मा का बालक बनता है, माता गायत्री का बालक बनता है, गायत्री का अनुकरण करता है, माता ही माता को पुकारता है और उसमें ओत प्रोत हो जाता है, तो उसे माता ही माता प्रतीत होती है। एक स्थान प्रकृति गायत्री माता और एक स्थान से ब्रह्मा पिता उस महान आत्मा को अपने हृदय में धारण कर लेते हैं। वह ऋषि बन जाता है, योगी बन जाता है। प्रकृति माता कहलाती है परमात्मा पिता कहलाता है, दोनों के मध्य में जो विरोध था, उसको इस महान आत्मा ने दोनों का अपनाते हुए, नष्ट कर दिया। प्रकृति को वैज्ञानिक रूपों से अपनाया और परमात्मा को उपासक रुप में अपना कर, मुनिवरों! संसार में वह उपासक, ज्ञानी और वैज्ञानिक योगी कहलाता है। आओ, हम उस प्रभु का अनुकरण करते चले जाएं, उस माता का अनुकरण करते चले जाएं, जो गायत्री माता अपने हृदय को पवित्र बनाती है, जो गायत्री हमें ऐसा अनुपम ज्ञान देती है।

वत्रासुर और काला हिरण





परन्तु देखो, वह हुत कर रहा है, हुताम् भूताम ब्रह्मणा लोकाम् अमृतम् ब्रह्मे देवत्वाम् लोकम् वसुतम ब्रह्ममेरे प्यारे! देखो, वह हुत कहलाता है जो देवताओं को प्रसन्न किया जाता है। काला हिरण याग को ले गया बेटा! मुझे एक समय वर्णन करते मुझे एक आख्यायिका स्मरण आती रहती है। मेरे प्यारे! देखो, एक जिज्ञासु याग कर रहा था। याग को एक समय बेटा! काला हिरण ले गया और काले हिरण ने बेटा! वत्रासुर को प्रदान कर दिया और वत्रासुर ने बेटा! देखो, वृष्टि कर दी और वृष्टि कर दी तो गऊ के बछड़े की बलि का वर्णन आया। तो मेरे प्यारे! देखो, इसमें ऋषि मुनि अपने में विचारने लगे बल देखो, बैल के अमृतम् देखो, गऊ के बछड़े ने पृथ्वी के मानो देखो, चमड़ी को उधेड़ करके अमृतम् देखो, इसमें अन्न की स्थापना की। मेरे पुत्रो! देखो,जब यह यज्ञ चला गया तो देवताओं ने प्रार्थना की और इन्द्र से कहा हे इन्द्र! हमारे यहाँ से देवता अमृतम् दैत्यम् ब्रह्मा वत्रासुर हमारा यज्ञ ले गया है। तो उस समय मानो देखो, इन्द्र के समीप शचि जाती है और शचि ने कहा हे देव! देवता क्या पुकार कर रहे हैं? तुम मानो देखो, देवताओं की वाणी को श्रवण करो। उन्होंने बेटा! देवताओं की वाणी को श्रवण किया। इन्द्र ने कहा बहुत प्रिय मैं इसको निकासने का प्रयास करूँगा। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने गोतम ब्रहे वह वत्रासुर को अपने प्राण रूपी वज्र को ले करके बटो! देखो, हमारे यहाँ वायु को यहाँ इन्द्र कहा गया है इन्द्र ने वायु रूपी वज्र को ले करके वत्रासुर कहते हैं मेघ मण्डलों, को उन्हें छिन्न भिन्न कर दिया और वृष्टि हो गइ और वृष्टि हो करके ही मानो देखो, गऊ के बछड़ों ने अमृतम् देखो, वह पृथ्वी की चमड़ी को उधेड़ करके उसमें बीज की स्थापना कर देई। तो मेरे पुत्रो! देखो, हिरण्यम्ब्रह्मा यह हिरण नाम यागांम् भूतम् ब्रहे धुएं का नाम हिरण है जो याग को ले जाता है और याग कहते हैं जो यागाम् जितना भी सुविचार है, शुक्रिया है, स्वाहा है वह सर्वत्र मानो देखो, प्रजा की सु

भावना है। तो आज मैं बेटा! इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नहीं केवल मैं अलंकारों की चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ। यह मानो देखो, अलंकार हैं मैं अलंकारों में जाना नहीं चाहता हूँ। विचार विनिमय केवल यह कि मुनिवरों! देखो, कि हिरण्यम् ब्रहे यह हुत कहलाता है जो कहता है हुतम् ब्रह्मा देखो, प्राणाय स्वाहा आसुतम ब्रह्मे लोकाम् स्वाहा प्रजापतये स्वाहा कह करके यजमान अपने याग को मानो देवताओं को प्रसन्न करता है। तो उसे मानो देखो, अन्न एक हुत जिससे देवता प्रसन्न होते हैं, प्रदूषण समाप्त होता है वायु मण्डल जिससे पवित्र बन जाता है।

लक्ष्मी और विष्णु की वार्त्ता-लोकोक्ति



मेरे प्यारे! देखो, तो बेटा! मानो देखो, शेषनाग की शैय्या पर कौन विद्यमान है वह ब्रह्माः ब्रहे वह विष्णु है वह आत्मा है। मेरे प्यारे! देखो, शेषनाग से भी जब वह विर्धो अश्वात होता है तो बेटा! देखो, लक्ष्मी चरणों में ओत प्रोत प्राप्त हो जाती है। जब मुनिवरों! देखो, वह शेषनाग को अपने नीचे दबा लेता है जो लक्ष्मी संसार को लुभाने वाली है। बेटा! देखो, यही लक्ष्मी हमें प्राप्त हो जाती है। ये चरणों की वन्दना करने लगती है। ये चरणों में ओत प्रोत हो जाती है। मेरे प्यारे! जहाँ लक्ष्मी रहती है धर्म होता है और जहाँ धर्म नहीं होता वहाँ से लक्ष्मी अपना उत्थान कर जाती है। तो मेरे प्यारे! मैंने बहुत पुरातन काल में एक लोकोक्ति प्रकट करते हुए तुम्हें कहा था कि एक राजा थे। मानो देखो, राजा अपने यहाँ आनन्दवत में रहते थे। मेरे प्यारे! देखो, एक समय भगवान विष्णु और लक्ष्मी दोनों का विवाद हो गया। जब दोनों का भयंकर विवाद हुआ तो विष्णु बोले कि हे लक्ष्मी! जो मेरे प्रिय भक्त होते हैं वे मानो तुम्हें नहीं जान पाते। मेरे प्यारे! लक्ष्मी बोली कि जो तुम्हारे भी प्रिय भक्त होते हैं। वहाँ मेरा वास हो जाता है। वहाँ विष्णु का कोई महत्व नहीं रह पाता।

मेरे प्यारे! दोनों में विवाद हुआ तो लक्ष्मी बोली कि महाराज! परीक्षा हो जाएं। तो मेरे प्यारे! देखो, भगवान विष्णु भ्रमण करते हुए राजा के समीप पहुँचे। राजा ने उनका स्वागत किया। राजा ने कहा प्रभु! हमें तो आवश्यकता थी कि एक सन्यासी, महापुरुष मानो हमारे आश्रम में रहे। तो उन्होंने कहा भगवन! आप यहाँ वास कीजिए। विष्णु बोले कि मेरे लिए एक स्थान का निर्माण होना चाहिए। मेरे पुत्रो! देखो, राजा को क्या देरी थी। देखो, राजा ने एक स्थान का निर्माण किया उस आसन पर मानो देखो, भगवान विष्णु साधु महात्मा के रूप में बेटा! वहाँ विद्यमान हो गए। जब विद्यमान हो गए तो राजा पत्नी के सहित मानो नित्य प्रति बेटा! उनके यहाँ सत्संग होता, विचार होता, वेद का विचार होता, मन्त्रों के ऊपर अध्ययन होता रहा।

तो मेरे प्यारे! देखो, राजा मोहित हो गया। राजलक्ष्मी अति प्रसन्नता में परणित हो गई। मेरे प्यारे!

राज्य में हर प्रकार की शान्ति की स्थापना हो गई। तो मेरे प्यारे! देखो, कुछ समय के पश्चात लक्ष्मी राजा के यहाँ भिक्षु का रूप बनाकर के राजा से बोली हे राजन! भिक्षां देहि, मेरे प्यारे! राजा ने कहा माता है, मानो क्षुधा से पीड़ित है। वे मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार के पदार्थों को लेकर के देवी के समीप आये, उन्होंने , माता ने अपनी झोली से देखो, पाँच पात्र स्वर्ण के निकासे निकाल कर दिए और कहा राजन! इनमें , स्वर्ण पात्र में भोजन भर दीजिए उन्होंने विचारा ये कैसी भिखारन है। मानो देखो, ये कैसी भिक्षुक है? जिसके द्वारा मानो स्वर्ण रहता हो, स्वर्ण के पात्रों में भोजन करने वाली हो। उन्होंने कहा प्रभु ब्रह्मे वाचप्रही लोकाम हे माता! भोजनं मम। ब्रहे उन्होंने भोजन किया और वह बोली कि ये जो पात्र है। इसको मेरे से पृथक कर दीजिए। मैं पात्र को नहीं चाहती। पात्र में एक समय भोजन कर लेती, द्वितीय नहीं कर पाती। तो मेरे प्यारे! राजा ने विचारा यह भिक्षुक माता तो बड़ी आश्चर्यजनक है। राजा ने विचारा कि यह कुछ समय तक रह जाए, तो मैं स्वर्णपति बन जाऊँगा।

तो बेटा! उन स्वर्ण के पात्रों को गृह में प्रवेश कर दिए। मुनिवरों! देखो, वह नित्यप्रति भोजन करती और पाँच पात्र स्वर्ण के निकास कर दे देती। तो मेरे प्यारे! जब लक्ष्मी ने विचार लिया कि ये धर्म से विमुख हो गया है। मानो विष्णु से विमुख हो गया है। तो उस समय राजा से कहा हे राजन! अब मैं यहाँ से प्रस्थान कर रही हूँ उन्होंने कहा माता! तुम कहाँ जाती हो? मेरे यहाँ वास करो। उन्होंने कहा मेरी कुछ प्रतिज्ञाएँ है। उन्होंने कहा माता! क्या प्रतिज्ञा है? कि मैं उस काल में रह सकूँगी जब ये जो तुम्हारी वाटिका में महात्मा रहते है इसका यहाँ से प्रस्थान हो जाए। मानो यहाँ से इसका गमन हो जाए।

तो मेरे पुत्रो! देखो, उन्होंने कहा माता! वे तो मेरे पूज्य गुरु है, मुझे शिक्षा देते हैं मैं ऐसा नहीं कर सकता। उन्होंने कहा तो मेरा यहाँ वास नहीं हो सकता मैं यहाँ वास नहीं कर सकती। उन्होंने कहा माता! तुम युक्ति उच्चारण करो। उन्होंने कहा तुम इनके सम्मुख न जाओ, न भोजन पहुँचाओ। कुछ समय पश्चात ये क्षुधा में पीड़ित होकर स्वतः प्रस्थान कर जाएँगें।

मेरे प्यारे! देखो, राजा ने लक्ष्मी के इस वाक को स्वीकार कर लिया। देखो, दोनों ने वहाँ जाना समाप्त कर दिया। कुछ समय के पश्चात बेटा! महात्मा विष्णु ने वहाँ से गमन किया। लक्ष्मी स्वर्ण पात्र देती रही।

बेटा! कुछ समय के पश्चात लक्ष्मी ने कहा राजन! अब मुझे आज्ञा दीजिए। मैं यहाँ से अब प्रस्थान कर रही हूँ, राजा बोला मातेश्वरी! तुम कहाँ जाती हो? मैंने तो महात्मा को भी दूरी कर दिया। अब तुम मानो देखो, मुझे त्याग करके जा रही हो। ये तो मेरे लिए श्राप हो जाएगा। उन्होंने कहा नहीं, राजन! अब मैं नहीं रह सकूँगी। जहाँ मेरे पति विष्णु रहते थे विष्णु जब तुमने मेरे पति को ठुकरा

दिया तो जहाँ पति रहता है वहाँ पत्नी रहती है। तो हे राजन! मानो देखो, तुमने मेरे स्वामी को भोजन नहीं दिया। मानो देखो, वह धर्म है वे महान विष्णु है। वे मेरे पति है। तो मेरे प्यारे! देखो, ये जो पतिं ब्रह्मा: ये जो लक्ष्मी है ये धर्म की पत्नी कहलाती है इसका यथार्थ उपयोग होना चाहिए।

तो मेरे प्यारे! देखो, लक्ष्मी ने वहाँ से गमन किया। देखो, वे जो स्वर्ण पात्र थे वह देखो, पार्थिव तत्त्वों के बन गए। मानो वे स्वर्ण के न रहे। मेरे प्यारे! देखो, राजा ने कहा ओह, मैंने कितना बड़ा पाप किया है। मैंने महात्मा को अपने से दूरी कर दिया मानो मेरा राष्ट्र तो नष्ट भ्रष्ट हो गया है।

तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय में क्या? ये जो है लक्ष्मी मानो देखो, जो आत्मवेत्ता होता है मानो देखो, लक्ष्मी उनके चरणों में ओत प्रोत हो जाती है। लक्ष्मीं ब्रह्म: वाचो: और यदि लक्ष्मीं ब्रह्मे व्रता: मेरे प्यारे! जो लक्ष्मी का पूजन नहीं करता। पूजन का अभिप्राय ये है कि लक्ष्मी का सदुपयोग होना चाहिए। जो लक्ष्मी का देखो, सदुपयोग करता है उसके गृह में देवी वास करती है मानो देखो, सदुपयोग क्या है? देवताओं का याग करना, मानो देखो, अपने को शुभ क्रियाकलापों में लगाना। इसका दुरूपयोग जब करता है प्राणी, तो मानो देखो, उसका विनाश हो जाता है। धर्म जब नहीं रहता। तो तभी यह मानो देखो, लक्ष्मी का दुरूपयोग प्रारम्भ करता है।

तो मुनिवरों! देखो, जो अक्षय क्षीर सागर में काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह इत्यादियों को नीचे दबाकर रखता है योगाभ्यास के द्वारा प्राण सूत्र के द्वारा तो बेटा! ये लक्ष्मी मानो देखो, उसके चरणों में ओत प्रोत हो जाती है। मेरे प्यारे! ये सम्पदा बनकर के जीवन की धारा बनकर के ये मानवीयता को ऊँचा बना देती है। (851017)

विष्णु का वाहन गरुड़


श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

मुझे स्मरण आता रहा है कि महाराजा विष्णु! का जो वाहन है वह गरूड़ माना गया है। परन्तु गरूड़ की कल्पना करना हमारे लिए असम्भव हो जाता है परन्तु जब उसका वास्तविक स्वरूप हमारे समक्ष आना प्रारम्भ हो जाता है तो हम यह कहा करते हैं कि वास्तव में उनके विज्ञान की उड़ान कितनी विशाल रही है भगवान विष्णु महान और पवित्र कहलाए गए। हमारे यहाँ विष्णु नाम परमात्मा का भी कहा गया है। परन्तु सतोयुग में विष्णु नाम एक उपाधि को प्रदान किया जाता था, गरूड़ उसका वाहन रहता था। जैसे परमपिता परमात्मा को मानो एक चेतना को, एक सर्वव्यापक को विष्णु कहा जाता है। परन्तु जहाँ मैं यह कल्पना करने लगता हूँ कि ऐसे विष्णु का वाहन क्या है? तो उनका ज्ञान स्वरूप होना ही है, क्योंकि गरूड़ नाम ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा को कहा जाता है। आज उसमें मैं और अधिक टिप्पणियां करना नहीं चाहता हूँ। उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि मैं सतोयुग की कल्पना करने जा रहा था।

सतोयुग की कल्पना है कि महाराजा विष्णु का वाहन गरूड़ रहा है। गरूड़ का अभिप्राय क्या है? हमारे यहाँ दर्शनों में, वेद मन्त्रों में भी गरूड़ की बड़ी मीमांसा आती है परन्तु उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हमारे यहाँ उनकी माता उदीची प्राधृतम मानी जाती है परन्तु मैं साहित्य में नहीं जाना चाहता हूँ। गरूड़ विष्णु के यहाँ बहुत बड़े महान वैज्ञानिक को कहा जाता है। गरूड़ की जो उड़ान है वह ध्रुव मण्डल से लेकर के जेठाय नक्षत्र से लेकर के आकाश गंगा तक विचरण रहा है क्योंकि उनके विज्ञान का उड़ान बहुत ही भव्य और पवित्र रहा है।

विष्णु का स्वरुप



मेरे प्यारे! हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में विष्णु के बहुत से पर्यायवाची शब्द आते हैं। जैसे हमारे यहाँ विष्णु नाम परमपिता परमात्मा का वाची माना गया है, विष्णु नाम माता का है, यज्ञोमयी विष्णु और आत्मा और राजा को भी विष्णु कहा जाता है। मानो सूर्य का नामोकरण भी विष्णु है। हमारे यहाँ जिसमें पालना करने की क्षमता होती है। वही मानो विष्णु माना गया है तो आज हम विष्णु के लिए, उस परमपिता परमात्मा की महती में सदैव रत्त रहें।

एक समय बेटा! मुझे ऐसा स्मरण है महर्षि कागभुषुण्डी और लोमश मुनि महाराज दोनों अपनी स्थली पर विद्यमान थे मानो कहीं से भ्रमण करते हुए, उनके द्वारा सुधनवृचसम्भूति मुनि महाराज उनके समीप आ पहुँचे और ऋषि सम्भूति ने कहा कि हे प्रभु! मैं जानना चाहता हूँ कि ये विष्णु क्या है? क्योंकि मैं प्रातःकालीन विष्णु की महिमा का वर्णन, वेद मन्त्रों में अध्ययन कर रहा था। अब मेरे हृदय की ये उत्कृष्ट इच्छा है कि मैं विष्णु को जानूँ। तो हे प्रभु! मैं जानना चाहता हूँ कि ये विष्णु क्या है? कागभुषुण्डी जी बोले कि हे ऋषिवर! तुमने जो विष्णु के सम्बन्ध में अब तक अध्ययन किया है। उसका वर्णन करो। तो ऋषि ने कहा प्रभु! मैंने तो केवल इतना अध्ययन किया है कि वह पालन करने वाला है। वह पालना करता है इसीलिए वह विष्णु है वह सत है। तो मुनिवरों! उन्होंने कहा कि हमारे यहाँ यौगिक क्षेत्र में भी विष्णु की महिमा का वर्णन आता है?

तो मेरे प्यारे! देखो, कागभुषुण्डी जी ने कहा कि और क्या जानते हो विष्णु के सम्बन्ध में? तो ऋषि ने कहा कि विष्णु मेरे विचार में तो सर्वांग विष्णु ही कहलाते है। तो मेरे प्यारे! कागभुषुण्डी ने कहा नहीं, तुम जो भी कुछ जानते हो वर्णन करो। तो ऋषि अन्त मैं मौन हो गया कि प्रभु! मैं इससे आगे विष्णु को नहीं जानता हूँ। उन्होंने कहा तो विराजमान हो जाओ अब मैं विष्णु की तुम्हें विवेचना कर रहा हूँ।

विष्णु का विश्लेषण करने वालो ने बेटा! विष्णु की बहुत ऊर्ध्वा में महिमा का बखान किया है अथवा

उसकी महिमा का उद्गीत गाया है। तो विष्णु नाम यहाँ पालन करने वाले को कहा जाता है। परन्तु पालना का अभिप्राय क्या है? पालना हम किसे कहते हैं? तो मेरे प्यारे! इस सम्बन्ध में पालना का अर्थ है, रक्षक। जो हमारी रक्षा कर रहा है वही महान विष्णु कहलाता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि कहता है, कागभुषुण्डी ने कहा कि विष्णु नाम हमारे विचार में राजा को भी कहा गया है, परन्तु राजा भी पालन करने वाला है। राजा भी अपने अनूठे ज्ञान और विज्ञान का उपार्जन करता हुआ अपने में अनुशासन करता हुआ वह विष्णु की उपाधि को प्राप्त होता रहता है। मुझे ऐसा प्रतीत होता रहता है कि पुरातनकाल में अतीत का जो काल है, उसमें विष्णु नाम मानो सूर्य के राजा को कहा जाता है। सूर्य का जो राजा है वह पालना में रत्त रहने वाला है। ये बड़ा आश्चर्य का शब्द महर्षि लोमश मुनि ने किया।

मेरे प्यारे! देखो, सूर्य में, क्या प्राणी रहते है? जो वहाँ का राजा विष्णु कहलाता है तो मेरे प्यारे! इसके दो रूप बनते हैं। एक रूप वह बनता है जो विष्णु लोक लोकान्तरों का अधिराज परमपिता परमात्मा है। एक विष्णु नाम हमारे यहाँ ब्रह्मवाचो देवाः जो विष्णु मुनिवरों! देखो, सूर्य लोक का राजा है, उसको भी विष्णु कहते हैं। प्राणी तो मुनिवरों! प्रत्येक लोक लोकान्तरों में माने गएं हैं।

तो मेरे प्यारे! कागभुषुण्डी जी कहते हैं कि विष्णु नाम मानो देखो, राजा को कहा गया है, रक्षक को कहते हैं। इसीलिए जो रक्षा करने वाला है, प्रधानता में रत्त करने वाला है वह विष्णु कहलाता है। परन्तु देखो, उन्होंने कहा हे कागभुषुण्डी जी! हे ऋषिवर! तुम्हें ये प्रतीत होगा कि विष्णु नाम मानो देखो, सूर्य को कहा गया है, जो सूर्य में रत्त रहने वाला प्राणी है। वह धिराज है, वह विष्णु है, इसीलिए यह भी धिराज है, विष्णु है, कल्याण करने वाला है जो पृथ्वी का स्वामीत्व करने वाला है। तो मेरे प्यारे! देखो, यह विष्णु कहलाता है। परन्तु योगाभ्यासवादियों ने बेटा! देखो, विष्णु की बड़ी विवेचना की है कि हमारे यहाँ यज्ञोमयी विष्णु का वर्णन आता है। तो मानो देखो, एक समय हम भ्रमण करते हुए महर्षि सोमवृत्तिका मुनि के द्वार पर पहुँचे। वृत्तिका मुनि से कहा कि हे प्रभु! वेद में विष्णु का बड़ा वर्णन आता है। ये विष्णु क्या है? तो व्रेत ऋषि ने कहा कि महाराज! मैं भी इसको अच्छी प्रकार नहीं जानता। परन्तु माता अरूण्धति और वशिष्ठ मुनि महाराज के यहाँ विष्णु याग की रचना होती रहती है उनके द्वार पर चले जाओ।

वह महर्षि वशिष्ठ मुनि के आश्रम में पंहुचें, महर्षि वशिष्ठ व माता अरूण्धति ने उनका स्वागत किया। महर्षि कागभुषुण्ड जी ने कहा प्रभु! आज हम वेदों का अध्ययन कर रहे थे और वेदों में आ रहा था। यज्ञोमयी विष्णुः ये यज्ञ कैसे विष्णु है? उन्होंने कहा ये जो याग है अथवा यज्ञ है ये विष्णु इसलिए है क्योंकि ये परमपिता परमात्मा से लेकर के और जितना भी सुचिन्तन और महान क्रियाकलाप है वह सब विष्णु के गर्भ में ही परणित हो जाता है। जैसे माता के गर्भस्थल में मानो हम जैसे शिशुओं का

अंग प्रत्यंग का मानो देखो, निर्माण होता रहता हैं वह निर्माण ब्रहे वह वृत कहलाता है। इसी प्रकार परमपिता परमात्मा जो यज्ञोमयी है, विष्णु है मानो देखो, उसके गर्भ में जितना परमाणुवाद है। वह सब निहित हो जाता है। जितना तरंगवाद है। वह सर्वत्र निहित हो जाता है। जब हम ये विचारते हैं कि परमपिता परमात्मा जो यज्ञोमयी विष्णु है जो परमाणुवाद का मानो देखो, समूह माना गया, वे समूह वृत्तियाँ है। जब योगेश्वर योगाभ्यास करता है तो विष्णु को अपने में धारण करने लगता है। तो वह धारयामि बना करके यज्ञोमयी विष्णु कहलाता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, वशिष्ठ मुनि ने कहा कि हमारे विचार में तो विष्णु नाम मानव में आत्मा का है। जो आत्म चिन्तन करने वाले है उन्हें ये प्रतीत है कि ये विष्णु है। मानो देखो, आत्मा का नामोकरण विष्णु माना गया है। जब योगाभ्यास करने वाले मानो देखो, विष्णु की उपासना करते करते बहुत दूरी चले जाते है। तो वह अपने अन्तर्हृदय में विष्णु का ध्यान करते हैं। बेटा! ये बड़ा विचित्र शब्द है कि अन्तरात्मा में अग्नाधान कैसे होता है? मेरे प्यारे! देखो, अन्तरात्मा में अग्न्याधान हो रहा है जैसे यज्ञशाला में यज्ञमान अपनी देवी से कहता है। हे देवी! आओ, अब हम दोनो देखो, अग्न्याधान करेंगे। जब वे अग्न्याधान करके अपनी यज्ञशाला में प्रातःकालीन ब्रह्म का चिन्तन करते हुए, प्रातःकालीन विष्णु की महिमा का वर्णन करते हुए देखो, ब्रह्मयाग से जब देव पूजा में परणित होते है और अग्न्याधान करते हैं तो वे अग्नं ब्रह्मः अग्नं रुद्रो भागः देखो, वह अग्नि विष्णु है, वह अग्नि विष्णु कहलाती है क्योंकि वह तेजोमयी है, ऊष्णता देने वाली है, इसीलिए देखो, अग्न्याधान करके, यज्ञमान आहुति देता है और कहता है कि हे देवी! आओ, हम विष्णु याग करेंगे विष्णुयाग जब प्रारम्भ होता है। तो मानो देखो, विष्णुश्चं ब्रह्म लोकां हिरण्यं वृथाः।

मेरे प्यारे! देखो, विष्णु की विवेचना करने वाला अपने में रत्त हो जाता है। वशिष्ठ मुनि कहते हैं कि जब हम ब्रह्मचारियों के मध्य में याग करते है। तो ब्रह्मचारियों से यही कहते है कि तुम विष्णु बनो। हृदय में अग्न्याधान करो। मानो देखो, ब्रह्मचरिष्यामि बन करके अपने हृदय स्थल में ब्रह्मयाग का वाहन करता है, अपने में रत्त हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारी अपनी इन्द्रियों को सङ्कल्पवादी बना करके अपने हृदय में ज्ञान रूपी अग्नि को प्रदीप्त करते है। जब ब्रह्मचारी अध्ययन करता है तो ब्रह्मवर्चोसि का पालन करता रहता है। जिससे उसकी मानवीयता महानता में परणित हो जाती है। (851017)

ओ३म् इ॒दं विष्णु॒र्वि च॑क्रमे त्रे॒धा नि द॑धे प॒दम् । समू॑ळ्हमस्य पांसु॒रे ॥ ऋग्वेद १.२२.१७

मनुष्य लोग जो (विष्णुः) व्यापक ईश्वर (त्रेधा) तीन प्रकार का (इदम्) यह प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष (पदम्) प्राप्त होनेवाला जगत् है, उसको (विचक्रमे) यथायोग्य प्रकृति और परमाणु आदि के पद वा

अंशों को ग्रहण कर सावयव अर्थात् शरीरवाला करता और जिसने (अस्य) इस तीन प्रकार के जगत् का (समूढम्) अच्छी प्रकार तर्क से जानने योग्य और आकाश के बीच में रहनेवाला परमाणुमय जगत् है, उसको (पांसुरे) जिसमें उत्तम-उत्तम मिट्टी आदि पदार्थों के अति सूक्ष्म कण रहते हैं, उनको आकाश में (विदधे) धारण किया है। जो प्रजा का शिर अर्थात् उत्तम भाग कारणरूप और जो विद्या आदि धनों का शिर अर्थात् उत्तम फल आनन्दरूप तथा जो प्राणों का शिर अर्थात् प्रीति उत्पादन करनेवाला सुख है, ये सब 'विष्णुपद' कहाते हैं, यह और्णवाभ आचार्य्य का मत है। 'पादैः सूयन्त इति वा' इसके कहने से कारणों से कार्य्य की उत्पत्ति की है, ऐसा जानना चाहिये। 'पदं न दृश्यते' जो इन्द्रियों से ग्रहण नहीं होते, वे परमाणु आदि पदार्थ अन्तरिक्ष में रहते भी हैं, परन्तु आँखों से नहीं दीखते। 'इदं त्रेधाभावाय' इस तीन प्रकार के जगत् को जानना चाहिये अर्थात् एक प्रकाशरहित पृथिवीरूप, दूसरा कारणरूप जो कि देखने में नहीं आता, और तीसरा प्रकाशमय सूर्य्य आदि लोक हैं। इस मन्त्र में विष्णु शब्द से व्यापक ईश्वर का ग्रहण है॥

ओ३म् विष्णो॑: कर्मा॑णि पश्यत॒ यतो॑ व्र॒तानि॑ पस्प॒शे । इन्द्र॑स्य॒ युज्य॒: सखा॑ ॥ ऋग्वेद १.२२.१९
विष्णुः, निचृद्गायत्री, षड्जः, मेधातिथिः काण्वः।
पदार्थः हे मनुष्य लोगो ! तुम जो (इन्द्रस्य) जीव का (युज्यः) अर्थात् जो अपनी व्याप्ति से पदार्थों में संयोग करनेवाले दिशा, काल और आकाश हैं, उनमें व्यापक होके रमने वा (सखा) सर्व सुखों के सम्पादन करने से मित्र है (यतः) जिससे जीव (व्रतानि) सत्य बोलने और न्याय करने आदि उत्तम कर्मों को (पस्पशे) प्राप्त होता है उस (विष्णोः) सर्वत्र व्यापक शुद्ध और स्वभावसिद्ध अनन्त सामर्थ्यवाले परमेश्वर के (कर्माणि) जो कि जगत् की रचना पालना न्याय और प्रयत्न करना आदि कर्म हैं, उनको तुम लोग (पश्यत) अच्छे प्रकार विदित करो॥

विष्णु शेष नाग की शैय्या पर



मेरे प्यारे! हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में विष्णु के बहुत से पर्यायवाची शब्द आते हैं। जैसे हमारे यहाँ विष्णु नाम परमपिता परमात्मा का वाची माना गया है, विष्णु नाम माता का है, यज्ञोमयी विष्णु और आत्मा और राजा को भी विष्णु कहा जाता है।

मेरे प्यारे! देखो, विष्णु आत्मा को भी कहते हैं, ये मैंने बहुत पुरातनकाल में निर्णय कराया। एक समय बेटा! लोकोक्ति देते हुए कहा है कि विष्णु तो अक्षय क्षीर सागर में रहता है। तो यह जो आत्मा है यह जब ज्ञान के सागर में प्रवेश कर जाता है ज्ञान के आङ्गन में रत्त हो जाता है तो मेरे प्यारे! देखो, यह आत्मा ब्रह्मा विष्णुः जब यह विष्णु अक्षय क्षीर सागर में विश्राम करने लगता है। तो बेटा! देखो, उस समय नारद अपनी वीणा को ले करके इसके समीप आ जाते है और गन्धर्व गान गाने लगता है। मेरे प्यारे! देखो, ये शेषनाग की शैय्या पर विराजमान हो जाते हैं। शेषनाग की शैय्या पर विराजमान होकर के मेरे पुत्रो! उस समय लक्ष्मी चरणों पर ओत प्रोत हो जाती है। मेरे प्यारे! इसका लाकोक्ति हमारे आचार्यों ने बहुत पुरातनकाल में वर्णन किया।

वैदिक साहित्य यह कहता रहता है, आभा में रत्त करता रहता है। मेरे पुत्रो! देखो, यह अक्षय क्षीर सागर क्या है? हमारे यहाँ अक्षय कहते हैं जिसका नाश नहीं होता, जिसका विनाश नहीं होता। मानो देखो, वह अक्षय कहलाता है। जिसका मंगलं वृत्ति नहीं हो पाता तो अक्षय क्षीर सागर कहते है ज्ञान के सागर को। जहाँ विवेकी प्राणी बनकर के हर प्रेरणा का सूत्र बना देता है।

मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक वस्तु के विनाश के न होने को दृष्टिपात करता रहता है कि आज मानो जल है इसका भी मानो विनाश नहीं होता। अग्नि है इसका भी मानो विनाश नहीं होता इसीलिए जब वस्तु का विनाश नहीं होता, जब कोई भी वस्तु विनाशता को प्राप्त नहीं होती तो मानो देखो, सदैव ज्ञान ही ज्ञान मुझे दृष्टिपात आ रहा है। जब इस प्रकार अक्षय क्षीर सागर में देखो, वह विष्णु विद्यमान होता है, यह आत्मा विद्यमान होता है तो मेरे प्यारे! देखो, वह नारद अपनी वीणा को लेकर के अक्षय क्षीर सागर में मानो देखो, आत्मा के समीप आता है।

मेरे पुत्रो! देखो, यह नारद कौन है? यह नारद प्रकृति का सूक्ष्मतम तन्तु माना गया है। मानो नारद नाम वैदिक साहित्य में बेंटा! मानो देखो, मन को कहा गया है। ये मन अपनी वीणा को लेकर के, ये वीणा क्या है? चञ्चलता। मानो ये मन बड़ा चञ्चल है और ये मन जब चञ्चल रहता है तो मन के ऊपर संयम किया जाता है। तो ये मन बेटा! देखो, ज्ञान ही ज्ञान विचारने लगता है। तो मानो उसके अक्षय क्षीर सागर में ये मन अपनी चञ्चलता रूपी वीणा को त्याग करके बेटा! वह योगी के समीप विद्यमान हो जाता है। मेरे प्यारे! वह चञ्चलता को त्याग देता है और जब वह चञ्चलता को त्याग करके अग्रणीय बनता है तो वह चञ्चलतां आगामं ब्रह्मेः क्योंकि मन के द्वार से जब चञ्चलता चली जाती है, तो वह प्राण के सूत्र में अपने को पिरो देता है। तो बेटा! उसकी चञ्चलता का विनाश हो जाता है।

तो बेटा! उसकी चञ्चलता का विनाश हो जाता है और जहाँ चञ्चलता गई वहाँ मुनिवरों! देखो, सौम्यता आ जाती है। विशिष्टता आ जाती है तो उसका नामोकरण बेटा! विष्णु कहा गया है। मेरे प्यारे! देखो, ये नारद मन है। जब प्रकृति के बेटा! देखो, पञ्च तत्त्वों का मन्थन किया गया तो उसके मन्थन के पश्चात एक धारा का जन्म हुआ था जिसका नाम बेटा! मन है। जब अकेला देखो, मन रह गया तो मुनिवरों! देखो, प्राण से इसने अपना सम्पर्क किया। गति से मिलान करते ही इसमें चञ्चलता का प्रादुर्भाव हो गया। तो बेटा! ये चञ्चलता रूपी वीणा को त्यागकर के ये नारद आत्मा विष्णु में समाहित हो जाता है। मेरे प्यारे! कैसे मन की प्रभु का जब ज्ञानां ब्रह्माः जब ज्ञान हो गया तो मेरी चञ्चलता समाप्त हो गई।

मेरे प्यारे! देखो, गन्धर्व कौन है? हमारे यहाँ गन्धर्व के पर्यायवाची शब्द तो बहुत है। परन्तु यहाँ गन्धर्व नाम बेटा! बुद्धि का है जो बुद्धि बेटा! मेधा बनकर के प्रज्ञावी बन करके ऋतम्भरा बनकर के अपने में रत्त हो रही थी। जो अब तक प्रकृति के सूक्ष्म सूक्ष्म तत्वों को जानने के लिए तत्पर हो रही थी। तो मानो देखो, इस बुद्धि का नाम भिन्न भिन्न रूपों में परणित किया गया है। बेटा! बुद्धि हमारे यहाँ गन्धर्व को कहते है।

मानो देखो, उस ज्ञान को अपने में ये धारण कर लेती है। मानो देखो, बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा, प्रज्ञाः में रत्त हो करके देखो, प्रभु का ध्यान करने लगता है। ये भी प्रभु है और प्रत्येक वस्तु भी प्रभु में है। प्रत्येक वस्तु मानो देखो, प्रभु का आयतन बनी हुई है इस प्रकार जब अन्वेषण होने लगता है तो बेटा! वह गन्धर्व मानो जैसे गन्धर्व सौरमण्डलों का अन्तिम सूत्र कहलाता है इसी प्रकार मानव के सुचिन्तन करने का ये मेधा अन्तिम सूत्र कहलाती है। मानो देखो, ये ऋतम्भरा, प्रज्ञावी बनकर के, मौन होकर के प्रभु का गुणगान गाने लगता है। प्रत्येक वस्तु में प्रभु का आयतन स्वीकार करता है। तो मानो देखो, इस प्रकार अग्रणीय बनकर बेटा! देखो, कहाँ, शम्भो ये शेषनाग के मानो देखो,

आसन पर विद्यमान है। बेटा! शेषनाग क्या हैं? मैंने कई काल में तुम्हें वर्णन कराया। शेषनाग हमारे यहाँ मानो देखो, उसे कहते है जहाँ ये विष्णु विद्यमान रहता है। जिसके ऊपर ये विश्राम कर रहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, ये पाँचों फणों वाला शेषनाग कहलाता है। उसके पाँच फण है बेटा! देखो, वह प्रत्येक फणों में अपने में विशेषता है। मेरे प्यारे! देखो, फण क्या है? मेरे प्यारे! देखो, फणं ब्रह्मेः अस्सुतां देवोः ब्रह्माः वाचाः। मेरे प्यारे! मानो देखो, काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह इत्यादियों वाला जो इनको समेट करके इसके ऊपर विश्राम करता है। वह शेषनाग को अपनी शैय्या बना लेता है। तो मेरे प्यारे! देखो, काम आता है तो मृत्यु का क्रियाकलाप कर देता है। मृत्यु में रत्त करा देता है। मेरे प्यारे! क्रोध आता है, तो वह भी मृत्यु में रत्त कर देता है। इसी प्रकार मद, लोभ और मोह देखो, जब तक ये सामान्यता में बने रहते है तो उत्पति का कारण बनते है समाज में महानता को लाना प्रारम्भ कर देते हैं। परन्तु जब इसमें विशेष आभा नहीं रह पाती, तो ये अपने में रत्त होने लगते है। तो मेरे प्यारे! देखो, यही शेषनाग मानो देखो, मृत्यु का क्रियाकलाप कर देता है। अति का नाम ही अपराध है और मुनिवरों! देखो, सामान्यता में वही रुढ़ि बना देता है। परिणाम क्या? वेद का आचार्य कहता है विष्णुं ब्रह्माः मेरे प्यारे! देखो, वह जो पाँच फणों वाला शेषनाग है। उसको हम दमन करके हम ज्ञान के द्वारा, वेद के द्वारा उसको दमन करें बेटा! उसको सामान्यता में अपने में धारण करें। बेटा! सामान्यता को भी त्याग कर के ही योगी ऊँचा बन जाता है।

तो बेटा! मानो देखो, शेषनाग की शैय्या पर कौन विद्यमान है वह ब्रह्माः ब्रहे वह विष्णु है वह आत्मा है। मेरे प्यारे! देखो, शेषनाग से भी जब वह विर्धो अश्वात होता है तो बेटा! देखो, लक्ष्मी चरणों में ओत प्रोत प्राप्त हो जाती है। जब मुनिवरों! देखो, वह शेषनाग को अपने नीचे दबा लेता है जो लक्ष्मी संसार को लुभाने वाली है। बेटा! देखो, यही लक्ष्मी हमें प्राप्त हो जाती है। ये चरणों की वन्दना करने लगती है। ये चरणों में ओत प्रोत हो जाती है। मेरे प्यारे! जहाँ लक्ष्मी रहती है धर्म होता है और जहाँ धर्म नहीं होता वहाँ से लक्ष्मी अपना उत्थान कर जाती है। (851017)

वैतरणी नदी



तो इसीलिए हमें उस परमपिता परमात्मा को अपना वरणीय बना लेना चाहिए। क्योंकि बिना उसकी उपासना के अथवा उसके ज्ञान और विज्ञानमयी स्वरूप को, दृष्टिपात किए बिना मानव का जीवन पवित्र नहीं बनता। जैसा हमारे यहां मार्कण्डेय ऋषि महाराज ने कहा है, उन्होंने एक वर्णन किया है, वेद का मन्त्र उच्चारण करते हुए कहा सभा वर्णं ब्रह्मे अध्यानमं ब्रव्हे वृत्यं ब्रह्वि माताप्रव्हा।

वेद का ऋषि विवेचना करता हुआ कहता है कि प्रत्येक मानव वैतरणी नदी में ही मानो रमण करता रहता है।

वैतरणी नदी उसे कहा जाता है, जो मानव जिसको पार न कर सके अथवा जिसमें तर भी न सके। उसे हमारे यहां गति प्रवाह को, वैतरणी नदी कहा जाता है। बाह्य जगत और आन्तरिक जगत दोनों में इसका प्रवाह चलता रहता है। यदि मानव सदैव अशुद्ध चिन्तन में लगा रहता है, विलासिता की पिपासा में लगा रहता है। तो मुनिवरों! देखो, वह मानव वैतरणी नदी के तट पर विद्यमान है। क्योंकि वह उससे तरना चाहता है परन्तु इन्द्रियों के जो विषय है, जिसमें नाना प्रकार का अशुद्ध प्रवाह हो रहा है, अशुद्ध जो प्रवाह है वह उस तट से दूसरे तट पर जाने नहीं देता। इसके मूल में क्या है? इन्द्रियों का जितना भी विषय, वासना है, इन्द्रियों का जितना भी, उसके क्रियाकलाप है, मानो वे इसको तरने नहीं देते, वह वैतरणी नदी में ही गमन करता रहता है। परन्तु बाह्य जगत में तो यह उसी के स्वरूप में जीवात्मा,

जो इस संसार में इसलिए आया था कि मुझे मोक्ष को प्राप्त करना है। मुझे मानो देखो, स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों को जानना है।
मेरे प्यारे! देखो, स्थूल शरीर मानो देखो, स्थूलता में रहता है, सूक्ष्म शरीर मानो देखो, संस्कारों की आभा को कहते है और कारण शरीर उसको कहते है जो मानो देखो, वासनं ब्रह्मे जो परमात्मा के निकट जाने के लिए तत्पर हो गया है। केवल उसकी दो विभक्त क्रियाएं रह गई है जिनको ज्ञानं ब्रह्मा बेटा! पञ्च तन्मात्राओं में जो ज्ञान और प्रयत्न गति करता रहता है मानो उसको लिंगमयी शरीर कहा जाता है। परन्तु लिंग शरीरों को न जानता हुआ, आत्मा मोक्ष और आनन्द को प्राप्त नहीं किया है, वह पुनरूक्ति संसार में आया और चला गया। परन्तु संस्कारों के वशीभूत वह माता के गर्भस्थल में प्रवेश हो गया है। परन्तु माता के गर्भस्थल में जब जीवात्मा मानो देखो, पनपता है। मैंने तुम्हें कई काल में विज्ञान की वार्ता प्रगट करते हुए कहा था कि मानो देखो, उस बालक का माता के गर्भ में जल ही ओढन होता है, जल ही आसन होता है जल ही पाशे होते है। परन्तु देखो, वह भी जल का एक बिन्दु है। परन्तु वह शिशु रूप में, माता के गर्भस्थल में पनपता है। कहीं मानो देखो, उष्णता आ रही है, कहीं शीतलता आ रही है, कहीं मानो देखो, उस माँ के गर्भ स्थल में रहते हुए मानो देखो, नद नदियों का प्रवाह चल रहा है। मानो वह नदियों का प्रवाह कैसा है?
मेरे प्यारे! देखो, वह प्रवाह एक नारकिक प्रवाह कहलाता है वह चल रहा है, जीवात्मा, उस शिशु के रूप में बेटा! उसका दिग्दर्शन कर रही है, दर्शन कर रहा है। आत्मा, उससे बाह्य कर्म की आशा में, परन्तु, उससे बाहर नहीं हो पाता तो वह एक वैतरणी नदी है, उससे वह मानव पार होना चाहता है। परन्तु पार हो नहीं पाता। तो विचार विनिमय क्या वह जो मानो देखो, नारकिक जो प्रवाह बह रहा है, उसे हमारे यहां, मुनिवरों! आचार्यों ने उसको अव्रहा मानो वैतरणी नदी माना है। मार्कण्डेय मुनि महाराज ने इसका बहुत स्वरूपों में वर्णन किया है। परन्तु उसके

वर्णन में और भी नाना प्रकार की वार्त्ताएं आती रहती है। परन्तु विचार यह कि अशान्ति का नाम ही हमारे यहां वैतरणी नदी का स्वरूप माना गया है। परन्तु देखो, शान्ति का नाम ही उस नद नदियों से पार होना है जिसमें आनन्द हो, ज्ञान हो, प्रतिभा हो, मानवीयत्व हो और मुनिवरों! परमात्मा के ऊर्ध्वा आनन्द में वह गति करने वाला हो। जैसे अग्नि का प्रवाह मानो गति कर रहा है अग्नि की ऊर्ध्वा गति है। मेरे पुत्रों! देखो, ऊर्ध्वा गति वाली जो अग्नि है वही प्रकाश देती है। जो मानव ऊर्ध्वा में रहता है वही प्रकाश का गामी बनता है। परन्तु जो ध्रुवा में रहता है वह अन्धकार का गामी बनता है। इसी आशय को ले करके आज बेटा! देखो, मैं उन्हीं वाक्यों में तुम्हें ले जाना चाहता हूँ कि संसार में ज्ञान और विज्ञान भी क्यों न हो परन्तु देखो, मानव अपने नारकिकतव से पार नहीं होता।

मेरे प्यारे! देखो, स्थूल शरीर मानो देखो, स्थूलता में रहता है, सूक्ष्म शरीर मानो देखो, संस्कारों की आभा को कहते है और कारण शरीर उसको कहते है जो मानो देखो, वासनं ब्रह्मे जो परमात्मा के निकट जाने के लिए तत्पर हो गया है। केवल उसकी दो विभक्त क्रियाएं रह गई है जिनको ज्ञानं ब्रह्मा बेटा! पञ्च तन्मात्राओं में जो ज्ञान और प्रयत्न गति करता रहता है मानो उसको लिंगमयी शरीर कहा जाता है। परन्तु लिंग शरीरों को न जानता हुआ, आत्मा मोक्ष और आनन्द को प्राप्त नहीं किया है, वह पुनरूक्ति संसार में आया और चला गया। परन्तु संस्कारों के वशीभूत वह माता के गर्भस्थल में प्रवेश हो गया है। परन्तु माता के गर्भस्थल में जब जीवात्मा मानो देखो, पनपता है। मैंने तुम्हें कई काल में विज्ञान की वार्ता प्रगट करते हुए कहा था कि मानो देखो, उस बालक का माता के गर्भ में जल ही ओढन होता है, जल ही आसन होता है जल ही पाशे होते है। परन्तु देखो, वह भी जल का एक बिन्दु है। परन्तु वह शिशु रूप में, माता के गर्भस्थल में पनपता है। कहीं मानो देखो, उष्णता आ रही है, कहीं शीतलता आ रही है, कहीं मानो देखो, उस माँ के गर्भ स्थल में रहते हुए मानो देखो, नद नदियों का प्रवाह चल रहा है। मानो

वह नदियों का प्रवाह कैसा है?

मेरे प्यारे! देखो, वह प्रवाह एक नारकिक प्रवाह कहलाता है वह चल रहा है, जीवात्मा, उस शिशु के रूप में बेटा! उसका दिग्दर्शन कर रही है, दर्शन कर रहा है। आत्मा, उससे बाह्य कर्म की आशा में, परन्तु, उससे बाहर नहीं हो पाता तो वह एक वैतरणी नदी है, उससे वह मानव पार होना चाहता है। परन्तु पार हो नहीं पाता। तो विचार विनिमय क्या वह जो मानो देखो, नारकिक जो प्रवाह बह रहा है, उसे हमारे यहां, मुनिवरों! आचार्यों ने उसको अव्रहा मानो वैतरणी नदी माना है। मार्कण्डेय मुनि महाराज ने इसका बहुत स्वरूपों में वर्णन किया है। परन्तु उसके वर्णन में और भी नाना प्रकार की वार्त्ताएं आती रहती है। परन्तु विचार यह कि अशान्ति का नाम ही हमारे यहां वैतरणी नदी का स्वरूप माना गया है। परन्तु देखो, शान्ति का नाम ही उस नद नदियों से पार होना है जिसमें आनन्द हो, ज्ञान हो, प्रतिभा हो, मानवीयत्व हो और मुनिवरों! परमात्मा के ऊर्ध्वा आनन्द में वह गति करने वाला हो। जैसे अग्नि का प्रवाह मानो गति कर रहा है अग्नि की ऊर्ध्वा गति है। मेरे पुत्रों! देखो, ऊर्ध्वा गति वाली जो अग्नि है वही प्रकाश देती है। जो मानव ऊर्ध्वा में रहता है वही प्रकाश का गामी बनता है। परन्तु जो ध्रुवा में रहता है वह अन्धकार का गामी बनता है। इसी आशय को ले करके आज बेटा! देखो, मैं उन्हीं वाक्यों में तुम्हें ले जाना चाहता हूँ कि संसार में ज्ञान और विज्ञान भी क्यों न हो परन्तु देखो, मानव अपने नारकिकतव से पार नहीं होता।

शिव कौन



शिव के नाना पर्यायवाची अर्थ होते हैं। परमात्मा को भी है वहीं शिव आत्मा को भी कहा जाता है शिव संकल्प धारण करता है और शिव का पुजारी बनता है, आत्मा अपने प्रभु शिव को पाकर शिव कहलाता है। जिस प्रकार राजा अपनी अपनी प्रजा को ऊँचा बनाने से शिव कहलाता है, ऐसे ही उस प्रभु की गोद में जाने से यह आत्मा शिव कहलाता है। एक शिव और द्वितीय महाशिव होता है। यह आत्मा महाशिव नहीं होता शिव कहलाता है। शिव नाम की नाना प्रकार की औषधियों हैं परन्तु यहाँ शिव नाम केवल पर्वतों का उच्चारण करने में किसी प्रकार का दोषारोपण नहीं होगा क्योकि शिव नाम पर्वतों का कहा गया है। इसी प्रकार महाराजा शिव हम पर्वतों को भी कहते हैं, क्योंकि "गौमुखम् ब्रह्मे" पर्वत में जो ऊपर का भाग होता है उसको जटावासी कहते हैं। "जटाओं में रहने वाला ऊपरी भाग से जो दृष्टिपात आ रहा हो उसी को हमारे यहां जटावासी शिव कहा जाता है।

परन्तु जहाँ हम यह स्वीकार करें कि "शिवम् ब्रह्म रात्राणि गच्छन्ति रूद्राः" महाराज शिव, जिनका संस्कार राजा हिमाचल की कन्या पार्वती से हुआ, जो कैलाश पर्वत पर तपस्या किया करते थे। कैलाश कहते हैं प्रजा को, और प्रजा के स्वामी को पति कहते हैं। जिस प्रकार कैलाश पर्वत बहुत ऊँचा होता है, उसी प्रकार जिस राजा के राष्ट्र में इतने ऊँचे विचारों वाली प्रजा होती है, उस प्रजा को कैलाश कहते हैं। उसके पति को शिव कहते हैं।

मेरे प्यारे महानन्द जी का यह कथन है कि आज वह सुन्दर रात्रि है जिसमें माता पार्वती और शिव दोनों जागरूक रहते उन्होंने अपनी साधना को परिपक्क किया था, जिन्होंने योगाभ्यास अपनी परायणता को प्राप्त किया, हमारे यहाँ यह कहा जाता है कि इस सम्बन्ध में जो परम्परागतों से ही माना गया है कि 'शिवम् ब्रह्म सुन्दरम् अच्वतम् आक्रगति लोकाः' मानो 'शिव सड्कल्प को कहा जाता है। आज का जो दिवस है, यह केवल गंगा अवतरण का ही दिवस नहीं है, परन्तु जहां अवतरण का दिवस है,

वहां आज के दिवस परमपिता परमात्मा की प्रतिभा के आधार पर सूर्य का निर्माण हुआ। सूर्य को भी हमारे यहाँ **शिव** कहा जाता है उसकी नाना प्रकार की किरणें है वह जटामासी कहलाई गयी है। वह जो **शिव**, सुन्दर है, **शिव** उसे इसलिये कहते हैं क्योंकि वह परमपिता परमात्मा का संकल्प है और परमात्मा का जितना भी संकल्प है वह सर्व ब्रह्माण्ड को क्रियाशील बना रहा है।

शिवरात्रि को महाराजा **शिव** ने राष्ट्र को अपनाया था। वैसे यह दिवस पहले से ही चला आ रहा था। राजा **शिव** के लिए एक शुभ अवसर और प्राप्त हो गया। वास्तव में **शिव** ने संकल्प किया कि मेरे राष्ट्र में इतने ऊँचे विचारों वाली प्रजा होनी चाहिए, जैसे कैलाश पर्वत पर होता है। कैलाश पर्वत जितना विशाल है, ऐसे ही मानव के विचारों में विशालता होनी चाहिए।

आज का मानव **शिव**रात्रि का व्रत धारण तो करता है, परन्तु अपनी इन्द्रियों पर संयम नहीं रख पाता है। जहां इन्द्रियों पर संयम नहीं रख पाता, वहां **शिव**रात्रि उसके लिए और हानिकारक हो जाती है। यदि हम **शिव**रात्रि को अपनाना चाहते हैं, हम अन्न को भी त्यागना चाहते हैं। उससे पूर्व हमें विचारना है कि हमें अपने उदर को भी सुन्दर बनाना है। उदर में किसी भी प्रकार का रोग नहीं होना चाहिए। उसमें विष न हो, अन्यथा उससे मानव ऐसे नष्ट हो जाता है, जैसे सायंकाल का सूर्य समाप्त हो जाता है। आज मानव **शिव**रात्रि केवल रूढ़िवाद से करता है। **शिव**रात्रि में जागरूक रहना आवश्यक नहीं, परन्तु मानव के क्रियाकलाप और वचन सभी एक तुल्य रहने चाहिए। (640421)

शिव नाद



मुनिवरों! जब हम इस मृत लोक की गंगा को अच्छी प्रकार जानने लगते हैं, तो हमें ज्ञान होता, कि अरे, जहाँ से गंगा बह रही हैं, वहाँ भी हमें जाना है। देखो, जब मानव गंगा के किनारे चलने लगता है, तब चलता चलता मुनिवरों! वह वहाँ पंहुच जाता है, जहाँ शिव से वह गंगा उत्पन्न हुई है। वह शिव के सङ्कल्प द्वारा ही, मुनिवरों! उस आकाश गंगा में जाता है। उसे ही देखो, अन्तरिक्ष गंगा भी कहते हैं। अहा! उसमें रमण करने से ज्ञान होता हैं, आत्म ज्ञान होता है, कि हमें इस अन्तरिक्ष गंगा में कैसे स्नान करना चाहिए? मुनिवरों! आगे ऐसा कर्मकाण्ड आ जाता है, जो वेद की अक्षय विद्या हैं, उसको उपासना काण्ड कहते हैं अहा! हम उपासना काण्ड में आ कर उपासना करने लगते हैं, और प्रभु का गान गाने लगते हैं, गान गाते गाते बेटा! हम ऊँचे शिखर पर चले जाते हैं। जैसे तुमने महाराजा शिव को देखा होगा, महाराज शिव शङ्कर ने देखो, राजा दक्ष के द्वारे संस्कार करते करते उन्होंने यह नाद गाया। और कैसा नाद गया, कि वह तीनों लोकों को शब्दायमान करने लगा। यह नाद इतना पवित्र था, कि इस गान को पाते पाते बेटा! माता पार्वती मुग्ध हो गई, और नाना प्रकार की सब योनियों भी मुग्ध हो गई । मुग्ध होते होते, बेटा! वह उस पर्वत पर जा पंहुचे, जिसको कैलाश कहा जाता है और वह कौन सा कैलाश है? बेटा! हम पूर्व वर्णन कर चुके हैं कि मानव जब इस प्रकार के गान गाता है, तो ऊँचे कैलाश पर्वत पर चला जाता है। कैलाश किसको कहते है? कैलाश नाम तो बेटा! आत्मा का है। जब आत्मा परमात्मा की याचना में चला जाता है, और परमात्मा की आज्ञा में चलता हुआ, परमात्मा की गोद में चला जाता है, तो उस समय यह मानव का शिव नाद कहा जाता हैं।

अहा! मुनिवरों! व्याख्यान देते हुए हम कहाँ पंहुच चुके हैं, आज तो हमारा यह विषय नही था, हम उच्चारण कर रहे थे, कि परमात्मा ने तीन गंगा हमारे लिए उत्पन्न की हैं, पूर्व मृतमण्डल की गंगा, द्वितीय आकाश गंगा बेटा! अन्तरिक्ष में रमण कर रही हैं, जिस समय वह आत्मा उच्च नाद गाता है, अहा! तो बेटा! उस समय वह अनन्त गान गाता हुआ, उस गंगा में स्नान करता हैं और पवित्र हो

जाता हैं। फिर पवित्र होने पर जो कर्मकाण्ड इन्द्रियों का बन्धन है, उस कर्मकाण्ड से भी इन्द्रियां पृथक हो जाती हैं। उस समय उन सबके विषय छुट जाने से केवल एक नाद रह जाता हैं, और जब यह ऐसा नाद गाता है, तो बेटा! नाद गाते गाते अन्तरिक्ष को भी त्याग देता है, और यह जान जाता है कि नाद कहाँ से आता है, और कहां यह नाद भरा हुआ हैं। कौन सी विद्या है, जो अन्तरिक्ष में भरी हुई हैं, जिसमें स्नान करने से हमें सर्व विद्याएं आ जाती है। वह हमारी उपासना है, जब उपासनाकाण्ड में पंहुचते है, तो परमात्मा के समक्ष पंहुच जाते हैं। मुनिवरों! देखो, उस समय हमारा ज्ञान काण्ड आता है, जब उपासना भी पूर्ण हो जाती हैं, और कर्मकाण्ड भी पूर्ण हो जाता है, जब प्रकाश के सागर से पंहुच जाते है। और परमात्मा की साक्षात गोद में चले जाते हैं।

शिव व पारा का आलंकारिक भाषा में वर्णन



आज हम उन विचारों को ले करके, तुम्हें यह उद्गीत दिलाएं ब्रहे कृणां ब्रहा उद्गीतों को गाना चाहते हैं, जिन उद्गीतों के गाने से मानो यह राष्ट्र और समाज दोनों पवित्र बन सके। जहां वनस्पति विज्ञान की चर्चाएं हैं, आलंकारिक चर्चाएं आती रहती हैं, कहते हैं कि यह जो संसार है यह वीरतं ब्रह्मा महाराजा शिव, लिंगोमयी शरीर को धारण करने वाले मानो देखो, यह संसार उसी की आभा में निहित हो रहा है। भिन्न भिन्न रूपों की चर्चा करते हुए, मैंने बहुत पुरातन काल में कहा, पूज्यपाद गुरुदेव ने भी कहा है कि यह आलंकारिक भाषा है उसे आलंकारिक रहने देना चाहिए, क्योंकि यदि उसे विकृत और भी नाना प्रकार के रूप उसे देना चाहते हो, तो इतना विशुद्ध रूप मानो उसका उभर करके नहीं आता। तो विचार क्या मुनिवरों! वह अपने में महानता की ज्योति को जगाना, जागरुकता लाना चाहते हैं।

तो मेरे पुत्रों! देखो, मंगलं ब्रह्मा वाचप्पृह्रि लोकाम मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में यह वर्णन कराते हुए कहा कि हे पुत्र! यह संसार अपनी आभा में निहित रहता है, अपने क्रियाकलापों में सदैव निहित रहता है। परन्तु आयुर्वेदाचार्यों की चर्चा, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने की और उन्होंने कहा देखो, एक पारा नामक एक धातु होता है परन्तु उसके ऊपर बहुत चर्चाएं, पारे को कहते हैं कि शिव का वीरत्व कहलाता है। मानो देखो, यहाँ परमपिता परमात्मा का नामोकरण शिव कहा जाता है, और यह जो शिव है, यह मानो देखो, उस महान देव शिव का एक वीरत्व कहलाता है। शिव का वीरत्व तो यह जगत है, मानो जिससे यह जन मानव प्राणी मात्र का जन्म होता है। यह मानो देखो, सब ऐसा ही जगत है, ऐसा ही एक अनुपमता में रहता है। परन्तु इसकी बहुतसी भाषाएं, आलंकारिक कहलाती हैं वह

अलंकृत जो भाषाएं होती हैं, वह इस समाज में यह जो आलंकारिक बनी रहती है।
तो विचार विनिमय पवित्र रहता है और यदि इसमें इतिहास और साकल्य में परणित किया जाता है तो इतिहास में मानो देखो, विकृतता आ जाती है। विचारों में भी विकृतता आ गई है, इससे मानव को एक रस रहना चाहिए। मेरे पुत्रों! पुत्रा पुत्रा पहु सम्भवा वाचन्नमं ब्रहे कर्णां लोकाम मेरे प्यारे! देखो, पूज्यपाद गुरुदेव ने, कई काल में मुझे सम्बोधित करते हुए कहा था, आचार्यों की चर्चा उद्गीत रूप में गाते हुए कहा था, क्या यह जो मानो देखो, गृह अपने में गृह स्वामी, पवित्रता में परणित रहता है। जब मैं यह विचारता रहता हूँ, क्या यह मानो देखो, जहां हमारी यह आकाशवाणी जा रही है, जिस गृह में, बहुत समय हो गया है, मानो यागों का चलन, यागों की प्रतिभा में रत्त रहते हुए, परन्तु मनो की जो विकृतता है वह मुझे विखरी हुई प्रतीत होने लगती है। प्रायः ऐसा नहीं होना चाहिए। आज जो मानो देखो, यज्ञमान अपने में आहुति देना चाहता है, जब मैं मानो देखो, जन्म जन्मान्तरों के संस्कारों में प्रवेश करता हूँ पूज्यपाद गुरुदेव की आज्ञा से तो मानो मुझे जीवन बड़ा अनूठा दृष्टिपात आता है। परन्तु जब मैं आधुनिक जगत के मानो देखो, कुसंस्कारों को त्याग करके यदि उस आभा में प्रवेश करता हूँ तो मुझे ऐसा दृष्टिपात आता है क्या यह मानो देखो, नग्नम्तं ब्रह्मा जैसे बुद्धिमान अपने विचारों को देखो, नग्न पृथ्वी से, अपने को ओझल कर लेता, इसी प्रकार ओझलपने की चर्चाएं मुझे दृष्टिपात आ रही है। आज मैं इस आभा में विशेष न जाता हुआ केवल यह क्या, हे यज्ञमान! तेरा मन पवित्र होना चाहिए, तेरे मन में प्रीति का सञ्चार होना चाहिए, हे यज्ञमान! तू अपनी त्रुटियों को मानो ब्रह्मा को प्रदान कर, यज्ञं ब्रह्मा मानो देखो, परम्परागतों से ही, इस प्रकार का यह क्रियाकलाप चला रहा है, इन क्रियाकलापों में, हम रत्त रहना चाहते हैं। प्रत्येक मानव रत्त रहना चाहता है।
तो जब मैं अपने विचारों को प्रगट करता हूँ तो विचार आता रहता है, क्या प्रत्येक

शिव व पारा का आलंकारिक भाषा में वर्णन

मानव को अपने में सु विचारों को ला करके, घृणात्मक अपने जीवन को नहीं बनाना चाहिए। जो मानो घृणात्मक अपने जीवन को बनाता है, वह मानो देखो, महानता का दर्शन नही कर पाता। अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव वर्णन कर रहे थे मानो देखो, पारे जैसी औषधियों का वर्णन देखो, पारे की औषधियों का मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई कालों में वर्णन किया है। परन्तु यह सब भाषाएं, एक आलंकारिक रूप में परणित कहीं गई हैं। जब यह एक भाषा अणु ब्रहे परन्तु इनके जो रूप हैं वह भिन्न भिन्न प्रकार के रूपों में दृष्टिपात आते हैं। मानो देखो, यह जो शिव है, यह परमपिता परमात्मा और जो नाम परमपिता परमात्मा अपने में चयन कर रहा है, जो अपनी आभाओं में चयन करता हुआ अग्रणीय बनता है तो मुनिवरों! देखो, यह जो सूर्य है यह अपने में धारण कर लेता है, जब यह अपने में धारण कर लेता है तो मानो जब इस प्रकृति का मन्थन किया जाता है, तो मन्थन के समय यह विचार आता है कि मुझे इसका परोक्षण करना चाहिए, यह उसी काल में वह जल को अपने में परोक्षण कर लेता है, मानो देखो, उनका सम्वाद हो जाता है जब उनके सम्वाद में चर्चाओं का विषय नहीं मुनिवरों! देखो, वह अपने में महानता का दर्शन किया जाता है। तो आज मेरा विचार केवल यह क्या, हम अपने में एक ऊँची विचारधारा को ले करके और धारावाही अपने एक जीवन में, एक धारा को जन्म देना है। यह धारा को अपनाने के पश्चात मानव के हृदय में एक जीवन ज्योति जागरुक हो जाती है, प्रत्येक गृह में भिन्न भिन्न प्रकार के कर्म काण्ड अथवा देखो, घोषणा हुआ करती है।

पूज्यपाद गुरुदेव ने कई कालों में एक आलंकारिक भाषा में देवताओं की देखो, आभा में औषध विज्ञान में पहुँचे थे। और औषध विज्ञान में अपना निर्णय देते हुए, उन्होंने कहा है, मैं यह स्वीकार करता हूँ, आयुर्वेदाचार्यों की दृष्टि से, क्या मानो देखो, शिव नाम परमपिता परमात्मा का है, और यह जो नाना प्रकार की वनस्पतियाँ हैं, यह भी मानो देखो, उसी आभा में निहित रहती हैं इस प्रकार वर्णन करने से

मानो देखो, वाक आ करके, हमारे समीप आ जाते हैं। तो विचार, पूज्यपाद गुरुदेव से मैंने कई कालों में वर्णन कराया, वाक उच्चारण करते हुए कहा है सम्भूति रूपों में वाक उच्चारण करते हुए, क्या यह जो आधुनिक राष्ट्र की राष्ट्रीयता है, यह अग्नि के मुखारबिन्द में परणित हो रही है। धीमे धीमे अग्नि प्रदीप्त हो रही है, एक समय आता है जब उग्र रूप बन जाता है और वही उग्र रूप बन करके, वही राष्ट्र को हानि प्रद होता है। हे राजन! आज तू राष्ट्र को ऊँचा बनाने के लिए, तेरे जीवन में, एक महानता का क्रियाकलाप रहना चाहिए, जिस महान क्रियाकलाप में मानव जब रत्त होता है तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहते हैं, वह भान बनता है।

आयुर्वेद की दृष्टि में मानो परमपिता परमात्मा को शिव कहा जाता है और यह जो पारेत्वर है यह अपने में अनूठा रहता है परन्तु देखो, यह अपनी धाराओं में सदैव रत्त रहता है। तो इस विचार ले करके आज का विचार अब हमारा समाप्त होने जा रहा है आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए उस परमपिता परमात्मा पुरोहित की विवेचना करते हुए अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

समुद्र मन्थन का अलंकारिक स्वरुप



मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ वेदों में एक अलंकार आता है, और वह यह है कि देव और दैत्यों ने समुद्र का मन्थन किया। मन्थन के पश्चात चौदह रत्न निकले। मुनिवरों! यह देव और दैत्य कौन थे जिन्होंने समुद्र मन्थन किया? महानन्द जी ने एक समय प्रश्न किया था, कि परमात्मा ने कच्छप बन करके समुद्र मन्थन किया था, यह वाक्य सत्य है? वास्तव में तो यह अलंकार ही है। मुनिवरों! परमात्मा को भी कच्छप रुप से पुकारा जाता है, क्योंकि वह सर्वांग संसार को अपनी पीठ पर धारण कर रहा है। पृथ्वी भी उसके आसरे है। लोक लोकान्तर भी उसी के आसरे है, यह सब ही उसकी पीठ पर स्थिर हो रहे हैं। यदि वह स्थिर न करे तो यह संसार क्षण भर भी नहीं रह सकता बेटा! ।

तो मुनिवरों! इसका क्या अभिप्राय है, समुद्र मन्थन कैसे किया गया? मुनिवरों! जब सृष्टि प्रारम्भ हुई प्रारम्भ होते ही, समुद्रों का मन्थन किया। मुनिवरों! जब हिरण्याक्ष दैत्य आए, पृथ्वी को अपने में धारण कर लिया, तो बेटा! यहाँ देवता आ पहुँचे और उन दैत्यों से संग्राम किया और हिरण्याक्ष को नष्ट करके कुछ अन्तरिक्ष में पहुँचा दिया, कुछ मृत्युलोक में पहुँचा दिया, और कुछ लोक लोकान्तरों में पहुँचा दिया। यह देखो, समुद्र मन्थन है। बेटा! मानव जब अपने सङ्कल्पों को प्रदीप्त करता है, और उसमें से रत्नों की खोज करता है, तो वह भी समुद्र मन्थन है। मानव के द्वारा कौन से रत्न हैं, जिनकी खोज करनी चाहिए?

मुनिवरों! देखो, कल हम उच्चारण कर रहे थे कि महाराज कृष्ण षोडश कलाओं को जानने वाले थे। मानव के हृदय में पाँच प्राण होते हैं, पाँच कर्म इन्द्रियाँ, पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ और एक मन यह सब सोलह कला होती हैं। योगेश्वर कृष्ण ने इन सबके विषय को जाना और मन को स्थिर करके उन रत्नों की खोज की, जो परमात्मा ने, सृष्टि के प्रारम्भ में, समुद्र मन्थन करके महान विकास कर दिया। प्रश्न

आता है कि वे रत्न थे या न थे। यदि नहीं थे तो कहाँ से आए? तो बेटा! इससे प्रतीत होता है कि जब परमात्मा इस शून्य प्रकृति को अपनी प्राण रुपी सत्ता देता है, तो यह महत निकलने लगती है। यह अपना प्रकाश देने लगती है। उस समय धीरे धीरे यह संसार रच जाता है। बेटा! परमात्मा ने अपना महत देकर चौदह रत्न इस पृथ्वी से निकाले। यह है बेटा! परमात्मा का मन्थन। समुद्र कहते हैं प्रकृति को, जिसका कोई पार नहीं। यह मन्थन किसके लिए किया?

बेटा! देखो, जैसे माता का बालक है। गो दूध देती है, माता दुग्ध की क्रिया बनाती है। क्रिया बना करके उस दुग्ध का मन्थन करके उसमें से घृत निकाल लेती है। वह माता किसके लिए घृत निकाल लेती है? वह जो उसका परिवार उसके द्वारा है। वह उस घृत को अपने बालक को अर्पण कर देती है ऐसे ही बेटा! परमात्मा इस महान प्रकृति का मन्थन अपने, बालक आत्मा के लिए करता है।

तो मुनिवरों! आज हम व्याख्यान देते देते बहुत दूर पहुँच गए हैं। व्याख्यान क्या देना था, और कहाँ पहुँच गए। यह तो कोई हमारा विषय ही नहीं था। महानन्द जी दुबारा कहेंगे कि आपका कल हुआ ही नहीं। अभी अभी कहने वाले हैं, हमें अभी अभी उनका उत्तर देना है। व्याख्यान तो बड़ा विशाल बन गया है, क्या करें समय इतना नहीं।

तो मुनिवरों! अभी अभी हमारा व्याख्यान चल रहा था कि परमात्मा ने अपने महान बालक आत्मा के लिए समुद्र का मन्थन किया, चौदह रत्न निकाले जो मानव के लिए महत्त्वदायक हैं। मुनिवारों! ऐसा कहते है, महानन्द जी ने एक समय ऐसा भी कहा, कि उन रत्नों में से परमात्मा ने श्यामकर्ण घोड़े को निकाला, महान धेनु को निकाला, यह सत्य है?

मुनिवरों! देखो, श्याम कर्ण बेटा! श्याम कर्णोति ब्रजते मानो देखो, इसमें जितने तत्त्व हैं सब महान प्रकृति से आए हैं, जैसे सूर्य है, चन्द्रमा है, कामधेनु है, अग्नि है, वरुण है, ये सब प्रकृति के मन्थन से आए हैं। मुनिवरों! देखो, यह क्या है ?

धेनु माता को भी कहते हैं, धेनु गो को भी कहते हैं। बेटा! हम पृथ्वी को गो कहा करते हैं। परमात्मा ने इसको मन्थन करके स्थिर किया। श्यामकर्ण मन को भी कहते हैं, श्यामकर्ण अग्नि को भी कहते हैं। यहाँ कई रुपरेखा मानी गई हैं। श्यामकर्ण बेटा! सूर्य को भी कहते हैं।

मुनिवरों! देखो, परमात्मा ने इन सबको निकाला। देखो, माता धेनु को उत्पन्न किया, जिससे संसार की उत्पत्ति होती है। परमात्मा ने चौदह रत्नों को निकाला, जिसका शेष व्याख्यान अब कल उच्चारण किया जाएगा। आज तो समय इतना आज्ञा नहीं दे रहा है। व्याख्यान बड़ा विचित्र बन गया है।